ISSN : 2348-2656

पूसा सुरभि

2017-18

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली 110012

भा.कृ.अनु.प. का गणेश शंकर विद्यार्थी एवं राजर्षि टंडन का पुरस्कार प्राप्त करते हुए।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

प्रशस्ति-पत्र

गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार

वर्ष 2016-17 के दौरान 'क' और 'ख' क्षेत्र में स्थित संस्थानों में से भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका ''पूसा सुरभि'' को प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई 2018
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

ISSN : 2348-2656

ग्यारहवां अंक

पूसा सुरभि

2017-18

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

पूसा सुरभि
अंक: 2017-18

संरक्षक एवं अध्यक्ष
डॉ. ए.के. सिंह
निदेशक (अति. प्रभार)

सह-अध्यक्ष
डॉ. जे.पी. शर्मा
संयुक्त निदेशक, अनुसंधान (कार्यवाहक)

संपादक
केशव देव
उप निदेशक (राजभाषा)

संपादन मंडल
डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञनिक, सस्य विज्ञान संभाग
डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञनिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई
सुनीता, सहायक निदेशक (राजभाषा)

संपर्क सूत्र
उप निदेशक (राजभाषा)
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 011-25842451

ISSN - 2348-2656

आवश्यक सूचना
इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

मुद्रण: नवंबर 2018
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली के लिए हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं
मै. एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028
फोनः 7838075335, 9899355565, 9899355405, ईमेलः msprinter1991@gmail.com

आमुख

भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि "अगर हम भारत को एक राष्ट्र बनाना चाहते हैं, तो हिंदी ही हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है"। हिंदी भाषा राष्ट्र की सर्वाधिक प्रचलित भाषा है एवं स्वतंत्रता के पश्चात हिंदी की इसी सार्वभौमिकता के कारण देश ने इसे राजभाषा का दर्जा देने का निर्णय लिया था।

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि आधारित है और हमारे कृषकों की दशा में निरंतर सुधार से देश की अर्थव्यवस्था पर विशेष प्रभाव पड़ेगा तथा अवश्य ही एक स्वावलंबी, आत्मनिर्भर एवं अग्रणी भारत की हमारी परिकल्पना साकार हो सकेगी। विगत कुछ वर्षों में विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में भारत ने विशेष प्रगति की है और संचार माध्यमों के विशेष प्रचार एवं प्रसार का सकारात्मक प्रभाव हमारी कृषि पर भी पड़ा है। दूरदर्शन तथा रेडियो आदि के माध्यम से हमारी सरकार एवं अन्य संस्थाएं कृषकों को निरंतर कृषि संबंधी जानकारी दे रहीं हैं तथा उन्हें उन्नत बीजों व विभिन्न वैज्ञानिक तरीकों से अवगत करा रहीं हैं। फलस्वरूप कृषि क्षेत्र में होने वाले नित नए अनुसंधानों की जानकारी से कृषक लाभान्वित हो रहे हैं। जिसके लिए सबसे अधिक योगदान हिंदी भाषा में उपलब्ध कृषि साहित्य सामग्री का है और इसमें एक नाम हमारे संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'पूसा सुरभि' का है। यह पत्रिका वैज्ञानिकों द्वारा किए गए अनुसंधानों एवं तकनीकों को विगत वर्षों से अति सरल भाषा में किसानों को उपलब्ध कराती आ रही है।

किसानों के समग्र विकास के लिए वर्तमान भारत सरकार ने कई कार्यक्रम चलाए हैं और यह निश्चय किया है कि हमारे किसानों की आय 2022 तक दोगुनी हो। इसी प्रयास में संस्थान में विकसित की गई विभिन्न धान्य एवं बागवानी फसलों की किस्में एवं संकर व उत्पादन तकनीकें विश्व प्रसिद्ध हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे वैज्ञानिकों के पूसा सुरभि पत्रिका में प्रकाशित लेख हमारी सरकार के सपनों में पंख लगायेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

हमारा यही प्रयास है कि संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा कृषि उन्नति की दिशा में किए जा रहे प्रयास, अपने वास्तविक क्रियान्वयन के लिए देश के सभी किसानों तक उन्हीं की भाषा में पहुंचे। इसी प्रयास के रूप में संस्थान की राजभाषा पत्रिका का वर्तमान अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। इसके सफल संपादन के लिए डॉ. जे.पी. शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार) एवं संयुक्त निदेशक, अनुसंधान (का.) एवं अध्यक्ष राजभाषा कार्यान्वयन समिति, श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा), संपादन मंडल के सभी सदस्य एवं राजभाषा कार्य से सम्बद्द अधिकारी/कर्मचारी निश्चित ही बधाई के पात्र हैं।

(ए.के. सिंह)
निदेशक (अति.प्रभार)

प्राक्कथन

संस्थान की राजभाषा पत्रिका पूसा सुरभि का 11वां अंक आपके हाथों में सौंपते हुए मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है। यह पत्रिका जन-सामान्य की भाषा हिंदी में कृषि अनुसंधान जैसे तकनीकी विषय को लोकप्रिय बना रही है। पिछले कई वर्षों की भांति इस वर्ष भी इस पत्रिका ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा सर्वश्रेष्ठ राजभाषा पत्रिका के लिए दिया जाने वाला गणेश शंकर विद्यार्थी का प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है तथा नराकास, उत्तरी दिल्ली द्वारा भी इसको पुरस्कृत किया गया है।

पत्रिका के इस 11वें अंक के सफल प्रकाशन हेतु हमारे मार्गदर्शन व दिशा निर्देशन के लिए मैं संस्थान के निदेशक (अति. प्रभार) एवं उप महानिदेशक (कृ.प्रसार) भा.कृ.अ.प. डॉ. ए.के. सिंह का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ। पत्रिका के प्रकाशन के लिए सामग्री का संकलन और कुशल संपादन के लिए उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव एवं सहायक निदेशक (राजभाषा) कु. सुनीता का आभार व्यक्त करना चाहूँगा, जिनके निरंतर प्रयासों से इसके प्रकाशन को मूर्तरूप प्रदान किया गया। साथ ही पत्रिका को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए संपादन मंडल के सदस्यों विशेषकर डॉ. राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग एवं श्री राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने पत्रिका के संपादन व प्रकाशन हेतु अपने बहुमूल्य सुझाव व सेवाएं प्रदान की। इस अंक में शामिल किए गए लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार, जिनके द्वारा उपलब्ध कराई गई सामग्री से यह प्रकाशन सफलता पूर्वक संपन्न हुआ।

(जे.पी. शर्मा)
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) का.

संपादकीय

हमारा देश विभिन्न भाषाओं तथा सांस्कृतिक परंपराओं को अपने में समेटे हुए अपनी अखंडता और अनेकता में एकता के लिए विश्व के सामने एक अनुपम उदाहरण है। हम भाषाओं की बाहुल्यता का अनुमान इसी बात से लगा सकते हैं कि संविधान की अष्टम सूची में ही 22 भाषाओं को मान्यता प्राप्त है। ये सभी भाषायें अपने-अपने क्षेत्रों की अस्मिता हैं, किंतु देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली राजभाषा हिंदी देश में सर्वाधिक बोली व समझी जाने वाली भाषा है। पंडित राहुल सांकृत्यायन के शब्दों में "हमारी देवनागरी लिपि दुनिया की सबसे अधिक वैज्ञानिक लिपि है"। इसमें आवश्यकतानुसार देशी-विदेशी भाषाओं के शब्दों को सरलता से आत्मसात करने की अद्भुत शक्ति है। साथ ही यह पूरे देश में भावात्मक एकता स्थापित करने में सक्षम है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की राजभाषा हिंदी में प्रकाशित गृह पत्रिका **पूसा-सुरभि** की लोकप्रियता भी यही इंगित करती है कि न केवल साहित्य में बल्कि तकनीक के क्षेत्र में भी हिंदी लोगों के हृदय के अत्यधिक करीब है। यदि तकनीकी पक्ष भी जन-साधारण की भाषा में ही उनके समक्ष प्रस्तुत किया जाए तो वह और अधिक सरल व बोधगम्य हो जाता है।

इसी क्रम में कृषि तकनीक की नई खोजों को प्रस्तुत करता हुआ **पूसा सुरभि** का यह ग्याहरवां अंक आपको हस्तगत है। पत्रिका में तकनीकी खंड और विविधा में प्रकाशित लेख विभिन्न विषयों से संबंधित हैं परंतु विशेष बल किसानों की आय दोगुनी करने हेतु अति महत्वपूर्ण विषय "मूल्यवर्धन एवं प्रसंस्करण" पर दिया गया है। इसके अतिरिक्त कृषि में मृदा परीक्षण एवं जल की उपयोगिता, कीटों एवं रोगों से संबंधित जानकारी देने की कोशिश भी की गई है जो आज के युग में बागवानी विविधीकरण हेतु अति-आवश्यक है। कुछ अति महत्वपूर्ण लेख बागवानी से संबंधित भी हैं। पत्रिका के राजभाषा खंड में संस्थान और इसके क्षेत्रीय केंद्रों की राजभाषा गतिविधियों के साथ-साथ स्वास्थ्य, संतुलित आहार और योगाभ्यास पर महत्वपूर्ण जानकारी दी गई है। साथ ही पिछले वर्ष से प्रारंभ एक नई परंपरा को आगे बढ़ाते हुए इस बार कृषि जगत की जानी मानी एक हस्ती डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन के जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके भारत की कृषि में दिए गए बहुमूल्य योगदान को संकलित करने का लघु प्रयास किया गया है।

पूसा सुरभि पत्रिका के निरंतर प्रकाशन की अनुमति और राजभाषा कार्यान्वयन के लिए सफल दिशा निर्देशों हेतु संस्थान के निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति के प्रति हम अत्यंत आभारी हैं। पत्रिका के इस अंक के लिए सामग्री उपलब्ध कराने वाले सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी एवं अन्य कार्मिकों के प्रति भी हम आभारी हैं। साथ ही सामग्री को मूर्तरूप देने के लिए संपादन मंडल के सभी सदस्यं विशेषकर डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक एवं श्री राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हैं, जिन्होंने सामग्री का सूक्ष्म रूप में संपादन कार्य किया। साथ ही हिंदी अनुभाग की सहायक निदेशक (राजभाषा) सुश्री सुनीता एवं सभी साथियों का भी विशेष आभार, जिनके अथक सहयोग से यह प्रकाशन सफल हुआ।

यह अंक आपको कैसा लगा, के बारे में हमें आपके बहुमूल्य विचारों की अपेक्षा रहेगी। अंत में पूसा सुरभि से जुड़े सभी लोगों के प्रति पुन: आभार।

(केशव देव)
उप निदेशक (राजभाषा)

विषय सूची

आमुख (iii)

प्राक्कथन (v)

संपादकीय (vii)

तकनीकी खंड...

1. डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन: कृषि विज्ञान के महानायक 3
   - सुमेरपाल सिंह एवं अशोक कुमार सिंह
2. मक्का तथा धान की फसल में जस्ते की कमी के लक्षण तथा उनको दूर करने के उपाय 6
   - विवेक कुमार त्रिवेदी, नरेन्द्र, राजेन्द्र सिंह, देवाशीष गोलुई, कपिल आत्माराम चौबे एवं सुधीर कुमार
3. मृदा नमी संरक्षण एवं जल उत्पादकता बढ़ाने हेतु संरक्षण कृषि 9
   - रणबीर सिंह, विपिन कुमार एवं वैभव बालियान
4. लघु एवं सीमांत कृषकों की आय बढ़ाने हेतु समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल 16
   - राजीव कु. सिंह, प्रवीण कु. उपाध्याय, विनोद कु. सिंह, समरथ लाल मीणा एवं एस.एस. राठौर
5. किसानों की आय दोगुनी करने के अवसर एवं सुझाव 20
   - ओमप्रकाश, रणबीर सिहं, वैभव बालियान
6. गेहूं व धान के बीजोत्पादन में रोग प्रबंधन 27
   - अतुल कुमार, उषारानी पेडीरेड्डी एवं ज्ञान प्रकाश मिश्र
7. मृदा परीक्षण का महत्व एवं उपयोगिता 33
   - विवेक कुमार त्रिवेदी, नरेन्द्र, राजेन्द्र सिंह, देवाशीष गोलुई, कपिल आत्माराम चौबे एवं सुधीर कुमार
8. भरपूर पैदावार एवं बेहतर मृदा स्वास्थ्य हेतु एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन 35
   - वीरेन्द्र कुमार एवं खजांची लाल
9. वॉम (न्यूट्रिलिंक): एक बहुआयामी जैव उर्वरक 41
   - एम. एस. राठी, संगीता पॉल, के. अन्नपूर्णा एवं सीमा सांगवान
10. बरानी क्षेत्रों के लिये मोटे अनाज पोषण क्रांति के वाहक 43
    - कमलेश कुमार सिंह एवं वर्षा सिंह
11. भारत के खाद्यानों व उनकी पौष्टिक तत्वों की सुरक्षा में पादप रोग सूत्रकृमि एक अवरोधक 46
    - हरेन्द्र कुमार, पंकज, उमा राव एवं जगन लाल
12. सूत्रकृमियों द्वारा फसलों में क्षति एवं प्रबंधन 52
    - अर्चना उदय सिंह
13. कीटनाशक सूत्रकृमि 57
    - राशिद परवेज, विशाल सिंह सोमवंशी एवं उमा राव
14. वैज्ञानिक विधियों से करें अमरूद के बागों की देखभाल 60
    - मधुबाला ठाकरे, अमित कुमार गोस्वामी, चवलेश कुमार एवं ए. नागराजा
16. भारत में पपीते का उत्पादन: वर्तमान स्थिति तथा भविष्य की संभावनाएं 64
    - सुनील कुमार शर्मा
17. शीतोष्ण जलवायु में अनार की वैज्ञानिक खेती 68
    - कल्लोल कुमार प्रामाणिक, अरुण कुमार शुक्ला, संतोष वाटपाडे, बलदेव कुमार एवं सुनील कुमार गर्ग

19. फलों की परिपक्वता, तुड़ाई एवं प्रसंस्करण 71
- राम रोशन शर्मा, श्रुति सेठी एवं राम आसरे
20. मुनक्का एकः लाभ अनेक 78
- विद्या राम सागर व जितेंद्र कुमार बैरवा
21. गर्मियों में वरदान है तरबूज एवं खरबूजे का सेवन 80
- शालिनी गौड़ रूद्रा एवं विद्या राम सागर
22. केल: एक नया स्वास्थ्यवर्धक सुपर फूड 84
- बिंदवी अरोड़ा, श्रुति सेठी, अल्का जोशी एवं राम रोशन शर्मा
23. उच्च गुणवत्तायुक्त पुष्पोत्पादन हेतु पौधशाला का प्रबंधन 87
- सपना पंवर, नमिता एवं सत्यवीर सिंह सिंधु
24. पुष्पीय बागवानी में विविधीकरण से करें आय दोगुनी 92
- ऋतु जैन एवं बबीता सिंह

विविधा....

1. जैव रसायन विज्ञान संभाग - एक परिचय 101
- किशवर अली एवं शैली प्रवीण
2. पोषक तत्वों से भरपूर बाजरा - एक विकल्प 105
- सुनेहा गोस्वामी, नविता बंसल, जन्नत, रंजीत रंजन कुमार, समर पाल सिंह, सी. तारा सत्यवती, शैली प्रवीण
3. मौसम की विविधता का फसलों पर प्रभाव 108
- अनन्ता वशिष्ठ एवं प्र. कृष्णन
4. मरूस्थलीय क्षेत्रों की शान है खेजड़ी 112
- उषा मीना, सुनीता यादव, रमेश चंद हरित, संदीप कुमार एवं लाल चंद मालव
5. फसलों की सुरक्षा हेतु छिड़काव के प्रभावी यंत्र 115
- राम चरण मथुरिया एवं रोबिन गोगोई
6. कृषि पर्यटन में रोजगार की संभावनाएं 119
- ओ.पी. सिंह, रणबीर सिंह एवं रेनू सिहं
7. सफलता की कहानी : इंदल सिंह कुशवाहा 126
- नफीस अहमद, प्रतिभा जोशी एवं पी.पी. मौर्य
8. सफलता की कहानी : लौकी की किस्म पूसा संतुष्टि से संतुष्ट हुआ समय सिंह 127
- निशी शर्मा, नंदकिशोर एवं किशन सिंह

राजभाषा खंड...

1. एक कदम स्वास्थ्य की ओर - संतुलित आहार एवं योगाभ्यास 131
- जन्नत, सुरेश कुमार, वेदा कृष्णन, शैली प्रवीण
2. सप्ताह के दिनों के नामकरण एवं निश्चित क्रम का आधार 136
- राम कुमार शर्मा
3. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2017-18 137
4. संस्थान में राजभाषा हिंदी की गतिविधियां 141
5. पुरस्कार व सम्मान 148

तकनीकी खंड...

डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन: कृषि विज्ञान के महानायक

सुमेरपाल सिंह एवं अशोक कुमार सिंह

आनुवंशिकी संभाग,
भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

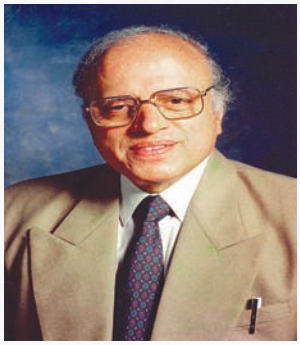

डॉ मंकंबू संबासिवन स्वामीनाथन भारतीय कृषि विज्ञान का एक चमकता हुआ सितारा है। स्वामीनाथन जी के व्यक्तित्व का वर्णन कुछ पन्नों में करना अत्यंत कठिन है, फिर भी कृषि विज्ञान के क्षेत्र में उनके योगदान को इस लेख द्वारा बताने का प्रयास किया गया है। डॉ स्वामीनाथन विश्व-विख्यात कृषि वैज्ञानिक हैं जिनका भारत की हरित क्रांति में अग्रणीय योगदान रहा है। इसी कारण उन्हें भारत में हरित क्रांति का जनक माना जाता है। वर्ष 1999 में डॉ स्वामीनाथन का नाम अमेरिका की बहुचर्चित पत्रिका 'टाइम मैगज़ीन' द्वारा जारी बीसवीं सदी के सबसे अधिक प्रभावशाली एशियाई लोगों की सूची में था। महात्मा गाँधी एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर के बाद, डॉ स्वामीनाथन भारत के तीसरे व्यक्ति हैं, जिनको यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण सम्मान मिला है। भूख एवं गरीबी से मुक्त भारत, डॉ स्वामीनाथन का सपना रहा है। डॉ स्वामीनाथन ने शुरु के दिनों से ही टिकाऊ कृषि विकास जो प्राकृतिक संसाधनों का कम से कम उपयोग कर जैव विविधता को बचाते हुए होना चाहिए, पर जोर दिया और इसके माध्यम से सदाबहार हरित क्रांति की अवधारणा रखी । डॉ स्वामीनाथन के प्रारंभिक जीवन, शिक्षा, पेशेवर उपलब्धियां एवं प्रकाशन इत्यादि का विवरण इस प्रकार है।

प्रारंभिक जीवन और शिक्षा- डॉ एम. एस. स्वामीनाथन का जन्म तमिलनाडु राज्य के कुम्बाकोनम (तंजावुर) में 7 अगस्त 1925 को हुआ था। वह डॉ एम. के. संबासिवन एवं श्रीमती पार्वती थंगामल संबासिवन की दूसरी संतान हैं। डॉ स्वामीनाथन के पिता का देहावसान उनके बाल्यकाल में, जब वे मात्र 11 वर्ष के थे, हो गया था। उनका लालन-पालन उनके चाचा एम. के. नारायणस्वामी द्वारा किया गया। उन्होंने स्थानीय हाई स्कूल एवं कैथोलिक लिटिल फ्लावर हाई स्कूल जो कुम्बाकोनम में था, से 15 वर्ष की आयु में मैट्रिक परीक्षा पास की। उनके पिता एक डॉक्टर थे। इसी कारण उनका मेडिकल स्कूल में दाखिल होना स्वाभाविक था। सन 1943 में बंगाल अकाल के कारण, उन्होंने अपना जीवन भारत को भुखमरी से मुक्त करने के लिए समर्पित करने का निर्णय लिया एवं चिकित्सा विज्ञान को छोड़कर कृषि विज्ञान को अपना लक्ष्य बनाया। डॉ स्वामीनाथन ने स्नातक की उपाधि प्राणि विज्ञान में, महाराजस कॉलेज तिरुअनंतपुरम से एवं कृषि विज्ञान में कोयम्बटूर कृषि कॉलेज से प्राप्त की। उन्होंने स्नातकोत्तर की उपाधि कृषि विज्ञान में आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विषय में विशेषज्ञता के साथ वर्ष 1949 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली एवं डॉक्टरेट की उपाधि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से वर्ष 1952 में प्राप्त की। तदोपरान्त विस्कांसिन विश्वविद्यालय से पोस्ट-डॉक्टरल अनुसंधान करने के बाद डॉ स्वामीनाथन थोड़े समय के लिए केंद्रीय चावल अनुसंधान संस्थान में काम करने के बाद, सन 1954 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली में सहायक कोशानुवंशिक के रूप में भारतीय कृषि में शोध, शिक्षा एवं प्रसार की अविरल गंगा को पूरे देश में ही नहीं बल्कि विश्व में बहाने के भगीरथ प्रयत्न से जुड़ गये। डॉ स्वामीनाथन की शादी श्रीमती मीना स्वामीनाथन के साथ हुई उनकी तीन बेटियां एवं पांच नाती-पोते हैं।

पेशेवर उपलब्धियां- प्रोफेसर स्वामीनाथन ने अधिक उपज देने वाली किस्मों के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया एवं कृषि विज्ञान के क्षेत्र में सतत एवं टिकाऊ विकास की अवधारणा को प्रोत्साहित किया और सदाबहार क्रांति का नारा दिया। 1960 के दशक में भारत भुखमरी की समस्या से जूझ रहा था। इस समय में डॉ स्वामीनाथन ने

डॉ नॉर्मन बोरलॉग के साथ

डॉ बोरलॉग के प्रयास से विकसित गेहूं की बौनी किस्मों को अन्य वैज्ञानिकों जैसे डॉ एस. पी. कोहली, श्री वी. एस. माथुर के साथ मिलकर तथा तत्कालीन कृषि मंत्री श्री सी. सुब्रमनियम के दिशा निर्देश में भारत लाये और उनका व्यापक प्रचार-प्रसार किया। इस प्रकार अनुसंधान नीति एवं किसानों के समन्वयन से भारत में गेहूं के उत्पादन-वृद्धि में एक अभूतपूर्व क्रांति आयी । जिसे बाद में चलकर विलियम एस. गौड़ ने वर्ष 1968 में हरित क्रांति की संज्ञा दी। उन्होंने गेहूं के अतिरिक्त आलू, धान, एवं जूट पर भी काम किया। वे 1961 से 1972 तक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के निदेशक रहे। डॉ स्वामीनाथन ने 1972 से 1979 के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् एवं 1982-88 के दौरान अंतरराष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान के महानिदेशक के रुप में चावल पर अंतरराष्ट्रीय शोध को नई दिशा दी। वर्ष 1979 में वे कृषि मंत्रालय में प्रमुख सचिव रहे। डॉ स्वामीनाथन ने वर्ष 1988 में एम.एस.एस.आर.एफ. की स्थापना की जिसका मुख्य उद्देश्य आधुनिक विज्ञान का प्रयोग कर टिकाऊ कृषि एवं ग्रामीण विकास को बढ़ावा देना है। डॉ स्वामीनाथन की अध्यक्षता में 2004 में राष्ट्रीय किसान आयोग की स्थापना हुई । वर्तमान में किसानों को भारत सरकार द्वारा उनकी उत्पादन लागत का डेढ़ गुना मूल्य, राष्ट्रीय किसान आयोग की सिफारिश पर ही दिया गया है ।

सम्मान, पुरस्कार और अंतरराष्ट्रीय मान्यता

भारत सरकार द्वारा उन्हें 1967 में पद्मश्री, 1972 में पद्म भूषण एवं 1989 में पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया। पद्म विभूषण, भारत रत्न के बाद देश का दूसरा सबसे बड़ा नागरिक सम्मान है। डॉ स्वामीनाथन को वर्ष 1971 में, रमन मैग्सेसे पुरस्कार, 1986 में विज्ञान का विश्व स्तरीय 'अल्बर्ट आइंस्टीन पुरस्कार' एवं वर्ष 1987 में प्रथम 'वर्ल्ड फ़ूड प्राइज' से सम्मानित किया गया। सन 1988 में वे प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के अंतरराष्ट्रीय संघ के अध्यक्ष बने। भारत के इस अत्यंत प्रतिष्ठित कृषि वैज्ञानिक को 76 विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों द्वारा डॉक्टरेट उपाधियों से सम्मानित किया गया।

इन पुरस्कारों के अतिरिक्त भी प्रोफेसर स्वामीनाथन को कई अन्य महत्त्वपूर्ण पुरस्कारों जैसे 'शांति स्वरूप भटनागर अवार्ड' (1961), 'बीरबल साहनी मैडल' 1965, 'लाल बहादुर शास्त्री देश गौरव सम्मान' (1992), 'डॉ बी.

प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के साथ

वर्ल्ड फ़ूड प्राइज' प्राप्त करते हुए

पद्म विभूषण प्राप्त करते हुए

पी. पाल मैडल' (1997) एवं 'शांति, निरस्त्रीकरण और विकास के लिए इंदिरा गांधी पुरस्कार' (2000) से सम्मानित किया गया। डॉ स्वामीनाथन वर्तमान में एम. एस. स्वामीनाथन रिसर्च फाउंडेशन चेन्नई में यूनस्को की इकोटेक्नोलॉजी चेयर पर हैं। 2007-2013 के दौरान वे राज्य सभा के सदस्य रहे। उन्होंने 2010-2013 के दौरान खाद्य सुरक्षा की विश्व-स्तरीय समिति की अध्यक्षता की।

विदेश मंत्रालय द्वारा अफगानिस्तान एवं म्यांमार में, कृषि क्षेत्र से संबंधित परियोजनाओं की देखरेख के लिए एक कार्यदल का गठन किया गया है। स्वामीनाथन इस कार्यदल के अध्यक्ष हैं। वर्ष 2013 में डॉ स्वामीनाथन को राष्ट्रीय एकता के लिए इंदिरा गांधी पुरस्कार एवं एन.डी. टी.वी. का 'सबसे बड़ा ग्लोबल लिविंग लीजेंड अवॉर्ड' से सम्मानित किया गया। उन्हें बीसवीं अंतरराष्ट्रीय कांग्रेस में, जो स्पेन में हुई, 'अंतरराष्ट्रीय पोषण विज्ञान संघ के लिविंग लीजेंड' के रूप में चुना गया। बैंगलोर में हुए, नौवें न्यूट्रा-शिखर सम्मेलन में प्रो. स्वामीनाथन को 'लाइफटाइम अचीवमेंट' पुरस्कार से नवाजा गया।

फैलोशिप- प्रोफेसर स्वामीनाथन देश-विदेश की विभिन्न अकादमी एवं सोसाइटीज जैसे इंडियन एकेडमी ऑफ साइंसेज (1957), भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (1962), नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज, भारत (1976), राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली (1990), रॉयल सोसाइटी ऑफ़ लंदन (1973), नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज, यूएसए (1977), कृषि विज्ञान की रुसी अकादमी (1978), रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ एग्रीकल्चर एंड फॉरेस्ट्री (1983), नेशनल एकेडमी ऑफ आर्ट्स एंड साइंसेज, यूएसए (1984), कला, विज्ञान और मानविकी की यूरोपीय एकेडमी (1988) एवं वर्ल्ड एकेडमी ऑफ साइंसेज (1983) आदि अकादमी एवं सोसाइटीज के अध्येता हैं।

प्रकाशन- डॉ स्वामीनाथन एक मर्मज्ञ वैज्ञानिक शोधकर्ता और लेखक हैं। डॉ स्वामीनाथन ने राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में कुल 254 से अधिक शोध पत्र लिखे, इनमें से 155 शोध पत्रों में से या तो वे एकल या प्रथम लेखक हैं। उन्होंने 12 शोध पत्र 'नेचर' पत्रिका में प्रकाशित किये हैं । उनका शोध एवं लेखन फसल सुधार, आनुवंशिकी, कोशिका-आनुवंशिकी एवं फाइलोजेनेटिक्स विषयों से संबंधित रहा है। डॉ स्वामीनाथन ने कृषि के हर क्षेत्र चाहे वो फसल सुधार, आनुवंशिकी, पादप प्रजनन, फाइलोजेनेटिक्स कृषि शिक्षा एवं प्रसार कार्यों में बहुमूल्य योगदान दिया है। जब अक्टूबर 1987 में, डॉ स्वामीनाथन को प्रथम 'विश्व खाद्य पुरस्कार' से सम्मानित किया जा रहा था उस समय संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव ने लिखा कि स्वामीनाथन एक 'जीवित दिग्गज' हैं एवं भारत व अन्य विकासशील देशों के खाद्य उत्पादन की वृद्धि में उनका बहुमूल्य एवं अविस्मरणीय योगदान है। विशेषकर भारतीय कृषि में उनके योगदान को हमेशा याद किया जाएगा। स्वामीनाथन देशप्रेमी एवं मानवप्रेमी रहे हैं। हमारे देश को भुखमरी एवं गरीबी से मुक्त कराने में उनके बहुमूल्य योगदान के लिए देश हमेशा उनका ऋणी है। छात्रों, वैज्ञानिकों, शिक्षकों, प्रसार-कर्ताओं एवं प्रशासकों के लिए डॉ स्वामीनाथन एक प्रेरणास्रोत हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली जो कि सही मायने में डॉ स्वामीनाथन की कर्मभूमि रहा है, के सभी छात्र, वैज्ञानिक, शिक्षक एवं कर्मचारी भारतीय कृषि विज्ञान के इस महानायक को उनके तिरानवे जन्मदिन पर उनके स्वस्थ रहने एवं दीर्घायु होने की कामना के साथ शत-शत नमन करते हैं।

तिरानवा जन्मदिन मनाते हुए

मक्का तथा धान की फसल में जस्ते की कमी के लक्षण तथा उनको दूर करने के उपाय

विवेक कुमार त्रिवेदी[1], नरेन्द्र[1], राजेन्द्र सिंह[1], देवाषीष गोलुई[1], कपिल आत्माराम चौबे[1] एवं सुधीर कुमार[2]

[1]मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग, [2]पादप कार्यिकी संभाग,
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

पौधों में मुख्य पोषक तत्वों के अतिरिक्त अन्य कई सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पौधे को इन सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता तो बहुत कम मात्रा में होती है। परंतु इन पोषक तत्वों के अभाव में पौधे अपना जीवन चक्र पूर्ण करने में असमर्थ हो जाते हैं। इन पोषक तत्वों में से एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व जस्ता भी है। अतः जस्ते की कमी के लक्षण और कमी दूर करने के उपाय इस लेख में बताए गए हैं।

पौधों के समुचित विकास के लिए 16+1 (निकिल) पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इन सभी आवश्यक पोषक तत्वों में से कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन, हवा और पानी से प्राप्त कर लेते हैं तथा बचे हुए 14 मुख्य पोषक तत्वों को पौधे मृदा से प्राप्त करते हैं। इन 14 पोषक तत्वों में से पौधे को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, गंधक, कैल्शियम, मैंगनीशियम की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। इसलिए इन पोषक तत्वों को मुख्य पोषक तत्व भी कहते हैं। इन पोषक तत्वों के अतिरिक्त 8 अन्य पोषक तत्व कॉपर, मैग्नीज, जिंक, बोरान, क्लोरीन, मोलिब्डिनम, आयरन और निकिल है। इन पोषक तत्वों की पौधों को अधिक उपज के लिए आवश्यकता होती है। इनकी उतनी ही आवश्यकता होती है जितनी कि मुख्य पोषक तत्व व अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।

मृदा परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि देश के विभिन्न राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में जस्ते की कमी वाले अनेक क्षेत्र पाये गये है। इन राज्यों में हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात व बिहार प्रमुख हैं। बहुत से प्रयोगों से यह ज्ञात हो चुका है कि जिन मृदाओं में जस्ते की कमी है वहां पर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश उर्वरकों से पूरा लाभ तब तक नहीं मिल पायेगा जब तक जस्ते की इस कमी को पूर्ण नहीं कर दिया जायेगा।

पौधों में जस्ते की भूमिका

जस्ता पौधों में न्यूक्लिक अम्ल तथा प्रोटीन संश्लेषण में अहम योगदान देता है तथा इण्डोल एसिटिक अम्ल नामक हार्मोन के जैविक संश्लेषण में जस्ता अत्यधिक उपयोगी होता है। जस्ता पौधों में क्लोरोफिल के निर्माण से संबंधित क्रियाओं को भी उत्तेजित करता है तथा विभिन्न एंजाइमों का भी जस्ता एक आवश्यक अंग है। नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस के उपाचयन में भी जस्ता एक अहम भूमिका अदा करता है। अर्थात नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस का उपयोग पौधे तब तक ही सुचारु रूप से करते है जब तक जस्ते की उचित मात्रा उनको मिलती रहती है। इसके अतिरिक्त बीज निर्माण में भी जस्ता अत्यधिक सहायक होता है।

मक्का व धान की फसल में जस्ते की कमी के लक्षण

मक्का की फसल में बुवाई के 15-20 दिन के बाद ही ऊपर से तीसरी-चौथी पत्तियों में ही हल्के धब्बे पड़ने लगते हैं। पत्तियों के किनारे सफेद तथा मध्यक शिराओं के बीच में तथा पत्तियों के किनारे कभी-कभी लाल से धब्बे जस्ते की कमी के कारण दिखाई देने लगते हैं। जस्ते की कमी होने पर पौधे की वृद्धि रुक जाती है तथा पैदावार भी अत्यधिक कम होती है। काफी समय तक जस्ते की कमी रहने से पत्तियां सूख जाती है और पौधा मरने की स्थिति में आ जाता है। इस प्रकार यदि मक्का की फसल में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाशधारी

उर्वरकों की पूरी मात्रा डालने के उपरांत भी इस प्रकार के विशिष्ट लक्षण दिखाई पड़ते हैं तो यह जस्ते की कमी का प्रभाव हो सकता है।

धान के पौधों की रोपाई के 15-20 दिन बाद पुरानी पत्तियों पर हल्के पीले धब्बों का पड़ जाना जस्ते की कमी के लक्षण है। यह धब्बें बाद में गहरे भूरे हो जाते हैं। उत्तर भारत के तराई इलाके में इस रोग को "खेरा" के नाम से जाना जाता है। पत्तियों के मध्य शिराओं का रंग उड़ जाना एवं रंगहीन हो जाना तथा पत्तियों का सूखना इसके प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग की तीव्रता में फसल की बढ़वार रुक जाती है तथा पैदावार पर भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

जस्ते की कमी को दूर करने के उपाय

जस्ते के उर्वरकों में मुख्यतः जिंक सल्फेट तथा जिंक आक्साइड प्रमुख हैं। जिंक सल्फेट पैंटाहाइड्रेट में जस्ते की मात्रा 21 प्रतिशत व जिंक सल्फेट मोनोहाइड्रेट में 33 प्रतिशत पायी जाती है तथा जिंक आक्साइड में 80 प्रतिशत जस्ते की मात्रा पायी जाती है। जस्ते की कमी को दूर करने के लिए इन उर्वरकों में से जिंक सल्फेट पैंटाहाइड्रेट सबसे अधिक प्रचलित है। जिंक सल्फेट का प्रयोग दो प्रकार से किया जाता है। 1. मिट्टी में अन्य उर्वरकों के साथ मिलाकर एवं 2. पर्णीय छिड़काव द्वारा

1. बुवाई से पहले मिट्टी में मिलाना

मृदा परीक्षण के आधार पर संस्तुति के अनुसार 20-25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर जिंक सल्फेट पैंटाहाइड्रेट बुवाई से पहले मिट्टी में मिलाने से जस्ते की कमी को दूर किया जा सकता है। इसके लिए जिंक सल्फेट के बड़े कणों को पीसकर छननी से छान लेना चाहिए। तत्पश्चात, जिंक सल्फेट पैंटाहाइड्रेट को 25-30 कि.ग्रा. बारीक मिट्टी में मिला लेना चाहिए। मक्का की फसल में मिट्टी मिला हुआ जस्ता खेत में बीज बोने के पूर्व बिखेर कर, जुताई करके पाटा लगा देना चाहिए तथा धान की फसल में गारा करने (पुड़लिंग) के लिए पानी भरकर मिट्टी में मिले हुए जिंक सल्फेट को इसमें छिटक कर पाटा लगा देना चाहिए। भूमि में इस प्रकार जिंक सल्फेट के प्रयोग से इसका प्रभाव आगामी 2-3 फसलों तक बना रहता है। आवश्यकता से अधिक व अधिक समय के लिए जस्ता का प्रयोग करने से पौधे की वृद्धि में प्रतिरोध उत्पन्न करता है। इसलिए जस्ते का प्रयोग संस्तुति अनुसार अत्यंत सावधानीपूर्वक करना चाहिए। अधिक मात्रा में जस्ते का प्रयोग करने पर पैदावार तो कम होगी ही साथ ही साथ आर्थिक हानि भी उठानी पड़ेगी।

2. पर्णीय छिड़काव द्वारा

अगर मिट्टी में जस्ते की अधिक कमी नहीं है या फिर फसल बोने तथा पौधों में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तो जिंक सल्फेट के पर्णीय छिड़काव से भी जस्ते की कमी को दूर किया जा सकता है। कई स्थानों पर किसानों को जिंक सल्फेट आसानी से उपलब्ध नहीं हो पाता है। ऐसे स्थानों में मक्का की बुवाई के समय तथा धान की रोपाई के समय बहुत समस्या का सामना करना पड़ता है। ऐसी अवस्था में पर्णीय छिड़काव का सहारा ही एक मात्र उपाय है। यद्यपि मृदा वैज्ञानिकों का मत है कि खड़ी फसल में पर्णीय छिड़काव के स्थान पर भूमि में डालने पर जस्ता का अधिक प्रभाव होता है।

पर्णीय छिड़काव के लिए जिंक सल्फेट के 0.5 प्रतिशत सान्द्रता के घोल को 0.25 प्रतिशत बुझे हुए चूने के साथ पानी में मिलाते हैं। यहां यह ध्यान रखना अति आवश्यक है कि चूने के जल को सारा का सारा एक ही बार में जिंक सल्फेट के घोल में नहीं डालना चाहिए। अन्यथा जस्ते का संपूर्ण घोल दही की भांति तलहट के रूप में बदल जायेगा। इससे छिड़काव करते समय पंप की नोजल बंद हो सकती है। इसलिए चूने का पानी थोड़ी-थोड़ी मात्रा में डालना चाहिए तथा साथ के साथ हिलाते रहना चाहिए। इस प्रकार तैयार किये गये घोल का छिड़काव खड़ी फसल में आवश्यकतानुसार दो से तीन बार तक 7-10 के दिन अंतराल पर किया जा सकता है। घोल में टीपाल नामक चिकना द्रव मिलाने से पत्तियों पर एक समान छिड़काव होता है। छिड़काव करते समय इस बात का ध्यान रखना अति आवश्यक है कि फसल की संपूर्ण पत्तियां इस घोल से भीग जाये। छिड़काव हमेशा दोपहर के बाद जब मौसम कुछ ठंडा हो तभी करना चाहिए। पहली बार छिड़काव

करते समय घोल की कम मात्रा की आवश्यकता होती है। लेकिन दूसरे व तीसरे छिड़काव में पौधे व पत्तियों की वृद्धि हो जाने के कारण घोल की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है।

अतः उपरोक्त सावधानियों को ध्यान में रखते हुए मक्का व धान की फसल में अगर हम आवश्यकतानुसार जस्ते का प्रयोग करें तो हमें अधिक पैदावार के साथ-साथ अधिक आर्थिक लाभ भी होगा।

आकृति 1: धान में जस्ते की कमी के लक्षण (स्त्रोतः इंटरनेट)

आकृति 2: मक्के में जस्ते की कमी के लक्षण (स्त्रोतः इंटरनेट)

जब तक आपके पास राष्ट्रभाषा नहीं, आपका कोई राष्ट्र नहीं।

- मुंशी प्रेमचंद

मृदा नमी संरक्षण एवं जल उत्पादकता बढ़ाने हेतु संरक्षण कृषि

रणबीर सिंह, विपिन कुमार एवं वैभव बालियान

जल प्रौद्योगिकी केंद्र,
भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंघान संस्थान, नई दिल्ली-110012

हमारे देश ने पिछले पांच दशकों में किसानों की कड़ी मेहनत एवं आधुनिक तकनीकी के माध्यम से हमने खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता तो प्राप्त की है किंतु इसके साथ ही अंधाधुंध रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग, कृषि रक्षा रसायनों का प्रयोग, अनियमित मशीनीकरण इत्यादि ने खेती के टिकाऊपन पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। परिणामस्वरूप मृदा अपक्षरण, उर्वरता ह्रास, घटता जल स्तर, जल व वायु प्रदूषण एक बड़ी चुनौती के रुप में सामने खड़ी है। इसके अतिरिक्त आदानों के अनियंत्रित व अत्यधिक प्रयोग से साल दर साल उत्पादन लागत में वृद्धि हो रही है। जिसके फलस्वरूप किसानों की आर्थिक दशा दिन प्रतिदिन खराब होती जा रही है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम ऐसे प्रभावी तथा पर्यावरण संरक्षण करने वाली कृषि पद्धति को अपनाएं, जिससे उत्पादकता लाभ दीर्घकाल तक टिकाऊ साबित हो। ऐसी परिस्थिति में प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने वाली संरक्षण कृषि एक अमूल्य वरदान साबित हो सकती है।

पिछले दो दशकों के दौरान धान व गेहूं जैसी प्रमुख खाद्यान्न फसलों में उन्नतशील बीजों की उपलब्धता और बेहतर प्रबंधन के बावजूद उत्पादकता वृद्धि दर लगभग नगण्य देखी जा रही है। ऐसी परिस्थिति तब और चिंताजनक दिखाई देगी जब सन् 2025 में हमारी अनुमानित जनसंख्या 140 करोड़ होगी तथा प्रति व्यक्ति खेती योग्य भूमि मात्र 0.8 हेक्टेयर होगी। दूसरी तरफ अनियमित वर्षा, भूगर्भ जलस्तर में गिरावट तथा उपलब्ध जल का खेती के अतिरिक्त अन्य कार्यों में प्रयुक्त होना वर्तमान कृषि के लिए अत्यंत चिंता का विषय है। इन परिस्थितियों में वर्तमान कृषि पद्धति के दीर्घकालिक टिकाऊपन पर एक बहुत बड़ा सवालिया निशान लगा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि ऐसी तकनीकी का विकास किया जाए जिससे कि कम से कम क्षेत्रफल में अधिक से अधिक पैदावार ली जा सके और देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए समुचित भोजन व्यवस्था का प्रबंध किया जा सके, साथ ही साथ प्राकृतिक संसाधनों का भी संरक्षण किया जा सके।

संरक्षण कृषि, खेती की वह पद्धति है जिसमे कृषि जल लागत को कम रखते हुए अधिक लाभ व टिकाऊ उत्पादकता ली जा सकती है। साथ में प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा, जल, वातावरण व जैविक कारकों में संरक्षित वृद्धि होती है। इसमें कृषि क्रियाएं उदाहरणार्थ शून्य कर्षण या अति न्यून कर्षण के साथ-साथ कृषि रसायनों एवं अकार्बनिक व कार्बनिक स्रोतों का संतुलित व समुचित प्रयोग होता है ताकि विभिन्न जैव क्रियाओं पर विपरीत प्रभाव न पड़े।

क्या है संरक्षण कृषि ?

संरक्षण कृषि का अर्थ है कि भूमि की सतह पर फसल अवशेषों को रखते हुए भूमि को बिना या बहुत कम उथल-पुथल किये फसलों को उगाना। संसाधन सरंक्षण खेती से तात्पर्य संसाधन संरक्षण की ऐसी तकनीकों से है जिसमें अच्छी फसल की पैदावार की गुणवता का भी ख्याल रखा जाता है, ताकि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकता को पूरा करने के साथ-साथ भावी पीढ़ियों के लिए अच्छी उत्पादकता के साथ ही संसाधनों की गुणवता सुनिश्चित की जा सकें।

संरक्षण कृषि फसल उत्पादकता पर बिना किसी विपरीत प्रभाव डाले, प्राकृतिक संसाधनों जैसेः भूमि, जल एवं पर्यावरण को संरक्षित रखती है और बढ़ाती हैं तथा संरक्षण खेती द्वारा मृदा कटाव, जल हानि में कमी होती है, मृदा सतह पर पलवार से खरपतवारों का अंकुरण

रुकता है, मृदा में सूक्ष्म जीव सुरक्षित रहते हैं तथा जैविक पदार्थ का अधिक निर्माण होता है। रासायनिक उर्वरकों की कम आवश्यकता होती है तथा प्रति हेक्टेयर उपज में वृद्धि होने से किसान की आय बढ़ती है। संरक्षण कृषि में मृदा सतह के ऊपर कम से कम 30 प्रतिशत अवशेष होना आवश्यक है। विश्व में लगभग 125 मिलियन हेक्टेयर से ज्यादा जमीन पर संरक्षण खेती की जा रही है। संरक्षण खेती करने वाले देशों में अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, ब्राजील और अर्जेन्टीना प्रमुख है।

वर्तमान परिदृश्य में संरक्षण कृषि एक आवश्यक आवश्यकता हो गयी है जिसके कुछ कारक निम्नवत हैं-

- लगातार अत्यधिक जुताई से मिट्टी की संरचना में बदलाव तथा मृदा जीवांश स्तर में कमी।
- भारी कृषि यंत्रों के अत्यधिक प्रयोग से भूमि की निचली परत का कठोर हो जाना।
- खेती में जल आवश्यकता की वृद्धि एवं घटता जल उत्पाद का स्तर।
- अनियमित व असामयिक वर्षा एवं भू-गर्भ जल का गिरता स्तर।
- फसल अवशेषों को जलाने से वातावरण में बदलाव का खतरा।
- भूमि में आवश्यक पोषक तत्वों की बढ़ती कमी।
- मृदा में लाभकारी सूक्ष्म जीवों की संख्या में कमी तथा उनकी क्रियाशीलता पर विपरीत प्रभाव।
- मृदा कार्बन स्तर में निरंतर गिरावट।
- भू-गर्भ जल में नाईट्रेट की अधिकता से बढ़ता जल प्रदूषण।
- खरपतवारों की संख्या में लगातार वृद्धि।
- असंतुलित पोषण से कीट व्याधियों का अधिक प्रभाव।
- धान के खेत में जल प्लावन की स्थिति में मीथेन गैस का निष्कर्षण।
- कृषि में घटता उत्पादन लाभ।

संरक्षण खेती का उद्देश्यः

संरक्षण खेती का उद्देश्य समेकित प्रणाली द्वारा जैसेः मृदा, जल, एवं जैविक संसाधनों के संयुक्त साधनों तथा प्राकृतिक संसाधनों की प्रयोग क्षमताओं को सुरक्षित, प्रोत्साहित एवं निर्मित करना है। इस विधि का मुख्य उद्देश्य यह है कि खेत की मिट्टी में न्यूनतम उथल-पुथल की जाए, उसकी जुताई न की जाए, भारी मशीनों का कम से कम प्रयोग किया जाए व मृदा सतह को हर समय फसल अवशेषों या दूसरे किसी वानस्पतिक आवरणों से ढककर रखा जाए। हरी खाद या मृदा को ढकने वाली अन्य फसलों को फसल चक्र में अपनाया जाए। ऐसा करने से बहुत सारे लाभ पाये गये है जिनमें फसलों का पैदावार बढ़ने के साथ-साथ संसाधनों जैसेः जल, मृदा, पोषक तत्व, फसल उत्पाद और वातावरण की गुणवता भी बढ़ती है जो कि कृषि की लगातार अच्छी हालत के लिए बहुत जरूरी है।

संरक्षण खेती के सिद्धांत

1. फसलें उगाने की ऐसी प्रणालियां विकसित करना और उन्हें बढ़ावा देना, जिनके कारण मृदा में सबसे कम व्यवधान होता है जैसेः न्यूनतम एवं शून्य भू-परिष्करण अर्थात संरक्षण जुताई।
2. खेत की सतह पर फसल अवशिष्टों को छोड़ने तथा आवरण फसलें उगाने आदि विधियों को अपनाकर मृदा की ऊपरी सतह को ढक कर रखना, अर्थात फसल पलवार का प्रयोग।
3. फसल चक्रण, अंतःखेती, कृषि वानिकी आदि के माध्यम से विविधीकृत फसल को बढ़ावा देना अर्थात् फसल विविधीकरण।

संरक्षण कृषि के अवयव

संरक्षण कृषि की प्रमुख यांत्रिक एवं सस्य विधियां निम्न हैं-

संरक्षण जुताई (कंजर्वेशन टिलेज) : भूमि की सतह को प्राकृतिक रुप से बनाये रखकर व पहली फसल के अवशेषों को भूमि की सतह पर छोड़ते हुए अगली फसल के लिए खेत तैयार करना, संरक्षण टिलेज कहलाता है। इस विधि से ऊर्जा की बचत होती है और मृदा अपरदन भी कम होता है एवं मृदा का उपजाऊपन भी बढ़ता है।

संरक्षण विधि में मक्का की बुवाई

न्यूनतम टिलेज तकनीक से बुवाई

कजर्वेशन टिलेज जैसेः न्यूनतम जुताई और शून्य जुताई के द्वारा हम फसलोत्पादन पर होने वाले खर्च को कम कर सकते हैं, साथ ही साथ कम पेट्रोल जलने से कार्बन डाई ऑक्साइड का उत्सर्जन भी कम होता है। जीरो-टिलेज के उपरांत बोयी गई फसलों में मृदा नमी का संरक्षण अधिक होता है। सिंचाई के लिए जल की मात्रा अपेक्षाकृत कम (लगभग 20 से 30 प्रतिशत जल की बचत) लगती है। इसके अतिरिक्त कई तरह के खरपतवारों जैसेः फेलेरिस माइनर के प्रकोप में कमी आती हैं। शून्य कर्षण के अपनाने से मृदा कार्बन की मात्रा में भी वृद्धि होती है।

(अ) न्यूनतम जुताईः भू-परिष्करण की वह क्रिया जिससे फसलोत्पादन के लिए भूमि की कम जुताई की जाती है इस विधि में खेत की जुताई इतनी कम की जाती है कि केवल बीज के उगने व अच्छी पैदावार हेतु उचित माध्यम तैयार हो जाये और साथ में लागत व ऊर्जा का खर्च न्यूनतम हो।

न्यूनतम जुताई के लाभः

- पौधों की जड़ों में बहुत कम अवरोध होता है।
- मृदा में अंतः श्रवण दर में वृद्धि हो जाती है।
- वर्षा के जल अपवाह होने से मृदा कटाव कम होता है।
- फसल उत्पादन लागत कम आती है।

(ब) शून्य जुताईः इसके अंतर्गत धान की कटाई के बाद उसी खेत में बिना जुताई किए ट्रैक्टर चालित जीरो टिल कम फर्टीड्रिल मशीन द्वारा गेहूं की पंक्तियों में बुवाई करने को शून्य जुताई (जीरो टिलेज) तकनीक कहते हैं। इस तकनीक द्वारा गेहूं, धान, मक्का, मसूर और चना की बुवाई की जा सकती है। इस तकनीक में फसल अवशेषों को मृदा सतह पर छोड़ दिया जाता हैं जो गल-सड़कर ह्यूमस बन जाते हैं और खाद का काम करते हैं जिससे मृदा उर्वरता में वृद्धि होती है।

परंपरागत बुवाई की तुलना में जीरो टिल ड्रिल से बुवाई करने पर 20 सें 25 दिन की बचत होती है और उत्पादन सतत रखा जा सकता है। जिससे फसल की बिना जल लगाये और खेत की तैयारी किये बिना बुवाई की जा सकती है। जिसके कारण जल कम लगता है और पैदावार वही की वही रहती है।

जीरो टिलेज तकनीक से बुवाई

शून्य जुताई तकनीक के लाभ

- धान की कटाई के तुरंत बाद मिट्टी में सही नमी रहने पर गेहूं की बुवाई करने पर फसल को 20 से 25 दिनों का समय मिल जाता है।
- खेत को तैयार करने के समय को बचा कर 10 से 15 प्रतिशत अधिक उपज मिलती है।
- शून्य जुताई तकनीक से 85 से 90 प्रतिशत ईधन, ऊर्जा व समय की बचत होती है।
- नो टिल ड्रिल से उर्वरक एवं बीज की निर्धारित मात्रा डाली जा सकती हैं।
- गेहूं का अंकुरण 2 से 3 दिन पहले होता है।
- परंपरागत विधि की तुलना में इस विधि में मड़ूँसी/गेहूंसा का जमाव 30 प्रतिशत कम होता है।
- इस विधि से बुवाई करने पर 15 से 20 प्रतिशत जल की बचत होती है।
- मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में सुधार होता है और मृदा की जल धारण क्षमता भी बढ़ती है।
- मिट्टी व पर्यावरण प्रदूषण में कमी आती है।
- पिछली फसल का कचरा मिट्टी में मिलाकर या सड़ाकर मिट्टी की गुणवता (क्वालिटी) में लाभ करता है।

कम जुताई पर बुवाईः यह एक ऐसी पद्धति है जिसमें मशीन द्वारा जुताई एवं बुवाई का कार्य एक साथ संपन्न होता है। इस कार्य को रोटावेटर टिल ड्रिल या स्ट्रीप टिल-ड्रिल द्वारा किया जाता है जिसमें रोटावेटर की क्रिया से मिट्टी पूरी चौडाई में भुरभुरी होकर बुवाई के लिए तैयार होती है जबकि स्ट्रीप टिल ड्रिल में केवल बोई जाने वाली पंक्ति ही तैयार होती है। इसके अतिरिक्त ड्रिस्क हैरो/कल्टीवेटर/रोटावेटर से कम जुताई करके जीरो टिल-ड्रिल से भी बुवाई की जाती है जहां धान के खरपतवार अगली गेहूं में समस्या उत्पन्न करते हैं एवं सतही बुवाई में भी अवरोध पैदा करते हैं।

उथली चौडी क्यारियों में बुवाई/मेंड़ों पर बुवाई/बेड प्लानटिंग विधि

यह एक ऐसी पद्धति है जिसमें जीरो-टिल ड्रिल बेड प्लान्टर मशीन द्वारा बनायी गयी मेंड़ों पर फसलें उगाई जाती हैं। कुछ सब्जियों जैसेः आलू, शकरकन्द, मूली, चुकन्दर, एवं मसालें आदि फसलों की खेती मेंड़ों पर की जाती हैं। लेकिन आज खाद्यान्न एवं तिलहन फसलों को बोने हेतु ट्रैक्टर चालित रेज्ड बैड प्लान्टर द्वारा खेती करना आसान हो गया हैं। इस मशीन द्वारा बीजों एव उर्वरकों का एक साथ प्रयोग किया जा सकता है। इस विधि द्वारा धान, गेहूं, मक्का, सरसों, आलू, मटर, चना, आदि फसलों की खेती की जा सकती है। इस तकनीक द्वारा फसल प्रणाली को गहन एवं विविधीकृत करने की प्रबल संभावना है जैसेः गन्ना+ गेहूं, मक्का +आलू, मटर/चना+गन्ना, गेहूं+पोदीना, मूँग+गन्ना आदि की सहफसली खेती। ध्यान रखें कि यह विधि केवल सिंचित क्षेत्रों के लिए है। इस विधि के लिए खेत समतल होना चाहिए तथा खेत फसल अवशेष मुक्त होना चाहिए। गेहूं के लिए मेंड़ों पर 3 पंक्तियों की बुवाई की जा सकती है, जबकि सोयाबीन, सरसों, चना, मूँग, की दो पंक्ति काफी होती हैं।

मेंड़ों पर बुवाई के लाभः

- इस विधि से बुवाई करने पर 25 से 30 प्रतिशत जल की बचत होती है तथा जल की जल उपयोग क्षमता बढ़ जाती है।

संरक्षण खेती में मेंड़ों पर गेहूं बुवाई

- इस विधि में बीज दर को 15 से 20 प्रतिशत कम किया जा सकता है।
- प्रकाश, भूमि एवं पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता में बढ़ोतरी होती है।
- पौधों की बढ़वार तेज होने के कारण खरपतवार का प्रकोप कम होता है।
- फसल कम गिरती है जिससे कटाई में आसानी होती है।

ट्रैक्टर चालित लेजर लैण्ड लेवलर द्वारा भूमि का समतलीकरणः खेत एकसार होगा तो फसल को खाद, जल अच्छी तरह से मिलेंगें, इसलिए पैदावार बढाने और लागत कम करने के लिए खेत का समतल होना जरूरी है क्योंकि ऊंचे-नीचे खेत में सिंचाई करते समय जल खेत मे पूरी तरह से समान रुप से नहीं फैल पाता है तथा इसके चलते खेत में कुछ जगह पर खरपतवार पनपने लगते हैं ओर सभी पौधों व बीजों को सही अनुपात में जल भी नहीं मिल पाता है, जिससे पैदावार पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

ट्रैक्टर चालित लेजर लैण्ड लेवलर मशीन का प्रयोग कर किसान इस समस्या को दूर कर सकते हैं, यह एक ऐसा यंत्र है जो पूर्व रुप से किरणों द्वारा तथा कन्ट्रोल यूनिट के सहारे भूमि को बराबर मात्रा में समतल कर देता है। इस यंत्र में लेजर ट्रान्समीटर, लेजर रिसीवर, कन्ट्रोल बॉक्स एवं लेवलर मुख्य भाग है। लेवलर को ट्रेक्टर के पीछे जोड़कर लेजर तरंगों के माध्यम से

संरक्षण खेती हेतु भूमि का स्वचालित यंत्र द्वारा समतलीकरण

कन्ट्रोल किया जाता है। ट्रैक्टर में लगे हाइड्रॉलिक सिस्टम की सहायता से लेवल मशीन ऊपर-नीचे होती रहती है जिससे खेत एकसार हो जाता हैं। एक एकड़ भूमि को समतल करने के लिए कम से कम एक से डेढ़ घंटे का समय लगता है। इस यंत्र को प्रयोग करने से पहले ध्यान रखें कि खेत की बारीक जुताई होनी चाहिए, खेत में 05 प्रतिशत नमी होनी चाहिए तथा खरपतवार व फसल के अवशेष, जड़ें, धान का पुआल एवं घास आदि नहीं होने चाहिए।

लेजर लैण्ड लेवलर से भूमि समतलीकरण के लाभ

- सिंचाई जल की 30 से 40 प्रतिशत तक बचत होती है।
- फसलों की पैदावार एक समान तथा 15 से 25 प्रतिशत की बढ़ोतरी होती है।
- खेत की जुताई के क्षेत्र में 2 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
- भूमि समतल करने में समय की बचत होती है।
- पूरे खेत में जल का एक समान वितरण होता है।
- खरपतवारों के उगने में कमी होती है।

फसल विविधिकरणः फसल विविधीकरण का अभिप्राय है वर्षों से अपनाए जाने वाले एक विशेष फसल चक्र में से किसी एक जगह दूसरी फसल की खेती। फसल विविधीकरण की विधियों के अंतर्गत फसल प्रणाली, फसल चक्र, सघन खेती, मिश्रित फसलें, अंतः सहफसलें आती हैं, जो मृदा उर्वरता सुधारने, उपज बढ़ाने तथा मृदा कटाव को कम करने में सहायक हैं।

उत्तरी भारत में लगातार धान-गेहूं की फसल लेने के कारण इस फसल चक्र के उत्पादन में अनेक समस्याएं आ रही हैं, जैसेः खरपतवारों का प्रकोप, मृदा पोषक तत्वों का अत्यधिक दोहन, जल की कमी, पर्यावरण प्रदूषण, बढ़ती उत्पादन लागत तथा स्थिर उत्पादन आदि। जिसके लिए टिकाऊ उत्पादन हेतु यह आवश्यक हो गया है, कि दलहनी फसलों को कम से कम दो वर्ष में एक बार अवश्य लगाएं। ऐसे खेतों में जहां वर्षा जल का ठहराव न हो अर्थात् ऊंचे खेतों में, धान के स्थान पर खरीफ की दलहनी फसलें जैसेः अरहर, उर्द, लोबिया, मूँग, ग्वार

आदि की बुवाई करनी चाहिए। इसी प्रकार रबी में गेहूं के स्थान पर चना, मटर, मसूर, या चारे की दलहनी फसलें या बरसीम आदि लगाई जा सकती हैं। फसल विविधीकरण द्वारा कीट, बीमारी, खरपतवार आदि का संतुलन जैविक दबाव कम होता है तथा मृदा में पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है एवं मृदा कटाव कम होता है तथा वर्ष भर आय प्राप्त होती रहती है।

भारत वर्ष में विभिन्न प्रकार की जलवायु तथा मृदा पाई जाती हैं जहां पर फसल विविधीकरण की अपार संभावनाएं है तथा जो देश की बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न की आपूर्ति करने में स्वतः ही सक्षम हैं। इसके अंतर्गत विभिन्न फसलों जैसेः अन्न, दलहन, तिलहन, सब्जियां, चारा, रेशा, फल, मसालों, दवाई तथा वाणिज्यिक फसलों की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति संभव हो सकेगी।

फसल अवशेष प्रबंधन तथा पुनः चक्रणः

फसल अवशेष वे पदार्थ होते हैं जो फसल कटाई एवं गहाई के उपरांत मृदा पर छोड़ दिये जाते हैं। इनमें मुख्यतः भूसा, तने, डण्ठल, गन्ने की पत्तियां, मूंगफली के छिलके आदि हैं। फसल अवशेष से ढकी हुई मृदा का तापक्रम न अधिक बढ़ता है, और न ही अधिक घटता है। अतः सूक्ष्म जीवों की सहिष्णुता बढ़ जाती है, जिससे पौधों के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता अच्छी बनी रहती है। फसलों को खरपतवार, पाले एवं लू के प्रकोप से बचाया जा सकता है तथा मृदा में नमी बनी रहती है।

फसल अवशेष जैसे पौधों की पत्तियां, भूसा, पुआल और घास आदि की मिट्टी में दबाने से कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है और मृदा संरचना में भी सुधार होता है। फसल अवशेषों के साथ रॉक फॉस्फेट अथवा सुपर फॉस्फेट मिलाने से सड़ाव तीव्रगति से होने के साथ मृदा के सुलभ फॉस्फेट का स्तर भी बढ़ जाता है।

संरक्षण खेती के लाभ

मृदा व जल का संरक्षणः परंपरागत खेती में जुताई द्वारा या तो फसल अवशेष मृदा में मिला दिए जाते हैं। जैसा कि उत्तर-पश्चिमी भारत में धान व गेहूं तथा गुजरात के सौराष्ट्र प्रांत में गेहूं के फसल अवशेषों में किया जाता है। इसके कारण मृदा का जल तथा वायु से कटाव बढ़ जाता है, जबकि संरक्षण खेती में मृदा सतह पर फसल अवशेषों की परत होने के कारण मृदा कणों को बांधे रखने की क्षमता बढ़ जाती है, जिससे जल तथा वायु कटाव की तीव्रता कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त संरक्षण खेती में उगाई जाने वाली दलहन फसलें भी मृदा को जल तथा वायु कटाव से संरक्षण प्रदान करती है। संरक्षण खेती के निम्नलिखित लाभ हैं। 1. कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि। 2. मिट्टी जल का संरक्षण। 3. मिट्टी संरचना व पौधों की जड़ों में वृद्धि।

मृदा गुणवता में वृद्धिः संरक्षण खेती में मृदा में कम से कम यांत्रिक छेड़छाड़ करने, मृदा सतह के जैविक पलवार से ढके रहने तथा फसल चक्र अपनाने से मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणवता में लगातार वृद्धि होती है। संरक्षण खेती अपनाने से मृदा संरचना, मृदा कणों के आकार व टिकाऊपन तथा वायुसंचार में सुधार से पौधों की जड़ों का अच्छा विकास होता है। लगातार फसल अवशेषों के मृदा सतह पर रखने तथा उसके अपघटित होते रहने से पादप पोषण तत्व लगातार जमीन में मिलते रहते हैं, जिससे मृदा उर्वरता बढ़ती है तथा मृदा में पाए जाने वाले सूक्ष्म जीवों व केचुओं की संख्या तथा जैविक क्रियाओं में वृद्धि से भी मृदा उर्वरता बढ़ती है, साथ ही साथ यह भी पाया गया है कि संरक्षण खेती मृदा क्षारीयता तथा लवणता की समस्या को भी कालांतर में कम करती है।

वर्षा जल उपयोग क्षमता में वृद्धिः शुष्क क्षेत्रों में फसल उत्पादकता बढ़ाने के लिए वर्षा जल उपयोग क्षमता को बढ़ाना नितांत आवश्यक है। संरक्षण खेती में मृदा सतह पर फसल अवशेषों की जैविक पलवार के कारण वर्षा जल का मृदा में रिसाव बढ़ता है तथा भू-जल का वाष्पीकरण कम होता है। लगातार फसल अवशेषों के रुप में कार्बनिक अंश डालने से मृदा की जल-धारण क्षमता भी बढ़ती है। अतः संरक्षण खेती में वर्षा जल अधिक मात्रा में तथा लंबे समय तक भूमि में संरक्षित रहता है, जो पौधों को ज्यादा समय तक उपलब्ध होता रहता है इससे फसलों की सूखा सहन करने की क्षमता बढ़ती है, अतः जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली वर्षा की अनियमितता व सूखे का कुप्रभाव फसलों में कम हो जाता है।

कृषि आदानों की उपयोग दक्षता में वृद्धिः फसल अवशेषों को खेत से बाहर न ले जाने या जलाया न जाकर मृदा सतह पर ही रखने के कारण धीरे-धीरे उनके अपघटन से पौषक तत्व मृदा में मिलते रहते हैं, इसके अतिरिक्त संरक्षण खेती में मृदा में कार्बनिक पदार्थो के अंश बढ़ने के कारण उर्वरको के रुप में स्थिरीकृत रहते हैं। साथ ही साथ गहरी जड़ वाली फसलों को उगाने से पोषक तत्वों के जमीन में रिसाव के कारण होने वाले क्षति में कमी आती है। इसके अतिरिक्त संरक्षण खेती में फसल अवशेषों के अपघटन से तथा जड़ग्रंथियों पौधों को फसल चक्र में अपनाने से पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।

फसल उत्पादकता में वृद्धि व स्थिरताः संरक्षण खेती से मृदा कटाव में कमी आने, मृदा गुणवता में सुधार होने, मृदा जल उपलब्धता में वृद्धि होने, समय पर बुवाई होने तथा फसल चक्र अपनाने से धीरे-धीरे फसल उत्पादकता में वृद्धि होती है, इसके अतिरिक्त मृदा में नमी के ज्यादा समय तक संरक्षित रहने से फसल उत्पादन में स्थिरता आती है।

खरपतवारों पर प्रभावः संरक्षण खेती में जुताई तथा यांत्रिक सस्य क्रियाएं नहीं करने से खरपतवारों का प्रकोप बढ़ सकता है। किंतु एकीकृत नियंत्रण अपनाकर खरपतवारों का प्रकोप कम किया जा सकता है। खरपतवार रहित बीज का प्रयोग, खेत के चारों तरफ मेंड़बंधी, जिससे कि वर्षा जल के साथ खरपतवारों के बीज खेत में नहीं आएं, बीज बनने से पहले खरपतवारों का नियंत्रण, उचित फसल चक्र, सिंचाई जल से खरपतवारों के बीजों को हटाना, शाकनाशियों का उचित प्रयोग, जैविक खरपतवार नियंत्रण की विधियों का प्रयोग आदि से धीरे-धीरे खरपतवारों का प्रकोप कम किया जा सकता है।

पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभावः संरक्षण खेती में जमीन में कम से कम यांत्रिक छेड़छाड़ करने, मृदा सतह को जैविक पलवार से ढके रहने तथा फसल चक्र अपनाने में स्वाभाविक रुप से जैवविविधता में वृद्धि होती है। संरक्षण खेती के कारण वर्षा जल के भूमि में रिसाव के बढ़ने से भू-जल सतह में वृद्धि होती है, नीचे वाले क्षेत्रों में बाढ़ का प्रकोप कम होता है तथा जलाशयों में मिट्टी का जमाव कम होता है।

आर्थिक लाभः संरक्षण खेती में मृदा गुणवता के बढ़ने, नमी की अधिक समय तक उपलब्ध रहने तथा सूखे का प्रभाव कम होने, समय पर बुवाई होने आदि से उपज में वृद्धि होने तथा उत्पादन लागत में कमी आने से शुद्ध प्रतिफल में वृद्धि होती है।

संरक्षण कृषि से ऐसे अवसर उत्पन्न होते हैं जिनसे तकनीकियों के विकास और परिशोधन सुदृढ़ अनुसंधान किसान विस्तार संबंध स्थापित करने और तकनीक सृजन तथा उसे अपनाने हेतु संस्थागत तथा नीति संबंधी परिवर्तन सुनिश्चित करने के लिए किसानों के ज्ञान और अनुभव का उपयोग करने में सहायता मिलती है। संरक्षण कृषि ने वैश्विक स्तर पर प्रगति की है। संरक्षण कृषि न केवल सस्ती है वरन् पर्यावरण, मानव, पशु-पक्षी, जीव-जंतु जैव विविधता, मृदा, जल, वायु एवं संपूर्ण पृथ्वी के हितैषी है।

सही स्थान पर बोया गया सुकर्म का बीज ही महान फल देता है।

- कथा सरित्सागर

लघु एवं सीमांत कृषकों की आय बढ़ाने हेतु समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल

राजीव कु. सिंह, प्रवीण कु. उपाध्याय, विनोद कु. सिंह, समरथ लाल मीणा एवं एस.एस. राठौर

सस्य विज्ञान संभाग,

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

समन्वित कृषि प्रणाली से समग्र दृष्टिकोण से किसानों, खासतौर पर छोटे काश्तकारों को अपने घर और बाजार के लिये कई तरह की वस्तुओं के उत्पादन का पर्याप्त अवसर तो प्राप्त होता ही है साथ ही कृषि के क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाने, परिवार के लिये संतुलित पौष्टिक आहार जुटाने, पूरे साल आमदनी व रोजगार का इंतजाम करने तथा मौसम और बाजार संबंधी जोखिम कम करने में भी मदद मिलती है। इससे खेती में काम आने वाली वस्तुओं के लिये किसानों की बाजार पर निर्भरता भी कम होती है। लागत ज्यादा एवं पैदावार में बढ़ोतरी न होने से किसानों की शुद्ध आय में निरंतर कमी होती जा रही है साथ में मृदा का स्वास्थ्य भी दिन प्रति-दिन खराब होता जा रहा है। एक तरफ जहां लघु व सीमांत किसानों की संख्या बढ़ती जा रही है वहीं प्राकृतिक संसाधनों की कमी होती जा रही है। ऐसी स्थिति में सीमांत एवं लघु खेती को किस तरह लाभकारी व्यवसाय बनाकर कृषक परिवार की जीविका निश्चित करने व उनके जीवन स्तर को ऊपर उठाया जाना एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। इसी श्रृंखला में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा उत्तर भारतीय परिस्थितियों में रहने वाले लघु एवं सीमांत कृषकों हेतु 1.0 हेक्टेयर सिंचित भूमि पर एक समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल विकसित किया गया है। समन्वित कृषि प्रणाली प्रक्रिया का मुख्य अभिप्राय है कि किसान की फार्म प्रक्षेत्र पर उपलब्ध संसाधनों, आर्थिक स्थिति एवं परिवार के मूलभूत खाद्यान्न एवं हरे चारे आदि की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न उद्यमों जैसे फसल उत्पादन, बागवानी, कृषि-वानिकी, पशुपालन (दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, बतख पालन), मधुमक्खी पालन, मछली पालन व मशरुम आदि का समन्वय बनाकर सालभर आय अर्जित करना और साथ में उनके सामाजिक व आर्थिक स्तर को ऊँचा बनाना है। "समन्वित कृषि प्रणाली कृषि" उद्यमों के उचित संयोजन का प्रतिनिधित्व करती है, जैसे-फसल प्रणाली, वानिकी, डेयरी पालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, बतख पालन में किसानों को लाभप्रदता के लिए साधन उपलब्ध हैं।

समन्वित कृषि प्रणाली की धारणा

प्रायः देखा गया है, कि अधिकतर किसान एक ही प्रकार की फसल प्रणाली का लंबे समय तक प्रयोग करते रहते हैं जिसके कारण कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होने लगती है। उदाहरणार्थ पानी व मृदा की उर्वराशक्ति में कमी होना, फसल उत्पादन में स्थिरता, सीमांत व लघु किसानों के फसल उत्पादन में अधिक लागत तथा खेती से कम लाभ इत्यादि समस्याएं बढ़ रही है। उर्वरकों एवं रसायनों के अधिकाधिक प्रयोग के कारण वातावरण प्रदूषण बढ़ रहा है। ऐसी परिस्थिति में लघु एवं सीमांत कृषि की आजीविका सुनिश्चित करना एक कठिन चुनौती है। जिन क्षेत्रों में वर्षा आधारित खेती ही संभव है वहां नमी की कमी तथा सूखे की स्थिति में फसल उत्पादन या तो बिलकुल नहीं होता है या बहुत कम होता है। अतः एक ही प्रकार की फसलें उगाना हमेशा जोखिम भरा रहता है जिसके कारण विशेषकर सीमांत एवं लघु किसानों की अपनी घरेलु आवश्यकताएं पूर्ण करना कठिन हो रहा है। ऐसे में समन्वित कृषि प्रणाली द्वारा किसानों की आजीविका को सुनिश्चित किया जा सकता है। समन्वित कृषि प्रणाली के अंतर्गत अत्यधिक फसल उत्पादन के अतिरिक्त अन्य कृषि उद्यमो का संयोजन कर न केवल अधिक लाभ व टिकाऊ उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है बल्कि मौसम की विषमता से भी सामंजस्य स्थापित

किया जा सकता है उससे संसाधनों का संतुलित प्रयोग कर उनकी उपयोग क्षमता में वृद्धि तथा घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ सकल आमदनी को बढ़ाया जा सकता है व पूरे वर्ष रोजगार भी प्राप्त किया जा सकता है।

समन्वित कृषि प्रणाली के उद्देश्य

- समन्वित कृषि प्रणाली द्वारा विभिन्न उद्यमों जैसे फसलों एवं फलोत्पादन, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, मछली पालन, मशरुम उत्पादन, वर्मीकम्पोस्ट एवं चारदीवारी पर बहुउद्देशीय वनस्पति रोपण आदि के विवेकपूर्ण संयोजन से सालभर आय अर्जित कर सकते हैं।
- इससे देश के 86 प्रतिशत लघु व सीमांत किसानों की आजीविका में सुधार लाया जा सकता है।
- यह मॉडल किसानों की आय को आसानी से दोगुना करने में सक्षम है।

समन्वित कृषि प्रणाली से लाभ

- कृषि के अनेक उपक्रमों के समन्वित उपयोग से टिकाऊ फसल उत्पादन एवं अधिक लाभ प्राप्त होता है।
- किसानों की घरेलु आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त कृषक परिवार को संतुलित आहार एवं नियमित रोजगार उपलब्ध होता है।
- विभिन्न कृषि उपक्रमों के अवशेष, अनुपयुक्त उत्पाद एवं कार्बनिक पदार्थ के पुनः चक्रण द्वारा उर्वरकों एवं रसायनों के प्रयोग पर निर्भरता कम होती है तथा भूमि उर्वरा शक्ति मे सुधार होता है।
- वातावरण प्रदूषण में कमी तथा उत्पादन की गुणवता मे वृद्धि होती है।
- प्राकृतिक आपदाओं, जैसे सूखा एवं बाढ़ इत्यादि के प्रकोप द्वारा हानि कम होती है।
- कृषि उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त होता है एवं किसान की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

उत्तर भारत परिस्थितिकी मे आई एफ एस के घटक

समन्वित कृषि प्रणाली के प्रमुख अवयव

- फसलें: अनाज, दलहन, तिलहन, चारा, सब्जी, औषधि, रेशा, मसाले, फल इत्यादि ।
- पशुपालन व अन्य: दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, बतख पालन, खरगोश पालन इत्यादि ।
- वैकल्पिक भू-उपयोग: कृषि वानिकी, कृषि उद्यानिकी, चरागाह, बकरी पालन, भेड़ पालन, सूअर पालन इत्यादि ।
- कृषि आधारित अन्य उपक्रमः मधुमक्खी पालन, मशरुम उत्पादन, रेशम कीट पालन, बायो गैस उत्पादन, नील-हरित शैवाल उत्पादन, नर्सरी उत्पादन, वर्मीकम्पोस्ट, मूल्य संवर्धन इत्यादि।

समन्वित कृषि प्रणाली: एक उदाहरण

देश के 86 प्रतिशत किसान जिनकी जोत 2 हेक्टेयर से कम है उनकी घरेलु आवश्यकताओं तथा आय में निरंतर वृद्धि को ध्यान में रखते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने समन्वित कृषि प्रणाली को एक मॉडल के रूप में विकसित किया है जिसमें फसल उत्पादन, बागवानी, कृषि-वानिकी के साथ-साथ, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, बतख पालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन आदि हैं जो कि एक दूसरे पर आधारित उद्यम है। शोध परिणाम यह दर्शाते हैं कि केवल धान-गेहूं फसल प्रणाली की अपेक्षा किसान यदि समन्वित कृषि

प्रणाली अपनायें तो अधिक आय अर्जित कर सकता है। धान-गेहूं फसल प्रणाली की अपेक्षा सीमांत किसान (<1 हेक्टेयर) अन्य कृषि उद्यमों का सामंजस्य करके जैसे दुग्ध उत्पादन, मछली पालन तथा मुर्गी पालन के द्वारा अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं जबकि लघु कृषक (2 हेक्टेयर) फसल उत्पादन, बागवानी, के साथ-साथ दुग्ध उत्पादन, मछली पालन एवं कृषि-वानिकी द्वारा 86 प्रतिशत अधिक लाभ कमा सकते हैं। तालिका 1 में समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल में विभिन्न कृषि उद्यमों में सकल आय तथा उत्पादन लागत व शुद्ध आय का विवरण दिया गया है जोकि यह दर्शाता है कि इस प्रकार से खेती में समन्वय से न केवल आय में वृद्धि होती है बल्कि वर्ष भर किसान के परिवार को रोजगार भी प्राप्त होता है।

तालिका 1: उत्तर भारतीय परिस्थितियों में लघु एवं सीमांत कृषकों की सतत् आजीविका हेतु समन्वित कृषि प्रणाली मॉडल का आर्थिक विश्लेषण (प्रति/हे.) 2017-18

उद्यम	क्षेत्र प्रति इकाई	सकल आय (रु)	उत्पादन लागत (रु)	शुद्ध आय (रु)	रोजगार दिवस
फसल उत्पादन	0.7 हेक्टेयर	1,65,354	72,156	93,198	150
दुग्ध-उत्पादन	3 गाय(70 मी^{2})	4,92,120	3,30,482	1,61,638	365
बतख पालन	35 पक्षी	61,090	30,679	30,411	26
मत्स्य पालन	0.1 हेक्टेयर	91,080	53,792	37,288	26
मुर्गी पालन	50 पक्षी	53,050	24,272	28,778	26
फलोत्पादन	0.05 हेक्टेयर	19,900	8,658	11,242	15
कृषि-वानिकी	120 मी^{2}	4,560	1,331	3,229	3
गोबर संचालित बायो गैस	50 मी^{2} (के.वी.आई.सी मॉडल)	9,000	5,000	4,000	12
चारदीवारी सेम फसल	0.03 हेक्टेयर	10,000	2,000	8,000	5
कुल आय	1.0 हेक्टेयर	9,06,154	5,27,370	3,78,784	628

संक्षेप में कहा जा सकता है कि समन्वित कृषि प्रणाली एक ऐसा मॉडल है जिसके द्वारा संसाधन का समुचित उपयोग, समय का सदुपयोग तथा लागत में कमी के साथ अधिक लाभ व सालभर रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। यह मॉडल टिकाऊ उत्पादन व पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाने के लिये भी उत्तम विकल्प है। इसलिए ऐसी प्रणाली को देश के सभी सीमांत एवं लघु किसानों के बीच प्रसारित करना अनिवार्य है तथा विभिन्न माध्यम से उनको लाभान्वित करना भी जरूरी है। इससे न केवल किसान की अधिक आमदनी एवं टिकाऊ उत्पादन उपलब्ध होगा, बल्कि इससे सामाजिक व आर्थिक स्तर में सुधार व सतत् आजीविका उपलब्ध हो सकेगी।

मॉडल का प्रभाव

- मिट्टी के बेहतर स्वास्थ्य के साथ-साथ संसाधनों का कुशल उपयोग।
- वर्ष भर संतुलित आहार के साथ नियमित रोजगार दिवस (628 श्रम दिवस) व आय (रु. 3,78,784 लाख)।
- ग्रामीण युवाओं के लाभप्रद रोजगार के लिए एक आकर्षक विकल्प।

चित्रः समन्वित कृषि प्रणाली के विभिन्न घटकों का समन्वयन

अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और अपने श्रम से उन्हें सींच-सींच कर महाप्राण शक्तियां बनाते हैं।

- महर्षि अरविंद

किसानों की आय दोगुनी करने के अवसर एवं सुझाव

ओमप्रकाश[1], रणबीर सिहं[2], वैभव बालियान

कृषि प्रसार संभाग[1] एवं जल प्रौद्योगिकी केंद्र[2],
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत में कृषि, सुनिश्चित खाद्य एवं पौषणिक सुरक्षा, टिकाऊ विकास, गरीबी उन्मूलन एवं देश की बड़ी जनसंख्या के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने हेतु यह एक प्रमुख क्षेत्र है। भारतीय कृषि के समक्ष वर्तमान में घरेलू खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना, कृषि आय में बढ़ोतरी, गरीबी उन्मूलन और जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पादन खतरों को कम करना, समग्र प्राकृतिक संसाधन और पर्यावरण सुरक्षा सुनिश्चित करना, भूमि सुधार, ईंधन की कीमत, खाद्य कीमत, वित्तीय संकट, तत्काल नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता आदि प्रमुख चुनौतियां हैं। उच्च आर्थिक वृद्धि और बढ़ती उपभोक्ता आय के परिणामस्वरूप नये अवसर दोनों घरेलू और वैश्विक बाजारों में कृषि वस्तुओं के लिये वृद्धि की मांग के रुप में खुलासा कर रहे हैं। धान, गेहूं और मक्का के अतिरिक्त कपास, सोयाबीन, मछली, अंडा इत्यादि के लिए बढ़ती अंतरराष्ट्रीय मांग भी निर्यात के लिए एक बड़ी चुनौती है। इसके अतिरिक्त ऐसे में घरेलू बाजार में उच्च वस्तुओं जैसे फल, सब्जियां, दूध, मांस, फूल इत्यादि और कृषि प्रसंस्कृत उत्पादों के लिए बढ़ती मांग संभावित समृद्धि की ओर इशारा कर रही है जिसे कृषि क्षेत्र में और अधिक बढ़ावा देना है।

कृषि में रोजगार के अवसर

भारत में कृषि विकास के क्षेत्रों में युवा किसानों को जोड़कर रोजगार प्रदान करने के लिए कुछ प्रमुख विकल्प हैं: जैविक खेती और उत्पादों का बाजार, तिलहन एवं दलहन उत्पादन और आत्मनिर्भरता, मधुमक्खी पालन, मुर्गी पालन, मछली पालन, पशुपालन, मशरुम की खेती, रेशम की खेती, फूलों की खेती, औषधीय व सुगंधीय पौधों की खेती, कृषि वानिकी प्रबंधन, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, सब्जियों का संरक्षण एवं भंडारण, फल परिरक्षण कार्य, सोयाबीन खाद्य उपयोग एवं स्वास्थ्य लाभ का कार्य, डेरी उद्योग, अनुबंध खेती, ई-खेती, मिश्रित खेती, शुष्क मृदा क्षेत्रों का विकास एवं खेती, बागानों में अंतवर्ती खेती, कृषि तकनीकी का विस्तार कार्य, कृषि आदानों का क्रय एवं विक्रय, कृषि आदानों, बीज, खाद व उर्वरक का व्यवसाय,

जीविकोपार्जन हेतु क्रिया-कलाप

मोबाइल कृषि तकनीकी हस्तांतरण, कृषि यंत्रों एवं उपकरणों का निर्माण, भूमि सुधार, फूड पार्क, फलों से पेय पदार्थो का निर्माण, खाद्य सामग्री पैकेजिंग, जैविक खाद, वर्मीकम्पोस्ट का निर्माण, कृषि पर्यटन स्थलों का निर्माण, कृषि विपणन, कृषि कौशल विकास केंद्रों की स्थापना तथा प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना।

कृषि विकास के उपाय

- भारतीय कृषि को विभिन्न प्रकार के जोखिम और अनिश्चितताओं के नए रूपों का सामना करना पड़ता है। ये राष्ट्रीय आपदाओं, वैश्विक जलवायु परिवर्तन, जैव ईंधन के लिए भोजन का उपयोग तथा कीमतों पर अनिश्चितताओं इत्यादि से संबंधित है। इसलिए, आदानों की आपूर्ति, ऋण, फसल और पशुधन बीमा आदि के लिए ज्ञान प्रणाली और संस्थागत तंत्र की भूमिका, हमारे कृषि में आवश्यक लचीलापन प्राप्त करने के क्रम में महत्वपूर्ण होगा। साथ ही साथ, कृषि में रसायन, पानी, ऊर्जा के कुशल उपयोग पर हमारी निर्भरता और अन्य आदानों सहित छोटे से खेत में यंत्रीकरण और जैव ऊर्जा, समय पर कृषि कार्य पर जोर देकर इच्छानुसार कृषि क्षेत्र में तीव्रगति से वृद्धि की जा सकती है।
- जलवायु परिवर्तन के समाधान के लिए अनुकूलन और तकनीकी विधियों दोनों के निवेश विकल्प विशेष रुप से संरक्षण कृषि, कार्बन क्रेडिट के रुप में प्रौद्योगिकी इत्यादि और विधियों को अपनाने के लिए छोटे किसानों को प्रोत्साहन देने की तत्काल आवश्यकता है।
- ऐसी मुख्य फसलों/उत्पादों को पहचानकर कृषि में विविधीकरण लाने की आवश्यकता है, जो छोटे किसानों को अपनी आय बढ़ाने में सहायक हो।
- खाद्य प्रसंस्करण और विकास के क्षेत्र को मजबूत करने की आवश्यकता है, जिससे कृषि प्रसंस्करण विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों और निजी क्षेत्रों, दोनों के लिए एक आकर्षक विकल्प बन जाए।
- कृषि के वैश्वीकरण द्वारा हमारे उत्पादन की गुणवता में सुधार, मूल्य संवर्धन, बाजार सूचना और लंबी अवधि में अच्छी तरह से देश के भीतर और बाहर दोनों में एक अनुकूल वातावरण प्रदान किया जा सकता है।
- गैर हरित क्रांति वाले क्षेत्रों एवं वर्षा आधारित क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाने और कृषि आय को बढ़ाने के लिए कार्यक्रम बनाया जा सकता है।
- कृषि के विकास के लिए जल सर्वाधिक महत्वपूर्ण संसाधन है। खेती में जल के अविवेकपूर्ण उपयोग का हमारी कृषि के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। सिंचाई विभाग, निजी क्षेत्र तथा किसानों के विभिन्न संगठन आदि के सम्मिलित प्रयास के माध्यम से जल उपयोग की दक्षता को वांछित स्तर पर लाकर सतही और भू-जल नियंत्रण, मूल्य निर्धारण में नवीनता व सिंचित क्षेत्रों का विस्तार किया जा सकता है। खाद्य सुरक्षा का लक्ष्य हासिल करने के लिए जल और जमीन जैसे संसाधनों का उचित प्रबंधन होना ही चाहिए।
- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए वर्तमान उपज और उपज क्षमता में विद्यमान अंतर को समाप्त करना होगा। इसके लिए कृषि नीति, वर्तमान तकनीकी के प्रसार और किसानों की उभरती आवश्यकताओं आदि पर विशेष घ्यान दिये जाने की आवश्यकता है।
- उत्पादकता की दृष्टि से सतत् विकास के लिए किसानों को प्रौद्योगिकी का सहारा देते रहना आवश्यक है।
- किसानों को बाजार से जोड़ने, कृषि उत्पादन और विपणन प्रणाली, मूल्य श्रृंखला और विपणन क्षमता के प्रभावी कार्यक्रम को अपनाने की आवश्यकता है।
- भारत सरकार ने सन् 2022 तक किसानों की आय को दोगुनी करने का लक्ष्य रखा है जिसे कृषि और किसान विकास से जुड़े सभी कार्यक्रमों

पर तीव्रगति व समेकित रूप से कार्य द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

किसानों के सशक्तिकरण के लिए परिसंपत्ति सुधार

परिसंपत्ति सुधार का प्रायोजन यह सुनिश्चित करना है कि गांवों के हर किसान के पास उत्पादक परिसंपत्ति जैसे कि जमीन, पशुपालन, मत्स्य, तालाब, घरेलू फार्म जो उसकी पहुंच में हो अथवा किसी उद्यम या बाजार प्रेरित दक्षता के द्वारा आय जिससे कि उसकी पारिवारिक आय एक दीर्घकालिक आधार पर पर्याप्त रूप से बढ़े। इससे उनकी पोषाहार, जीविका, शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकता सुनिश्चित होगी।

आमदनी वृद्धि हेतु कृषि में बढ़ते अवसर

भारत में कृषि विकास के क्षेत्रों में किसानों को जोड़कर रोजगार प्रदान करने के लिए प्रमुख विकल्प अनाज उत्पादन, तिलहन एवं दलहन उत्पादन, पशुपालन, मधुमक्खीपालन, मुर्गीपालन, मछलीपालन, जैविक खेती एवं उत्पाद का बाजार, मशरुम की खेती, रेशम की खेती, फूलों की खेती, ई-खेती, अनुबंध खेती, मिश्रित खेती, बागानों में अंतर्वतीय खेती, जड़ी-बूटियों की खेती, कृषि वानिकी, डेरी उद्योग, खाद्य प्रसंस्करण, सब्जियों का संरक्षण एवं भंडारण, फल परिरक्षण कार्य, सोयाबीन खाद्य उपयोग, फूड पार्क, फलों से पेय पदार्थों का निर्माण, खाद्य सामग्री पैकेजिंग, जैविक खाद व वर्मीकम्पोस्ट का निर्माण, कृषि यंत्रों एवं उपकरणों का निर्माण, शुष्क भूमि क्षेत्रों का विकास एवं खेती, कृषि आदानों का क्रय एवं विक्रय कार्य, कृषि आदानों जैसे बीज, खाद एवं उर्वरक का व्यवसाय आदि हैं। वर्तमान समय में कृषि विकास, खाद्य सुरक्षा एवं पोषण प्रबंधन के लिए किसानों को कुशल खेती प्रबंधन, नवीन कृषि तकनीकी क्षमता का सही ढ़ंग से प्रयोग करने के लिए प्रशिक्षण एवं नवीन राष्ट्रीय कृषि पाठ्यक्रम नीति बनाकर खेती में आजीविका के अवसर पैदा करके किसानों की आमदनी को बढाया जा सकता हैं।

आय बढ़ाने हेतु कृषि आधारित उद्यम

आज हमारे पास ऐसी तकनीकियां हैं जिनसे किसान भाई कम जमीन एवं कम समय में अधिक आमदनी ले सकते हैं और खेती में ही रोजगार के अवसर ढूंढ सकते हैं। उदाहरणतः यदि किसान एक एकड़ में गेहूं या धान की खेती करते हैं तो शुद्ध आय 8-10 हजार रुपये प्राप्त होती है और यदि फूलों की खेती करें तो आमदनी कई गुना ज्यादा हो सकती है। इन व्यवसायों को सफल रुप से चलाने के लिए व्यवसायी को संबंधित तकनीकी जानकारी व कार्य कुशलता का ज्ञान होना बहुत आवश्यक है। यह जानकारी न होना भी व्यवसायों को अपनाने में बाधक है। कृषि को बढ़ावा देने के लिए बहुत से विभाग विभिन्न कार्यों जैसे तकनीकी जानकारी, विपणन, आर्थिक सहायता आदि के लिए कार्य कर रहे हैं किंतु उनकी कार्य प्रणाली में आपस में कोई तालमेल नहीं है जिससे किसानों को जगह-जगह भटकना पड़ता है। सबसे जटिल समस्या कृषि उत्पादों के विपणन की है। ये उत्पाद पैदा तो गांव में होते हैं, परंतु इनकी मांग शहरों में अधिक है। व्यक्तिगत रूप से इन उत्पादों को शहरों में बेचना व्यावहारिक नहीं है। दूसरे बहुत से उत्पाद जैसे फूल, सब्जी, फल, दूध, मछली, खुम्ब ऐसे पदार्थ हैं जिनको ज्यादा समय तक रखा नहीं जा सकता है। इसके अतिरिक्त किसान की प्रतिस्पर्धा इस क्षेत्र के बड़े व्यवसायियों के साथ होने के कारण आकर्षक पैकेजिंग, ब्रान्ड पब्लिसिटी आदि के अभाव में ये उनके सामने टिक नहीं पाते। लेकिन ऐसा भी नहीं है कि इस स्थिति से निपटा नहीं जा सकता। दरअसल, हमें अपने समाज में व्यवसाय की प्रवृति को बढ़ावा देने के लिए उद्यमिता विकास कराना होगा।

उद्यमता विकास के लिए जरूरी है कि आज हम अपने ग्रामीण युवकों को उद्यमिता का महत्व समझाएं और समाज में उद्यमिता को महत्वपूर्ण स्थान पर रखें। व्यक्ति के व्यवहार के पीछे उसकी सोच होती है और उद्यमिता विकास के लिए सर्वप्रथम जरूरी है मानव की सोच को बदलना। हमारी आवश्यकताएं हमारी सोच से जुड़ी होती हैं। अपनी आवश्यकताओं से प्रेरित होकर व्यक्ति अपनी गतिविधियां आरम्भ करता है और यह

क्रिया लक्ष्य प्राप्ति तक चलती रहती है। हालांकि आवश्यकताएं अनंत हैं किंतु कुछ आवश्यकताएं मानव जीवन का आधार है अर्थात् उनकी सभी को जरूरत होती है जैसे शारीरिक, सुरक्षा और सामाजिक अभिस्वीकृति की आवश्यकताएं। अधिकांश मानव व्यवहार और उनकी गतिविधियां इन्हीं की प्राप्ति अर्थात् 'लक्ष्य' के इर्द-गिर्द घूमती हैं। कुछ मानव व्यवहार और उसकी गतिविधियां 'आत्म सम्मान की भावना' द्वारा अभिव्यक्त की जाती है। जबकि बहुत ही कम लोग प्रेरणात्मक उपलब्धि के द्वारा 'लक्ष्य' तक पहुंचने में सफलता प्राप्त करते हैं। ऐसे व्यक्ति उद्यमीय गुणों से युक्त, स्वतः उत्प्रेरित और समाज हेतु उदाहरण होते हैं। अब शोध से स्पष्ट हो चुका है कि मानव व्यवहार को उपयुक्त दिशायें देकर शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम द्वारा 'उपलब्धि प्रेरणा' से कवरेज किया जा सकता है।

उद्यमिता विकास प्रशिक्षण के अंतर्गत मोटे तौर पर चार क्षेत्रों को शामिल किया जाता है। पहला है उपलब्धि प्रेरणा का विकास। इसमें मनोवैज्ञानिक तकनीकों के जरिये व्यक्ति की सोच को उद्यमिता के लिए सकारात्मक दिशा में परिवर्तित किया जाता है तथा व्यक्ति को अपने अंदर छिपे गुणों को पहचानने का अवसर मिलता है जिससे उसमें आत्म विश्वास पैदा होता है तथा जीवन में उपलब्धि प्राप्त करने की इच्छा जागृत होती है। दूसरे चरण में भावी उद्यमियों को व्यवसाय के लिए उत्पाद के चयन और चुने हुए व्यवसाय को शुरु करने के लिए प्रोजेक्ट रिपोर्ट और संगठनात्मक सहायता की जानकारी दी जाती है। तीसरे चरण में व्यवसाय को स्थापित करने और उसका कैसे प्रबंध किया जाए, इसके लिए जानकारी दी जाती है। अंत में उद्यमी को सामाजिक उद्यम के बारे में बताया जाता है। इस प्रक्रिया से उद्यमियों को जोखिम लेने की क्षमता का एहसास दिलाया जाता है और उन्हें खुला जोखिम कैसे लिया जाए, इसकी जानकारी भी दी जाती है।

उद्यमिता विकास प्रशिक्षण लेने के बाद उद्यम के व्यवसाय में आने वाली बहुत सारी समस्याएं दूर हो जाती हैं। जैसा कि पहले भी कहा गया है कि जिन उत्पादों की चर्चा हमने औद्योगीकरण और व्यवसायीकरण के लिए की है, उसके व्यक्तिगत रूप से बेचने में काफी दिक्कतें आती हैं। इस दिक्कत को दूर करने के लिए इन्हें समूह या स्वयं सहायता समूहों के जरिये सामूहिक रूप से बेचा जा सकता है। इन व्यवसायों को शुरू करने के लिए बहुत सारी सरकारी योजनाएं उपलब्ध हैं तथा कई संगठन इसके लिए कार्य कर रहे हैं। स्वयं सहायता समूह के जरिये भी आर्थिक जरूरतों को पूरा किया जा सकता है।

कृषि को बढ़ावा देने और किसानों को सुविधा के लिए भारत सरकार विभिन्न योजनाओं को चला रही है। इन योजनाओं के माध्यम से किसानों को आर्थिक व तकनीकी सहायता प्रदान की जाती है। इसमें कृषि ज्ञान साझा करना, वित्तीय एवं प्रशिक्षण संबंधी सहायता शामिल हैं। विभिन्न विभागों द्वारा किसानों को अनुदान मिलने से कृषि क्षेत्र में लोगों का रुझान भी बढ़ा है। देश में वर्तमान सरकार द्वारा कुछ मुख्य योजनाएं चलाई गई हैं जिनसे किसान सक्षम, सुरक्षित, शक्तिशाली एवं समृद्ध होगा। जो वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने में सहायक होंगी। जैसे खेती की लागत को कम करने के लिए नीम लेपित यूरिया के प्रयोग और जैविक खेती पर जोर, खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए सोयल हेल्थ कार्ड और प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना तथा किसानों को अच्छा और बड़ा बाजार मुहैया कराने के लिए राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नैम) की शुरुआत की हैं, जिनकी ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। यहां उन योजनाओं का उल्लेख करना आवश्यक है जो कृषि क्षेत्र के लिए मील का पत्थर साबित हो सकती हैं।

कृषि संबंधी सरकारी योजनाएं

हमारे देश में जब तक किसानों की आमदनी नहीं बढ़ेगी तब तक गांवों का विकास नहीं होगा और तभी तक देश के समग्र विकास को भी गति नहीं मिलेगी। इसलिए भारत सरकार ने सन् 2022 तक किसानों की आमदनी को दोगुना करने का लक्ष्य रखा है, जिसे हासिल करने के लिए कृषि और किसान विकास से जुड़े सभी पहलुओं पर समेकित रुप से और तेज गति से सभी संबंधित को कार्य करना होगा। भारत सरकार ने इसके लिए सात सूत्री कार्यक्रम निर्धारित किये हैं, जिसके अंतर्गत खेती की लागत कम और आमदनी ज्यादा करने के प्रयास प्रारंभ

किये गये हैं। खेती से अधिक उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि हर खेत में पानी की व्यवस्था हो और इसके लिए सिंचाई तंत्र को मजबूत किया जा रहा है तथा जल संरक्षण के प्रयासों को गहन किया जा रहा है। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना इस दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसकी सफलता पर बहुत कुछ निर्भर करता है। इसी तरह खेत में खाद, उर्वरक आदि के रूप में दिये जाने वाले आदानों के उपयोग को तर्कसंगत तथा कुशल बनाने के लिए मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना लागू की गई है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना

किसानों की आमदनी को सबसे अधिक चोट मौसम के बिगड़ने या अन्य प्राकृतिक आपदाओं के कारण पहुंचती है। इससे राहत देने के लिए सरकार ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना शुरु की है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि इसमें किसानों को बहुत कम प्रीमियम देना पड़ेगा। बीमा कंपनियां खरीफ फसलों के लिए जो तय करेंगी, किसानों को उसमें सिर्फ 2 प्रतिशत देना होगा। रबी फसलों के प्रीमियम दर का सिर्फ डेढ़ प्रतिशत किसान देंगे। वहीं बागवानी और कपास की फसलों के मामले में किसानों को 5 प्रतिशत प्रीमियम देना होगा। बाकी प्रीमियम केंद्र और राज्य की सरकारें बराबर-बराबर देंगी। कम से कम 25 प्रतिशत क्लेम राशि सीधे किसानों के बैंक खाते में आएगी। फसल कटाई के बाद परिवहन और भंडारण के बाद उपज का नुकसान होता है, जिससे किसान को लाभ कम मिलता है। इसलिए भंडार गृहों और शीत भंडार गृहों की संख्या तेजी से बढ़ाई जा रही है। साथ ही खाद्य प्रसंस्करण को भी बढ़ावा दिया जा रहा है, जिससे अतिरिक्त उपज का उपयोग हो सकता है और मूल्यवर्धन से किसानों की आमदनी भी बढ़ती है। ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे स्तर पर इस प्रकार के उद्यम स्थापित करने के लिए सहायताओं और सुविधाओं को अधिक व्यापक बनाया जा रहा है।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना

सूखे की समस्या से स्थाई समाधान पाने के लिए और हर खेत तक पानी पहुंचाने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना की शुरुआत की गई है। इस योजना का मुख्य नारा है- "हर खेत को पानी"। इसके तहत कृषि योग्य क्षेत्र का विस्तार किया जाना है। खेतों में ही जल के प्रयोग करने की दक्षता को बढ़ाना है ताकि पानी के अपव्यय को कम किया जा सके। "हर बूंद अधिक फसल" के उद्देश्य से सही सिंचाई और पानी बचाने की तकनीक को अपनाना है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य देश के हर खेत तक किसी न किसी माध्यम से सिंचाई सुविधा कराना है ताकि हर बूंद से अधिक फसल ली जा सके। इस योजना के क्रियान्वयन में तीन मंत्रालय सम्मिलित हैं। इस योजना का लक्ष्य सभी खेतों के लिए सिंचाई उपलब्ध कराना है और प्रति बूंद अधिक फसल से जल का सदुपयोग बढ़ाना है। सभी जनपदों के लिए जिला सिंचाई योजना तैयार करने के लिए अधिकारियों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। देश के सभी जिलों को जिला सिंचाई योजना तैयार करने के लिए राज्यों को राशि दी गई है। यही नहीं मनरेगा के तहत वर्ष 2016-17 में वर्षा पोषित क्षेत्रों में 5 लाख तालाबों और कुंओं की व्यवस्था भी की जाएगी।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना

19 फरवरी, 2015 को प्रधानमंत्री द्वारा शुरु की गई। इस योजना का ध्येय वाक्य "स्वस्थ धरा, खेत हरा" रखा गया है। इस योजना के तहत जमीन का परीक्षण कराना और उसी के अनुसार आवश्यक वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर मृदा के पोषण तत्वों की कमियों को दूर किया जाना है। इसका उद्देश्य जमीन की कमजोर पड़ती गुणवता को रोकना और कृषि उपज को बढ़ाना है। फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त संस्तुति, पोषक तत्वों की मात्रा का प्रयोग करने और मृदा स्वास्थ्य और उर्वरता में सुधार के उद्देश्य से देश के सभी 14 करोड़ किसानों को दो वर्ष में मृदा और बीज परीक्षण सुविधाएं मुहैया करायी जाएगी। कृषि उत्पादन बढ़ाने हेतु "मृदा स्वास्थ्य कार्ड स्कीम" को प्रभावी बनाने तथा मार्च 2017 तक 14 करोड़ जोतों की मिट्टी की सेहत जांचने का लक्ष्य रखा गया था ताकि किसानों का लाभ बढ़ सके। खेती हेतु उर्वरकों की समय पर व सही कीमत पर उपलब्धता सुनिश्चित् करने हेतु बजट में शहर के कचरे को कम्पोस्ट में परिवर्तित करने के लिए नई नीति बनाने का लक्ष्य रखा गया है।

परंपरागत कृषि विकास योजना

जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए परंपरागत कृषि विकास योजना को आरंभ किया गया है। बजट 2016-17 में योजना के माध्यम से 3 साल में 5 लाख एकड़ क्षेत्र में जैविक खेती करने का लक्ष्य रखा गया है। उत्तर-पूर्वी राज्यों के लिए जैविक मूल्य श्रृंखला विकास हेतु तीन वर्षो के लिए वर्ष 2015-16 में 400 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया जिससे जैविक खेती की योजना को आगे बढ़ाने में सहायता मिलेगी। मनरेगा के तहत जैविक खाद के लिए 10 लाख कम्पोस्ट गड्ढ़ों का निर्माण किया जाएगा।

कृषि वानिकी और नीमलेपित युरिया

राष्ट्रीय कृषि वानिकी कार्यक्रम हेतु पहली बार 2016-17 के बजट में 75 करोड़ केंद्रांश का प्रावधान किया गया है। इससे मेंड़ों पर पेड़ अभियान को गति मिलेगी। यही नहीं, मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए अब देश में नीम कोटेड यूरिया ही मिलेगा। इससे किसानों को 100 कि.ग्रा. की जगह 90 कि.ग्रा. यूरिया का ही उपयोग करना पड़ेगा जिससे लागत मूल्य में कमी आएगी तथा यूरिया का गलत उपयोग भी अब नहीं हो पाएगा।

राष्ट्रीय कृषि बाजार

कृषि उपज को उचित मूल्य पर बाजार में बेचना, आज भी अधिकांश किसानों के लिए कठिन चुनौती है। अक्सर किसानों को कड़ी मेहनत से तैयार उपज को कम दामों पर बिचौलियों को बेचना पड़ता है। इस समस्या से छुटकारा दिलाने के उद्देश्य से 1 जुलाई 2015 को 'राष्ट्रीय कृषि बाजार' योजना की शुरुआत की गई है, जिसके तहत देश की प्रमुख मंडियों को इलैक्ट्रोनिक ट्रेडिंग प्लेटफार्म से जोड़ा जायेगा। इस कार्य को पूर्ण करने के लिए सितंबर, 2016 तक 200 मंडियों, मार्च, 2017 तक अन्य 200 मंडियों एवं मार्च, 2018 तक शेष मंडियों को सामान्य ई-मार्केट प्लेटफार्म पर जोड़ दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त बाजार की सुविधाओं को गांवों तक और उपज को बड़ी मंडियों तक सुरक्षित रुप से पहुंचाने की पहल भी की गई है। इसके लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे को मजबूत बनाने की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी गई है। ऐसा माना जा रहा है कि यदि किसानों को उनकी उपज की उचित कीमत मिलने लगे, तो आमदनी बढ़ने में ज्यादा देर नहीं लगेगी। यह 2022 तक किसानों की आमदनी को दोगुना करने की रूपरेखा का हिस्सा है।

किसानों के लिए मोबाइल एप की शुरुआतः किसानों की सुविधा के लिए चार मोबाइल एप शुरू किए गए हैं जो www.mkisan.gov.in के अतिरिक्त गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड किए जा सकते हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने वर्ष 2022 तक किसानों की आय को दोगुना करने के लिए एक 7 सूत्रीय कार्यनीति योजना की परिकल्पना की है जैसेः

1. कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए, विशाल बजट के साथ सिंचाई पर ध्यान देना, "प्रति बूंद अधिक फसल"
2. उत्पादकता बढ़ाने के लिए, मृदा स्वास्थ्य पर आधारित पोषक तत्वों और उच्च गुणवता के बीजों का पर्याप्त प्रावधान।
3. किसानों के लिए उच्चतर प्रतिफल हेतु फसल काटने के बाद होने वाले नुकसान को रोकने के लिए भंडारण एवं कोल्ड चेन में विशाल निवेश।
4. उच्च मूल्य प्राप्त करने के लिए, खाद्य प्रसंस्करण के माध्यम से अतिरिक्त मूल्य संवर्धन।
5. एक राष्ट्रीय कृषि बाजार, ई-प्लेटफार्म का निर्माण, उत्पादन के विपणन से बेहतर राजस्व प्राप्त हो सके।
6. एक नई फसल बीमा योजना जो किसानों के जोखिम कवर करेगा।
7. मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन तथा मत्स्य पालन जैसे सहयोगी कार्यकलापों को बढ़ावा देना।

इसके अतिरिक्त आय बढ़ाने के लिए किसानों को खेती के साथ पशुपालन, डेरी, बागवानी, कृषिवानिकी, मुर्गीपालन, मछलीपालन, और मधुमक्खी पालन, मेंड़ पर पेड़ जैसी अन्य गतिविधियों के लिए सरकार द्वारा

आर्थिक सहायता दी जा रही है। कृषि क्षेत्र में किसानों को सहायता प्रदान करने के लिए, सरकार ने ग्रामीण विद्युतीकरण, सिंचाई वृद्धि, उच्च मूल्य वाली फसलों के उपयोग कौशल विकास योजनाओं, खेती पर केंद्रित पहल, खेती से बाजार को जोड़ना, तथा किसान कल्याण योजनाओं पर जोर दे रही है।

किसानों की आय बढ़ाने के लिए पानी, उर्वरक और बिजली के न्याय संगत प्रयोग की बेहद सख्त आवश्यकता है। इस बात को रणनीतियों में सम्मिलित करना होगा और उस पर सख्ती से अमल करना परम आवश्यक है, तभी कृषि, किसान और टिकाऊ खेती का भविष्य सुरक्षित रह सकता है।

हताश न होना सफलता का मूल है और यही परम सुख है। उत्साह मनुष्य को कर्मो में प्रेरित करता है और उत्साह ही कर्म को सफल बनाता है।

- वाल्मीकि

आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और उद्यम सबसे बड़ा मित्र, जिसके साथ रहने वाला कभी दुखी नहीं होता।

- भर्तृहरि

गेहूं व धान के बीजोत्पादन में रोग प्रबंधन

अतुल कुमार, उषारानी पेडीरेड्डी[1] एवं ज्ञान प्रकाश मिश्र[2]

[1]बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, [2]आनुवंशिकी संभाग
भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली - 110012

उत्तम बीज अच्छी फसल का आधार हैं। उत्तम गुणवता का बीज वह होता है जिसमें अधिकतम आनुवंशिक शुद्धता हो, उच्च स्तर की भौतिक शुद्धता हो, अधिक अंकुरण क्षमता, बीज स्वास्थ्य, उचित नमी, बीज ओज, रंग और दशा, आकृति में समानता एवं पूर्ण परिवक्वता हो। इसके साथ-साथ सबसे ज्यादा अहम यह है कि उत्तम बीज रोग, कीट एवं खरपतवारों के बीजों से रहित हो।

हमारे देश में धान तथा गेहूं सबसे महत्वपूर्ण फसलें हैं। इसलिए ये दोनों फसलें हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये बढ़ती जनसंख्या की खाद्यान्न की मांग को पूरा करती हैं। इस लेख में इन दोनों फसलों के बीज उत्पादन के दौरान लगने वाले रोगों के लक्षणों एवं प्रबंधन उपायों के बारे में जानकारी देने की कोशिश की है।

धान के प्रमुख रोग

झोंका (ब्लास्ट) रोग

यह रोग *पिरीकुलेरिया ओराइजी* नामक कवक द्वारा फैलता है। धान का यह अत्यंत विनाशकारी रोग है। पत्तियों और उनके निचले भागों पर छोटे और नीले धब्बे बनते हैं, जो बाद में आकार में बढ़कर नाव की तरह हो जाते हैं। इस रोग का प्रकोप बिहार में सुगंधित धान में पाया जाता हैं। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर दिखाई देते हैं, लेकिन इसका आक्रमण पर्णछेद, पश्पक्रम, गांठों तथा दानों के छिलकों पर भी होता हैं। यह फफूंदजनित हैं। फफूंद पौधे की पत्तियों, गांठों एवं बालियों के आधार को भी प्रभावित करता हैं। धब्बों के बीच का भाग राख के रंग का तथा किनारे कत्थई रंग के घेरे की तरह होते है, जो बढ़कर कई सेंटीमीटर बड़ा हो जाता है। जब यह रोग उग्र होता है, तो बाली के आधार भी रोगग्रस्त हो जाते है, और बाली कमजोर होकर वहीं से टूट कर गिर जाती हैं। भूरे धब्बों के मध्य भाग में सफेद रंग होता हैं। इस अवस्था में अधिक क्षति होती हैं। गांठ का भूरा-काला होना एवं सड़न की स्थिति में टूटना, दानों का खखड़ी होना एवं बाली के आधार पर फफूंद का सफेद जाल होना 'नेक रॉट' कहलाता हैं। क्षत स्थल के बीच का भाग घूसर रंग का हो जाता हैं। अनुकूल वातावरण में कई क्षतस्थल बढ़कर आपस में मिल जाते हैं, जिसके फलस्वरूप पत्तियां झुलसकर सूख जाती हैं। गांठों पर भी भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। जिससे समुचित पौधे को क्षति पहुंचती है।

रोग नियंत्रण के उपाय

- बीज को बोने से पहले कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम या कैप्टान 2.5 ग्राम दवा को प्रति किलोग्राम बीज की दर) से उपचारित कर लें।
- नाइट्रोजन उर्वरक उचित मात्रा में थोड़ी-थोड़ी करके कई बार में दें।
- खड़ी फसल में 250 ग्राम बेविस्टीन + 1.25 किलोग्राम इण्डोफिल एम-45 को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- हिनोसान का छिड़काव भी किया जा सकता हैं। एक छिड़काव पौधशाला में रोग देखते ही, तथा दो-तीन छिड़काव 10-15 दिनों के अंतर पर बालियां निकलने पर करें।
- रोग रोधी किस्मों को उगाएं।

भूरी चित्ती रोग

यह रोग देश के लगभग सभी हिस्सों में पाया जाता है परंतु पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु में अधिक पाया जाता है। यह एक बीजजनित रोग है।

यह रोग *हेल्मिन्थो स्पोरियम औराइजी* नामक कवक द्वारा होता है।

इस रोग के कारण पत्तियों पर गोलाकार भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। पौधों की बढ़वार कम होती है, दाने भी प्रभावित हो जाते हैं, जिससे उनकी अंकुरण क्षमता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। पत्तियों पर तिल के आकार के भूरे रंग के काले धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बे आकार एवं माप में बहुत छोटी बिंदी से लेकर गोल आकार के होते हैं। धब्बों के चारों ओर हल्की पीली आभा बनती है। पत्तियों पर ये पूरी तरह से बिखरे होते हैं। धब्बों के बीच का हिस्सा उजला या बैंगनी रंग का होता है। बड़े धब्बों के किनारे गहरे भूरे रंग के होते हैं, बीच का भाग पीलापन लिए, गेंदा सफेद या घूसर रंग का हो जाता है।

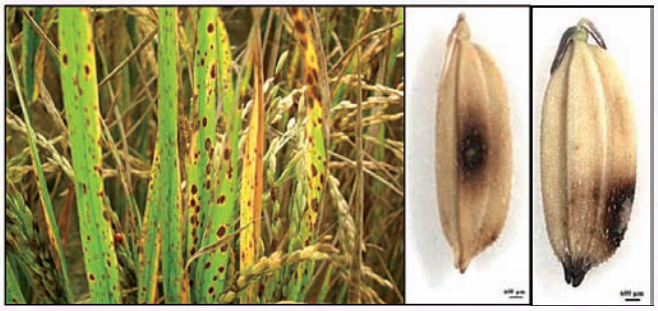

पर्ण एवं बीज पर भूरी चित्ती रोग का प्रकोप

रोग नियंत्रण के उपाय

- बीज को बुवाई से पहले कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम या कैप्टान 2.5 ग्राम नामक दवा से प्रति किलोग्राम बीज की दर) से उपचारित करें।
- रोग रोधी किस्मों को उगाएं।
- रोग दिखाई देने पर मैन्कोजैब (0.25 प्रतिशत) के 10-12 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करने चाहिए।
- नाइट्रोजन की मानकीकृत मात्रा ही खेत में डालें।
- खड़ी फसल में इण्डोफिल एम-45 (2.5 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी में) का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करें।
- रोगी पौधों के अवशेषों और घासों को नष्ट करें।
- मिट्टी में पोटाश, फॉस्फोरस, मैंगनीज और चूने का व्यवहार उचित मात्रा में करें।

पर्णछेद अंगमारी/पर्ण झुलसा

इस रोग का कारक *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* नामक फफूंद है, जिसे हम *थेनेटीफोरस कुकुमेरिस* के नाम से भी जानते हैं। पानी की सतह से ठीक ऊपर पौधा के आवरण पर फफूंद अंडाकार जैसा हरापन लिए हुए स्लेटी/उजला धब्बा पैदा करती हैं। पत्तियों के आधार पर बड़े-बड़े धारीदार हरे-भूरे या पुआल के रंग के रोगी क्षेत्र बनते हैं। बाद में ये तनों को चारों ओर से घेर लेते हैं, क्षतों का केंद्रीय भाग स्लेटीपन लिए सफेद होता है तथा किनारों पर रंग भूरा लाल होता है और ये क्षत धान के पौधों पर दौजियां बनते समय एवं पुष्पन अवस्था में बनते हैं। इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों एवं पर्णछेद पर दिखाई पड़ते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में फफूंद छोटे-छोटे भूरे काले रंग के दाने पत्तियों की सतह पर पैदा करते है, जिन्हें "*स्कलेरोपियम*" कहते हैं। ये स्कलेरोपिया हल्का झटका लगने पर नीचे गिर जाते हैं। रोग की उग्रावस्था में आवरण से ऊपर की पत्तियों पर भी लक्षण पैदा करती हैं। सभी पत्तियां आक्रांत हो जाती हैं। पौधा झुलसा हुआ प्रतीत होता है, और आवरण से बालियां बाहर नहीं निकल पाती हैं। बालियों के दाने भी बदरंग हो जाते हैं। वातावरण में आर्द्रता अधिक तथा उचित तापक्रम रहने पर, कवक जाल तथा मसूर के दानों के तरह स्कलेरोशियम दिखाई पड़ते हैं।

रोग नियंत्रण के उपाय

- धान के बीज को *स्थूडोमोनाज फ्लोरेसेन्स* (1 ग्राम अथवा ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर) से उपचारित करके बुवाई करें।
- कार्बेन्डाजिम 2 किलोग्राम या इण्डोफिल एम-45 की 2.5 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखाई देते ही भेलीडामाइसिन, कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम या प्रोपीकोनालोल 1 मि.ली. का 1.5-2 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10-15 दिन के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करें।

- घास तथा फसल अवशेषों को खेत में जला दें एवं गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें।
- अधिक नाइट्रोजन एवं पोटाश का प्रयोग न करें।
- रोग रोधी किस्मों को उगाएं।

जीवाणुज पत्ती अंगमारी रोग/जीवाणुज पर्ण झुलसा रोग

जीवाणुज पर्ण झुलसा रोग लगभग पूरे विश्व के लिए एक परेशानी है। भारत में यह मुख्यतः विकसित प्रदेशों जैसे- पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, कर्नाटका, तमिलनाडु में पाया जाता है। यह रोग *जैन्थोमोनास ओराइजी पी.वी. ओराइजी* नामक जीवाणु से होता हैं।

जीवाणुज पर्ण झुलसा रोग

मुख्य रूप से यह पत्तियों का रोग है। सर्वप्रथम यह रोग पत्तियों के ऊपरी सिरे पर हरे-पीले जलधारित धब्बों के रूप में उभरता है। पत्तियों पर पीली या पुआल के रंग लहरदार धारियां एक या दोनो किनारों के सिरे से शुरू होकर नीचे की ओर बढ़ती हैं और पत्तियां सूख जाती हैं। ये धब्बे पत्तियों के किनारे के समानान्तर धारी के रूप में बढ़ते हैं। धीरे-धीरे पूरी पत्ती पुआल के रंग में बदल जाती है। ये धारियां शिराओं से घिरी रहती हैं, और पीली या नारंगी कत्थई रंग की हो जाती हैं। मोती की तरह छोटे-छोटे पीले से कहरुवा रंग के जीवाणु पदार्थ धारियों पर पाये जाते है, जिससे पत्तियां समय से पहले सूख जाती हैं। रोग की सबसे हानिकारक अवस्था म्लानि या क्रेसक है, जिससे पूरा पौधा सूख जाता है। रोगी पत्तियों को काट कर शीशे के ग्लास में डालने पर पानी दूधिया रंग का हो जाता है। ग्रसित भाग से जीवाणुयुक्त श्राव बूंदों के रूप में निकलता है। ये श्राव सूखकर कठोर हो जाते हैं और हल्के पीले से नारंगी रंग की कणिकाएं अथवा पपड़ी के रूप में दिखाई देते हैं। यदि खेत में पानी का जमाव हो तो धान की फसल से दूर से बदबू आती है।

रोग नियंत्रण के उपाय

- बीजों को *स्थूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* (10 ग्राम प्रति किलो ग्राम बीज की दर) से उपचारित कर लगाएं।
- एक ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन या 5 ग्राम एग्रीमाइसीन 100 को 45 लीटर पानी में घोल कर बीज को बोने से पहले 12 घंटे तक डुबो लें।
- खड़ी फसल में रोग दिखने पर ब्लाइटाक्स-50 (2.5 किलोग्राम) एवं स्ट्रेप्टोसाइक्लिन की (50 ग्राम दवा 80-100 लीटर पानी में मिलाकर) छिड़काव करें।
- खड़ी फसल में एग्रीमाइसीन 100 का (75 ग्राम) और कापर आक्सीक्लोराइड (ब्लाइटॉक्स) का (500 ग्राम 500 लीटर पानी में) छिड़काव करें।
- संतुलित उर्वरको का प्रयोग करे, लक्षण प्रकट होने पर नाइट्रोजनधारी उरर्वक का छिड़काव ना करें।
- धान रोपने के समय बीज की दूरी 10-15 से.मी. अवश्य रखें।
- आक्रांत खेतों का पानी एक से दूसरे खेत में न जाने दें।
- हमेशा स्वस्थ प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।
- रोग रोधी किस्मों को लगाएं।

गेहूं के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

रतुआ रोग

जिस प्रकार लोहे पर जंग लगा हुआ नजर आता है उसी प्रकार गेहूं पर रतुआ (रस्ट) का प्रकोप होता है। गेहूं में तीन प्रकार की रस्ट लगती है: (क) भूरी रस्ट, (ख) पीली रस्ट, एवं (ग) काली रस्ट। ये तीनों रस्ट अलग-अलग फफूंद द्वारा फैलाई जाती हैं।

भूरी या पत्ती की रस्ट

इसका प्रकोप लगभग पूरे भारत में होता है। यह रोग *पक्सीनीया रिकान्डिटा ट्रिटिसाई* नामक कवक द्वारा होते हैं। इस रोग में पत्तियों में धब्बे बन जाते हैं, जिनका रंग भूरा या नारंगी होता है। ये धब्बे बाद में काले हो जाते हैं और बिखरी हुई अवस्था में रहते हैं। रोग के अधिक प्रकोप के कारण ये धब्बे तने पर भी बन जाते हैं। यह रोग दिसंबर के अंतिम सप्ताह में जब फसल 5 या 6 सप्ताह की हो जाती है, तब दिखाई देता है। इसके लिए 15-25^0 सेल्सियस तापमान अनुकूल होता है। इस रोग का प्रकोप होने पर पत्तियों पर यूरिडियमों के छोटे, गोल, चमकीले नारंगी रंग के धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बे कतारों में न होकर पत्ती की सतह पर बिखरे होते हैं और गर्म व नम मौसम में शीघ्र ही फट जाते हैं। इस प्रकार असंख्य यूरीडो बीजाणु निकल कर हवा द्वारा फैलते हैं तथा दूसरे पौधों की पत्तियों को संक्रमित कर देते हैं। बाद की अवस्था में जब फसल पकने के निकट होती है तो यूरिडियमो के स्थान पर पत्तियों की निचली सतह पर हल्के काले टीलियम बनते हैं। रोग का अधिक प्रकोप हो जाने पर फसल समय से पहले पक जाती है, जिसके फलस्वरूप उपज में भारी कमी हो जाती हैं।

पीली या धारीदार रस्ट

यह रोग *पक्सीनिया स्ट्रीफार्मिस* नामक कवक से होता है। पत्तियों की धारियों में पीले धब्बे इस रोग के लक्षण हैं। यह रोग अधिकतर पंजाब, हिमाचल प्रदेश और कभी-कभी बिहार में दिखाई देता है। पत्तियों पर छोटे-छोटे हल्के पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं, जो रोग की अंतिम अवस्था में काले पड़ जाते हैं। ये धब्बे रोग के अधिक बढ़ने पर तने और बालियों पर भी पहुंच जाते हैं। रोग अधिक ठंडे और नम वातावरण में फैलता है। रोग से प्रभावित पौधों की बालियों में जो दाने होते हैं, हल्के तथा कमजोर होते हैं। जब रोग बालियों पर पहुंच जाता है, तो बाली में दाने नहीं बन पाते हैं। रोग के बाद की अवस्था में मुख्यतः पत्तियों की निचली सतह और उनके आधार पर चमकीले हल्के काले रंग के टीलीयम बनते हैं। रोगग्रसित बालियों के दाने हल्के और सिकुड़े हुए होते हैं फलस्वरूप उपज में कमी हो जाती है।

पीली या धारीदार रस्ट

काली या तने की रस्ट

यह रोग, *पक्सीनिया ग्रेमिनिस ट्रिटिसाइ* नामक कवक से होता है। इसका प्रकोप देर से बोई गई फसल पर अधिक होता है, और यह गर्म व नम वातावरण में अधिक पनपता है। इसका प्रकोप तने पर होता है, और तने के ऊपर लंबे लाल भूरे रंग के उभरे हुए धब्बे बन जाते हैं, जो रोग के अधिक प्रकोप में पौधे के अन्य भागों पर भी देखे जा सकते हैं। इस रोग का प्रकोप होने पर तनों, पत्तियों एवं पर्णछेदों पर लंबे लाल भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, किंतु यह रोग तनों पर मुख्यतः पाया जाता है। रोग के भयंकर प्रकोप से पौधे अत्यंत कमजोर हो जाते हैं, और पूरी फसल नष्ट हो जाती है। रोग की उग्र दशा में फसल में दाने नहीं बन पाते और यदि बनते भी हैं तो बहुत ही हल्के और सिकुड़े हुए होते हैं, जिससे उपज में भारी कमी हो जाती है।

रोग के प्रबंधन उपाय

- रोगरोधी किस्में लगाएं।
- रोगों की रोकथाम के लिए प्रोपीकोनाजोल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
- मैन्कोजेब (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। दवा के घोल में 0.2 प्रतिशत सैडोविट भी मिला लें। जनवरी के अंतिम या फरवरी के शुरू के सप्ताह में छिड़काव करना उचित रहता है तथा 10 या 15 दिन के अंतराल पर 3 या 4 छिड़काव करें।
- देर से बोए गए गेहूं पर काली और भूरी रस्ट का अधिक प्रकोप होता है। अतः गेहूं को समय पर बोना चाहिए। देर से पकने वाली किस्मों को नवंबर के पहले या दूसरे सप्ताह में बो देना चाहिए।

- आवश्यकता से अधिक सिंचाई ना करें व नाइट्रोजन की कम मात्रा का प्रयोग करें।
- गेहूं की सही समय पर बुवाई करें। बोने का उचित समय नवंबर माह है।

पर्ण अंगमारी रोग

यह रोग *बाईपोलारिस सोरोकिनिएना* नामक कवक द्वारा होता है। यह फफूंद बीज में या फसल के मलवे में जीवित रहता है। बुवाई के 7-8 सप्ताह बाद निचली पत्तियों पर पीले भूरे रंग के छोटे धब्बे पाए जाते है, जो बाद में बढ़कर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। इस रोग के लक्षण, नम और गर्म वातावरण में जब पौधे एक से डेढ़ महीने के होते हैं, तब अधिक दिखाई पड़ते हैं। पहले इसका आक्रमण निचली पत्तियों पर होता है और बाद में पूरे पौधे पर दिखते हैं। इसके प्रभाव से पत्तियों पर पीले भूरे रंग के छोटे-छोटे अंडाकार धब्बे बन जाते हैं। रोग बढ़ने पर कई धब्बे एक जगह मिलकर पूरी पत्ती को रोगग्रसित कर देते हैं। वातावरण में नमी के कारण इन धब्बों पर काला चूर्ण दिखाई देता है, जिसमें फफूंद के बीजाणु होते हैं, जो नम तथा गर्म मौसम में तेज हवा द्वारा उड़कर दूसरी पत्तियों या पौधों पर पहुंच जाते हैं एवं उन पर रोग उत्पन्न करते हैं। इसका प्रकोप बालियों एवं शूकों पर भी होता है। इस रोग के कवक खेत में फसल के अवशेषों तथा बीजों में साल भर जीवित रहते हैं। प्रभावित फसल दिखने में झुलसी हुई लगती है, इसलिए कुछ लोग इसे झुलसा रोग भी कहते हैं। इसकी वजह से दानों का वजन कम होता है, क्योंकि ये सिकुड़ जाते हैं।

पर्ण अंगमारी रोग

रोग प्रबंधन के उपाय

- बुवाई से पहले बीज को कार्बोक्सीन + थीरम (2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करें।
- रोगरोधी किस्में लगाएं व प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।
- टेबुकोनाजोल (1 मि.ली./लीटर पानी में) का छिड़काव करना चाहिए।
- बाली आने पर प्रोपीकोनाजोल (1 मि.ली./लीटर पानी में) का छिड़काव करें।
- फसल की कटाई के बाद फसल के अवशेषों को खेत में ही जला दें।

अनावृत कंडुआ रोग

अनावृत कंड या खुला कन्डुआ गेहूं का एक अत्यंत महत्वपूर्ण बीज-जनित रोग है। यह रोग, *अस्टिलेगो सिगेटम ट्रिटिसाई* नामक कवक द्वारा होता है। इस कवक के बीजाणु स्वस्थ पौधों के फूलों पर हवा द्वारा लाए जाते हैं, जो बनते हुए दानों पर संक्रमण करते हैं। यह कवक बीज के अंदर प्रसुप्तावस्था में रहता है, तथा ऊपर से बीज स्वस्थ दिखाई देता है। जब ऐसे बीज अगले मौसम में बोए जाते हैं, तो कवक बीज के अंकुरण के साथ पौधों के अंदर उगता है, तथा बाली बनते समय उसमें काला चूर्ण पैदा करता है। जब पौधे में बालियाँ आती हैं, तो उनमें दानों के स्थान पर काला चूर्ण बन जाता है, और कुछ समय पश्चात् पूरी बाली समाप्त हो जाती है एवं केवल रैचीस शेष बचती हैं। यह चूर्ण हवा द्वारा दूसरी बालियों पर पहुंच जाता है, और जब इन बालियों के बीजों को बोया जाता है, तो पौधे पर फिर काली चूर्ण युक्त बालियाँ आती हैं। कुछ किस्मों में सबसे ऊपरी पत्ती पीली पड़ने से रोगी पौधा पहचाना जा सकता हैं।

रोग प्रबंधन के उपाय

- स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज ही बोने चाहिए।
- बीज बोने से पहले, बीज में 2.5 ग्राम के हिसाब से कार्बोक्सीन + थीरम (37.5%) या कार्बेन्डाजिम से बीज को शोधित कर लेना चाहिए।

- मई-जून माह में बीज को पानी में 4 घंटे (सुबह 6 बजे से 10 बजे तक) भिगोने के बाद कड़ी धूप में अच्छी तरह सुखाकर अगले साल बोने के लिए भंडार में सुरक्षित रखा जा सकता है। पानी में भिगोने से बीज में पड़ा कवक क्रियाशील हो जाता है, जो कड़ी धूप में सुखाने पर मर जाता है। ऐसे बीज को अगले मौसम में बोने से रोग नहीं पनपता है।
- यदि बीज के लिए फसल बोई गई है, तो बाली निकलते समय उसका निरीक्षण करते रहना चाहिए तथा जैसे ही कन्डुआ ग्रस्त बालियां दिखाई दें, उन्हें किसी कागज की थैली से ढक कर पौधे को उखाड़ कर जला दें या मिट्टी में दबादें।

चूर्णिल फफूंदी (पाउडरी मिल्डयू) रोग

यह रोग, *इरीसीफी ग्रेमनीस* नामक फफूंद द्वारा लगता है। इसके लक्षण पत्तियों, बालियों व स्पाइकों पर सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई देते हैं। बाद में पत्तियों का रंग पीला व कत्थई होकर पत्ती सूख जाती है। यह रोग सर्वप्रथम पत्तियों की सतह पर सफेद चूर्ण के रूप में देखा जाता है। बाद में सफेद चूर्ण बदल कर लाल या भूरा हो जाता है। पौधों की वृद्धि एवं उपज प्रभावित होती है। रोग की उग्र अवस्था में यह सफेद चूर्ण पर्णछेद, तना, बाली तथा शूकों पर भी पाया जाता है। इस सफेद चूर्ण में फफूंदी का जाल और बीजाणु होते हैं। बाद की अवस्था में सफेद चूर्ण का रंग बदल कर भूरा या लाल भूरा हो जाता हैं। रोगी पौधों की पत्तियां सिकुड़ कर सूख जाती हैं, और पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

रोग प्रबंधन के उपाय

- प्रारंभिक लक्षण दिखने पर प्रोपीकोनाजोल (1 मि.ली./लीटर पानी में) का छिड़काव करें।
- रोग की उग्रावस्था में 12 से 15 दिन के बाद प्रोपीकोनाजोल का एक बार पुनः निर्धारित मात्रा में छिड़काव करें।
- रोगरोधी किस्में लगाएं।

जीवन की जड़ संयम की भूमि में जितनी गहरी जमती है और सदाचार का जितना जल दिया जाता है उतना ही जीवन हरा भरा होता है और उसमें ज्ञान का मधुर फल लगता है।

- दीनानाथ दिनेश

मृदा परीक्षण का महत्व एवं उपयोगिता

विवेक कुमार त्रिवेदी[1], नरेन्द्र[1], राजेन्द्र सिंह[1], देवाषीष गोलुई[1], कपिल आत्माराम चौबे[1] एवं सुधीर कुमार[2]

[1]मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग, [2]पादप कार्यिकी संभाग,
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में कृषि एवं कृषि से संबंधित उद्यमों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। देश में जहां वर्ष 1950-51 में खाद्यान का कुल उत्पादन 51 मिलियन टन था वहीं वर्ष 2015-16 में 253.16 मिलियन टन उत्पादन हुआ। अर्थात उत्पादन में पांच गुना वृद्धि हुई और इससे यह सिद्ध हो रहा है कि वर्तमान में उत्पादन में आशा के अनुकूल वृद्धि हो रही है। परंतु 2050 में भारत की आंकलित जनसंख्या लगभग 164 करोड़ हो जायेगी जिसके लिए हमें लगभग 450 मिलियन टन खाद्यान की आवश्यकता होगी। ऐसी स्थिति में हमें खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए अपने सीमित संसाधनों के साथ उत्पादकता बढ़ाने की आवश्यकता है।

फसल उत्पादन के लिए सबसे आवश्यक मिट्टी एवं पानी है। जिनका स्वस्थ रहना ही मनुष्य के स्वस्थ रहने का आधार है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए उत्पादन तो बढ़ रहा है, परंतु हमारी मिट्टी का स्वास्थ्य प्रतिदिन कमजोर होता जा रहा है। हम न केवल खाद्य पदार्थ व फसल उत्पादन के लिए अपितु पीने के पानी के लिए भी इस पर निर्भर रहते हैं। मृदा, पृथ्वी की जैव विविधता को बनाये रखने तथा जलवायु का नियंत्रण रखने में अहम भूमिका निभाती है। सीमित क्षेत्रफल से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से किसानों द्वारा उर्वरकों तथा रसायनों का अत्यधिक एवं असंतुलित अनुपात में प्रयोग मृदा स्वास्थ्य में कमी लाता है। ऐसी स्थिति में खेती के ऐसे उपायों की आवश्यकता है जिनसे बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण के साथ-साथ मृदा का स्वास्थ्य भी बना रहे। इसके लिए हमें सर्वप्रथम अंधाधुंध उर्वरकों तथा रसायनों के प्रयोग को रोकना होगा और समुचित मात्रा में आवश्यकतानुसार उर्वरकों तथा रसायनों का प्रयोग करना होगा। जिससे मृदा का स्वास्थ्य भी बना रहेगा और हमें अधिकाधिक उपज की प्राप्त भी हो सकेगी। यह तभी संभव है जब किसान अपने खेतों की मिट्टी को समय पर मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में लेकर आये और मृदा की जांच कराये और इसके आधार पर आवश्यकतानुसार उर्वरकों तथा रसायनों का प्रयोग करें।

मृदा परीक्षण का महत्व एवं उपयोगिता

मृदा परीक्षण, मृदा में पाये जाने वाले पोषक तत्वों की जानकारी के लिए अति आवश्यक है जिसके अभाव में किसान अंधाधुंध उर्वरकों का प्रयोग करता है। जिससे लागत, उत्पादन एवं मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। हमारे देश में उर्वरकों की उपलब्धता काफी कम है, जिसे हम दूसरे देशों से आयात करते हैं। अतः यह भी आवश्यक है कि हम उर्वरकों की उपलब्ध मात्रा समुचित एवं सावधानीपूर्वक तथा मृदा एवं फसल की आवश्यकतानुसार प्रयोग करें।

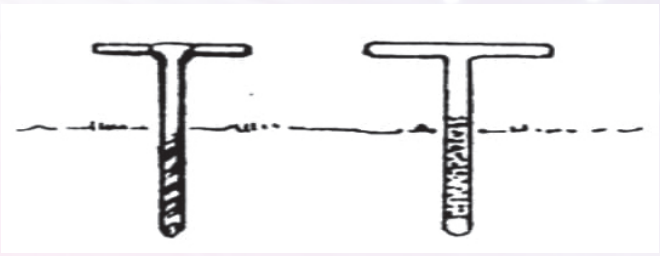

उर्वरकों की समुचित मात्रा का प्रयोग करने के लिए मृदा में उपलब्ध पोषक तत्व का ज्ञान होना अति आवश्यक है। इसके लिए फसल के बोने के पूर्व ही फसल को दिए जाने वाली उर्वरकों का निर्धारण मृदा परीक्षण के आधार

पर करा लेना चाहिए। मृदा परीक्षण वह रासायनिक प्रक्रिया है जिसे मृदा की जांच कर उसमें उपलब्ध पोषक तत्व के आधार पर पोषक तत्वों की पूर्ति की क्षमता का निर्धारण किया जाता है।

मृदा स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने बहुत सारी मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं को खुलवाया है। वर्तमान में मृदा परीक्षण पर सरकारें बहुत अधिक ध्यान दे रही हैं जिसके परिणामस्वरूप भारत में कुल मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं की संख्या 1244 हो गयी है। जिसमें से लगभग 1048 स्थिर एवं 196 चल मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं देश के विभिन्न प्रदेशों में कार्यरत है। इसके अतिरिक्त निजी उर्वरक कंपनियों द्वारा भी लगभग 84 मृदा परीक्षण प्रयोगाशालाएं कार्यरत है। इसके अतिरिक्त कृषि विज्ञान केंद्रों व राज्य कृषि विश्वविद्यालयों पर भी मृदा परीक्षण की सुविधाएं उपलब्ध हैं। अतः हम कह सकते हैं कि भारत में मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं का बहुत बड़ा जाल हैं जिसका उपयोग किसानों को करना चाहिए।

भारत सरकार ने फरवरी 2015 में किसानों की मृदा की जांच के लिए एक योजना की शुरुआत की है जिसे मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना के नाम से जाना जाता है। जिसमें किसानों को निःशुल्क मृदा नमूना की जांच कर मृदा स्वास्थ्य कार्ड दिया जाता है। इस कार्ड में 12 मापदंडों की जांच कर मृदा में उनकी उपलब्धता तथा उनकी पूर्ति के लिए आवश्यक उर्वरकों की मात्रा की संस्तुति की जाती है।

मृदा का नमूना लेते समय ध्यान रखने योग्य सावधानियां

एक हेक्टेयर खेत की उर्वरकता की जांच हेतु 15-20 जगह से यादृच्छिक विधि द्वारा नमूना एकत्र कर लेंगे। खुरपी की सहायता से 0-15 सेमी. तक गहराई की मिट्टी लेगे। यदि खुरपी की सहायता से नमूना एकत्र करेंगे तो (V) आकार का गड्ढा बनाकर गड्ढे के किनारे से 0-15 सेमी की गहराई से मिट्टी एकत्र करेंगे। यदि खेत के किनारे पर पेड़ है तो उस स्थान को छोड़कर नमूना एकत्र करेंगे और मेंड़ से 1 से 1.5 मीटर दूरी छोड़कर नमूना एकत्र करेगें। इन सारे (15-20) नमूनों को आपस में अच्छी तरह पॉलीथीन पर मिलाना चाहिए और आधा भाग निकाल देना चाहिए। यह प्रक्रिया तब तक दोहराते रहना चाहिए जब तक कि नमूना लगभग 500 ग्राम का रह जाये।

इस नमूने को एक थैली में एकत्र करना चाहिए यदि यह नमूना गीला है तो इसे छाया में सुखा लेना चाहिए और थैली में एकत्र कर लेना चाहिए। थैली पर किसान का नाम, गांव का नाम, विकास खंड का नाम, जिले का नाम, नमूना लेने की तारीख व खेत का नंबर स्पष्ट शब्दों में अंकित कर देना चाहिए।

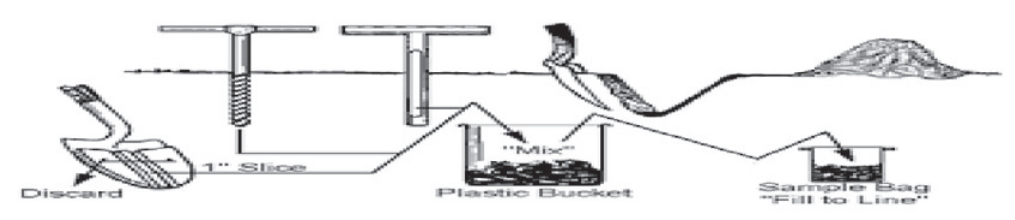

नमूना पत्र

किसान का नाम ..... ग्राम .....
पोस्ट ..... विकास खंड ..... जिला .....
प्रदेश ..... सिंचाई का साधन .....
पिछली फसल ..... बोयी जाने वाली फसल .....

इस प्रकार किसान भाई मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाकर उचित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग कर फसलों की भरपूर उपज प्राप्त कर सकते हैं। इस विद्या को अपनाने पर लागत कम होने के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण भी एक सीमा तक कम किया जा सकता है।

भरपूर पैदावार एवं बेहतर मृदा स्वास्थ्य हेतु एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

वीरेन्द्र कुमार एवं खजांची लाल

जल प्रौद्योगिकी केंद्र

भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

खाद्यान्न फसलों की अधिक उपज देने वाली बौनी, अर्ध-बौनी और सकंर किस्मों की निरन्तर खेती में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग का मृदा, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही उर्वरकों की बढ़ती कीमतों व इनके कम उत्पादन की वजह से लघु और सीमांत किसान बुरी तरह से प्रभावित हो रहे हैं। इस समस्या के निराकरण हेतु और मृदा को स्वस्थ बनाए रखने के लिए फसलों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की सलाह दी जाती है। टिकाऊ फसल उत्पादन हेतु एकीकृत पोषण प्रबंध के अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों के साथ पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य सभी स्रोतों का प्रयोग किया जाता है। इन स्रोतों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, मुर्गी खाद, वर्मी कम्पोस्ट, फसल अवशेष प्रबंध और जैविक उर्वरक प्रमुख हैं। ये सभी स्रोत पर्यावरण हितैषी और इनसे मुख्य पोषक तत्वों के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व भी पौधों को धीरे-धीरे व लंबे समय तक उपलब्ध होते रहते हैं। वर्तमान परिवेश को देखते हुए मृदा को प्रदूषित होने से बचाना अत्यंत आवश्यक है जिससे मृदा की उर्वराशक्ति का नुकसान न हो सके। इसके लिए फसलों में प्रयोग किए जाने वाले रासायनिक उर्वरकों का अनुचित व असंतुलित मात्रा में बिना सूझ-बूझ के प्रयोग में कमी लाने की आवश्यकता है। अन्यथा मृदा में उपस्थित लाभकारी जीवाणुओं और सूक्ष्म जीव-जन्तुओं की संख्या और क्रियाओं पर प्रतिकूल असर पडेगा। जिसके परिणामस्वरूप मृदा में होने वाली विभिन्न अपघटन तथा विघटन इत्यादि क्रियाओं पर भी प्रतिकूल असर पड़ेगा। जिससे पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों का बहुत बड़ा हिस्सा पौधों को प्राप्त नहीं हो सकेगा। अतः फसलों से अच्छी गुणवता की अधिक पैदावार लेने के लिए रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग की आवश्यकता है। इसके लिए फसलों में रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य स्रोतों के प्रयोग की भी पर्याप्त संभावनाएं हैं। अत्यधिक नाइट्रोजन और फॉस्फोरस उर्वरकों के प्रयोग करने के बावजूद हमारे फसलोत्पादन में वृद्धि नहीं हो पा रही है। इसका स्पष्ट कारण मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों का अत्यधिक दोहन, सघन फसल प्रणाली व जीवांश की कमी के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी है। रासायनिक उर्वरकों मुख्यतः नाइट्रोजन का अल्पव्ययी प्रयोग किया जाए ताकि इससे होने वाले दुष्परिणामों से बचा जा सके।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन से तात्पर्य

समन्वित पोषण प्रबंधन से तात्पर्य यह है कि पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले सभी संभव स्रोतों जैसे रासायनिक उर्वरक, जैविक खादें, जैविक उर्वरक, फसल अवशेष इत्यादि का कुशलतम समायोजन कर फसलों को संतुलित पोषण दिया जाए। इनसे मुख्य पोषक तत्वों के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्व भी पौधों को धीरे-धीरे व लंबे समय तक प्राप्त होते रहते हैं। सघन फसल प्रणाली के अंतर्गत फसलें मृदा से जितने पोषक तत्वों का अवशोषण करती है, उनकी क्षतिपूर्ति मृदा उर्वरता बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग जैविक खादों, जैविक उर्वरकों, फसल अवशेषों हरी खादों, कम्पोस्ट एवं वर्मी कम्पोस्ट के साथ अच्छे परिणाम देता है। अतः भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने हेतु फसलों में रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक खादों एवं जैविक उर्वरकों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। इस तरह रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक व अनुचित प्रयोग को कम करने हेतु एकीकृत पोषण प्रबंधन की सलाह दी जाती है। यह एक किफायती, पर्यावरण हितैषी और टिकाऊ उपाय है। अतः फसलोत्पादन की एक टिकाऊ व्यवस्था बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम

करते हुए पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति के अन्य विकल्पों को पोषक तत्व प्रबंधन में शामिल करने की आवश्यकता है। समन्वित पोषण प्रबंधन अपनाने से न केवल खाद्य व पोषण सुरक्षा सुनिश्चित होगी, बल्कि इससे विविधापूर्ण खेती को भी बढ़ावा मिलेगा। जिससे मिट्टी की उर्वरता में भी वृद्धि होगी। साथ ही विषैले कीटनाशकों व यूरिया के इस्तेमाल में कमी आयेगी। दुर्भाग्यवश समन्वित पोषण प्रबंधन तकनीक पर्याप्त प्रचार-प्रसार के अभाव में किसानों में अधिक लोकप्रिय नहीं हो पा रही है।

क्यों आवश्यक है फसलोत्पादन में एकीकृत पोषण प्रबंधन ?

- खेती में उत्पादन लागत कम करने हेतु।
- समन्वित पोषण प्रबंधन द्वारा उर्वरकों की उपयोग दक्षता को बढाया जा सकता है।
- किसानों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा में सुधार लाना।
- पर्यावरण के संरक्षण हेतु।
- भूमि में जीवांश पदार्थ व कार्बनिक कार्बन की मात्रा बढ़ाने के लिए।
- टिकाऊ फसलोत्पादन हेतु एवं खेती से अधिक लाभ लेने हेतु।
- धान-गेहूं फसल चक्र वाले क्षेत्रों में मृदा उर्वरता बनाए रखने हेतु एवं प्राकृतिक संसाधनों के दक्षतापूर्ण उपयोग हेतु।
- गुणवता व स्वास्थ्यवर्धक फसल उत्पादन हेतु।
- मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में सुधार हेतु व उसे बरकरार रखना।
- रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतें व इनके कम उत्पादन की वजह से।
- कुल उत्पादन व प्रति इकाई क्षेत्र कृषि भूमि की उत्पादकता बढ़ाने हेतु।
- वर्तमान परिवेश में भूमि की बढ़ती अम्लीयता, क्षारीयता और लवणीयता की समस्या को कम करने के लिए।
- भूमि की जलधारण क्षमता बढ़ाने हेतु।
- समन्वित पोषण प्रबंधन में प्राकृतिक संसाधनों का उचित प्रयोग होता है। भविष्य में इन साधनों की उपलब्धता अत्यंत सीमित होगी।
- जैविक खादों, जैविक उर्वरकों, फसल अवशेषों, कम्पोस्ट एवं वर्मीकम्पोस्ट के प्रयोग द्वारा मृदा की दीर्घकालीन उर्वरता में वृद्धि।
- समन्वित पोषण प्रबंधन द्वारा भुखमरी, भूख जनित बीमारियों और कुपोषण आदि से मानव जाति को बचाने के लिए उच्च पोषक गुणवता वाले खाद्य पदार्थों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराना जिससे मानव स्वास्थ्य ठीक बना रहे।
- समन्वित पोषण प्रबंधन का केंद्र बिन्दु मृदा को स्वस्थ व जीवित रखते हुए मृदा में उपस्थित लाभकारी जीवाणुओं की जैविक क्रियाओं को बढ़ावा एवं प्रोत्साहन देना है।
- आधुनिक खेती में रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतों और उनके कम उत्पादन से सीमांत और लघु किसान अत्यधिक परेशान हो रहे हैं, यानि रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करना।
- समन्वित पोषण प्रबंधन द्वारा औद्यानिक उत्पादों की गुणवता में सुधार होने के कारण इनका आसानी से निर्यात किया जा सकेगा। जिससे हमें बहुमूल्य विदेशी मुद्रा अर्जित करने में मदद मिलेगी।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के प्रमुख घटक

हरी खाद:- हरी खाद का प्रयोग करने से मृदा में कार्बन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश जैसे मुख्य तत्वों के अतिरिक्त सभी द्धितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा व उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। हरी खाद के लिए मुख्यतः दलहनी फसलों का प्रयोग किया जाता है। इनमें सनई, ढैंचा, लोबिया, मूंग, ग्वार, उरद व सोयाबीन प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त कुछ खरपतवारों व बहु-उद्देशीय पौधों की पत्तियों जैसे सुबबूल को भी हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इन फसलों से हरी खाद बनाने में मात्र दो माह का समय लगता है। ये सभी फसलें अल्प अवधि वाली व तेजी से बढ़ने वाली हैं। इन फसलों को

फूल आने से पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल की मदद से या हैरो से मिट्टी में दबा दिया जाता है। हरी खाद की फसल को लगभग 10-15 दिन का समय सड़ने में लगता है। इसके बाद खेत को तैयार करके अगली फसल की बुवाई/रोपाई कर दी जाती है। हरी खादों के प्रयोग से खेत में 30-35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर आसानी से सुरक्षित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त फॉस्फोरस, पोटाश व सूक्ष्म पोषक तत्वों का भंडार भी बढ़ाया जा सकता है। बहुउद्देशीय पेड़-पौधों जैसे सुबबूल, नीम व ग्लीरीसीडिया की पत्तियां एवं टहनियों का प्रयोग भी हरी खाद के रूप में किया जा सकता है। किसान भाइयों को दो-तीन साल में एक बार हरी खाद की फसलों को अवश्य उगाना चाहिए। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति तो बढ़ती ही है, साथ ही मृदा स्वास्थ्य में भी सुधार होता है। परिणामस्वरूप अगली फसलों का उत्पादन भी अच्छा होता है। इस प्रकार भूमि की जलधारण क्षमता तथा फसलों में जल की उपलब्धता को भी बढ़ाया जा सकता है।

मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ने के फलस्वरूप मृदा में रासायनिक व जैविक क्रियाएं तेजी से होने लगती हैं। परिणामस्वरूप मृदा में विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। हरी खादों का प्रयोग लवणीय व क्षारीय भूमियों में भी सुधारक का काम करता है। ढैंचा नमक व सोडियम दोनों को सहन कर लेता है। हल्की भूमि में सनई तथा भारी मृदा, ऊसर भूमि व जल भराव वाली मृदाओं में ढैंचा की हरी खाद अच्छी मानी जाती है। जबकि ऊसर भूमि में ढैंचा का 45 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।

फसलों में हरी खाद देने के निम्नलिखित लाभ हैं:-

- हरी खाद के प्रयोग से मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है जिसका मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।
- हरी खाद की फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन का मृदा में स्थिरीकरण करती है। जिसके परिणामस्वरूप पौधों के लिए नाइट्रोजन व अन्य पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है।
- हरी खादों की जड़ें मृदा में पर्याप्त गहराई तक जाकर पोषक तत्वों का अवशोषण करती है। हरी खादों वाली फसलों को मृदा में दबाने और उनके सड़ने-गलने के उपरांत अवशोषित पोषक तत्व मृदा की ऊपरी परतों में आ जाते हैं। जहां से फसलें इन पोषक तत्वों का आसानी से अवशोषण कर लेती हैं।
- हरी खादों का प्रयोग करने से मृदा में लगभग 30-35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 4-5 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 15-20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर उपलब्ध हो जाते है। इसके अतिरिक्त हरी खादें मृदा में मैग्नीशियम, सल्फर, जस्ता, तांबा, मैगनीज़ व आयरन की उपलब्धता को भी बढ़ाती है।
- हरी खादों का प्रयोग करने से मृदा के कार्बन: नाइट्रोजन अनुपात में भी सुधार होता है।
- क्षारीय, लवणीय व लवणीय क्षारीय मृदाओं में धान की अच्छी पैदावार हेतु हरी खादों का प्रयोग अपेक्षित है। क्योंकि हरी खादों के विघटन से कार्बनिक अम्लों का निर्माण होता है। जिससे मृदा में अनुपलब्ध कैल्शियम की उपलब्धता बढ़ जाती है। साथ ही इन मृदाओं का पी.एच. मान भी कम हो जाता है।
- हरी खादों का प्रयोग करने से मृदा की जलधारण क्षमता में सुधार होता है। इस तरह सिंचाई जल की भी बचत होती है।
- फसल चक्र में हरी खादों के प्रयोग से अग्रवर्ती फसलों की पैदावार में भी संतोषजनक बढ़ोतरी होती है, क्योंकि इन खादों के अवशेष प्रभाव का अगली फसल को भी लाभ पहुंचता है जिससे पौधों को पोषक तत्व लंबे समय तक उपलब्ध होते रहते हैं।

इस प्रकार फसलों में हरी खादों का प्रयोग करने से नाइट्रोजन की मात्रा में 30 प्रतिशत की कमी की जा सकती है। हरी खाद की फसलों जैसे ढैंचा को 50 दिन की अवस्था में मिट्टी में दबा देना चाहिए। इसके लिए मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इन फसलों को मिट्टी में दबाने के लिए डिस्क हैरो का प्रयोग किया जा सकता है। हरी खाद की फसलों को जमीन में दबाने के एक

सप्ताह बाद धान की रोपाई या 15 दिनों बाद अन्य फसलों की बुवाई कर देनी चाहिए। अग्रवर्ती फसलों में दी जाने वाली फॉस्फोरस की संपूर्ण मात्रा को हरी खाद की बुवाई के समय प्रयोग कर देना चाहिए। इसके बाद फसलों में फॉस्फोरस डालने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

फसल अवशेष प्रबंधन:- साधारणतः किसान फसल उत्पादन में फसल अवशेषों के योगदान को नजर अन्दाज कर देते हैं। उत्तर पश्चिम भारत में धान-गेहूं फसल चक्र के अंतर्गत फसल अवशेषों का प्रयोग आम बात है। कृषि में मशीनीकरण और बढ़ती उत्पादकता की वजह से फसल अवशेषों की अत्यधिक मात्रा उत्पादित होती जा रही है। फसल कटाई उपरांत दाने निकालने के बाद प्रायः किसान भाई फसल अवशेषों को जला देते हैं। पंजाब, हरियाणा और पश्चिम उत्तर प्रदेश के साथ-साथ देश के अन्य भागों में भी यह काफी प्रचलित है। फसल अवशेषों के जलाए जाने से निकलने वाले धुंए से पर्यावरण प्रदूषण तो बढ़ता ही है। साथ ही धुंए की वजह से हृदय और फेफड़े से जुड़ी बीमारियां भी बढ़ती है। धुंए में कार्बन डाईआक्साइड एवं कार्बन मोनोआक्साइड जैसे हजारों हानिकारक तत्व मिले हो सकते हैं। जिनमें व्यक्ति की सेहत को बुरी तरह से नुकसान पहुंचाने की क्षमता होती है। फसल अवशेषों का खेती में प्रयोग करके मृदा में कार्बनिक कार्बन की मात्रा में सुधार किया जा सकता है। इसी प्रकार सब्जियों के फल तोड़ने के बाद इनके तने, पत्तियां और जड़ें खेत में रह जाती हैं। जिनको जुताई करके मृदा में दबाने से खेत के उपजाऊपन में सुधार होता है। फसल अवशेषों में खलियां, पुआल, भूसा व फार्म अवशिष्ट प्रमुख हैं। नीम की निंबौली एवं नीम की खली से पोषक तत्व तो मिलते ही हैं। साथ ही विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीटों को भी नष्ट करती है। यद्यपि फसल अवशेष का पोषक तत्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान है, परंतु अधिकांशतः फसल अवशेषों को खेत में जला दिया जाता है या खेत से बाहर फेंक दिया जाता है। फसल अवशेष पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने के साथ-साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक क्रियाओं पर भी अनुकूल प्रभाव डालते हैं। फसल अवशेष क्षारीय मृदाओं के पी.एच. को कम करके उन्हें खेती योग्य बनाने में भी सहायता करते हैं।

तालिका -1 फसल अवशेषों में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा (प्रतिशत में)

फसल अवशेष	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटाश की मात्रा
धान	0.58	0.23	1.66
गेहूं	0.49	0.25	1.28
ज्वार	0.40	0.23	2.17
मक्का	0.59	0.31	1.31
बाजरा	0.65	0.75	2.50
अरहर	1.10	0.58	1.28
चना	1.19	0.18	1.28
अन्य दालें	1.60	0.15	2.0
गन्ना	0.35	0.04	0.50

जैविक उर्वरक:- फसलों का अच्छा उत्पादन लेने में जैविक उर्वरकों का प्रयोग लाभदायक होता है। इनमें राइजोबियम कल्चर, एजोटोवैक्टर, एजोस्पाइरिलम, पी.एस.बी., अजोला, वैसीकुलर माइकोराइजा, नील हरित शैवाल, बायो एक्टीवेटर आदि प्रमुख हैं। टिकाऊ खेती एवं मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए जैविक उर्वरकों का प्रयोग अति आवश्यक है। जैविक उर्वरक कम खर्च पर आसानी से उपलब्ध हैं तथा इनका प्रयोग भी बहुत सुगम हैं। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से विभिन्न फसलों की उपज में 10 से 25 प्रतिशत तक की वृद्धि देखी गयी है। इनको एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का मुख्य अवयव माना जाता है। राइजोबियम व एजोटोबैक्टर वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन (78 प्रतिशत) को यौगिकीकरण द्वारा भूमि में जमा करके पौधों को उपलब्ध कराते हैं। पी.एस.बी. मृदा में अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित कर पौधों के लिए फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाते हैं। जिससे अगली फसलों को भी लाभ पहुंचता है। इसके अतिरिक्त जीवाणु उर्वरक पौधों की जड़ों के आस-पास (राइजोस्फीयर) वृद्धिकारक हारमोन्स उत्पन्न करते हैं जिससे पौधों की वृद्धि व विकास पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। जैविक उर्वरकों का चयन फसलों की किस्म के अनुसार ही करना चाहिए। रासायनिक उर्वरकों, शाकनाशियों व कीटनाशियों के साथ जैविक उर्वरकों का कभी भी प्रयोग नहीं करना चाहिए। जैविक उर्वरक प्रयोग करते समय पैकेट के ऊपर उत्पादन तिथि, उपयोग की अंतिम तिथि व संस्तुत फसल का नाम अवश्य देख लें। प्रयोग करते समय जैविक उर्वरकों को धूप व गर्म हवा से बचाकर रखना चाहिए। विभिन्न प्रकार के जैविक उर्वरकों के तैयार पैकेट सभी राज्यों में स्थापित कृषि विश्वविद्यालयों के सूक्ष्म जैव विज्ञान विभागों, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान स्थित सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग व कृषि विज्ञान केंद्रों से भी निःशुल्क प्राप्त किए जा सकते हैं।

जैविक खाद:- देश में प्रयोग की जाने वाली जैविक खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट, मुर्गी खाद, पशुओं के नीचे का बिछावन, सूअर एवं भेड़-बकरियों की खाद तथा गोबर गैस खाद प्रमुख हैं। साधारणतः गोबर एवं कम्पोस्ट की एक टन खाद से औसतन 5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 2-5 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 5 कि.ग्रा. पोटाश मिल जाती है। परंतु दुर्भाग्यवश हम इनका 50 प्रतिशत ही प्रयोग कर पाते हैं। अधिकतर गोबर का प्रयोग किसान भाई उपलों के रूप में जलाने के लिए करते हैं।

तालिका 2: वर्मी कम्पोस्ट में उपस्थित विभिन्न पोषक तत्व

पोषक तत्व	मात्रा
नाइट्रोजन	1.0-3.0 प्रतिशत में
फॉस्फोरस	0.50-0.67 प्रतिशत में
पोटाश	0.30-0.75 प्रतिशत में
जिंक	75-223 पीपीएम
कॉपर	7.3-24.3 पीपीएम
मैंगनीज	82-219 पीपीएम
लौह	2062-9684 पीपीएम

फसल चक्र

उचित फसल चक्र अपनाकर भी मृदा का उपजाऊपन बढ़ाया जा सकता हैं। फसल चक्र में खाद्यान्न फसलों के साथ दलहनी फसलों को भी उगाना चाहिए। अधिक गहरी जड़ों वाली फसलों के बाद कम गहरी जड़ों वाली फसलों को उगाना चाहिए। दलहनी फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन का मृदा में स्थिरीकरण बढ़ाती हैं। उचित फसल चक्र अपनाने से भूमि की जलधारण क्षमता तथा फसलों में जल की उपलब्धता को भी बढ़ाया जा सकता है। साथ ही समृद्ध एवं टिकाऊ खेती के लिए मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा भी बढ़ती है। आजकल उत्तर-पश्चिम भारत में धान-गेहूं फसल चक्र के स्थान पर लोबिया-आलू-ग्रीष्मकालीन मक्का, बेबी कॉर्न - अगेती आलू -पछेती गेहूं- मूंग, बेबी कॉर्न - अगेती मटर- पछेती गेहूं - मूंग, बेबी कॉर्न - अगेती सरसों - पछेती गेहूं - मूंग व मक्का -गेहूं- मूंग फसल चक्र किसानों के बीच काफी लोकप्रिय हो रहे हैं। इन फसल चक्रों के अंतर्गत किसानों को वर्ष भर आमदनी मिलती रहती है। इसके अतिरिक्त उनकी घरेलू आवश्यकताओं जैसे अनाज, दलहन, तिलहन और चारा की भी पूर्ति होती रहती है। साथ ही फसल चक्र में

मूंग की फसल लेने से मृदा स्वास्थ्य और गुणवता में भी सुधार होता है। विविधीकृत फसल चक्र कीट तथा व्याधियों के प्रकोप को भी कम करते हैं।

रासायनिक उर्वरक

रासायनिक उर्वरक समन्वित पोषण प्रबंधन तकनीक का प्रमुख घटक हैं। रासायनिक उर्वरकों के अनुचित व असंतुलित प्रयोग का मृदा उर्वरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। देश के अनेक कृषि क्षेत्रों में पौधों के लिए तीन मुख्य पोषक तत्वों नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश का प्रयोग एक अनिश्चित अनुपात में किया जा रहा है। हमारे देश में गत वर्षों में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश का प्रचलित अनुपात 9:3:1 का रहा है जो की बहुत ही असंतुलित है। जबकि फसलोत्पादन में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश के प्रयोग का आदर्श अनुपात 4:2:1 रखना चाहिए। फसलोत्पादन में मुख्यतः नाइट्रोजन प्रदान करने वाले रासायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग करने से मृदा में कुछ द्वितीयक व सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती जा रही है जिसके परिणामस्वरूप मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही फसलों की गुणवता और पैदावार में भी गिरावट आ रही है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश पोषक तत्वों का फसल उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। साथ ही फसल को इनकी अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। अतः इन तत्वों की संतुलित एवं अनुमोदित मात्रा न दें तो उत्पादन में भारी गिरावट आ जाती है। इस तरह सूक्ष्म पोषक तत्व बहुत कम मात्रा में पौधों द्वारा लिए जाते है। परंतु विभिन्न पादप शारीरिक क्रियाओं में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी व अधिकता दोनों ही हानिकारक है। यदि मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में हैं तो इनकी अतिरिक्त मात्रा देने से फसल को कोई विशेष लाभ नहीं होता है।

तालिका 3: अरहर की उपज पर एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का प्रभाव

उपचार	उपज (कि.ग्रा./हे.)		
	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	औसत
संस्तुति मात्रा (18:46:20:20 एन.पी.के.एस./हे.)	1080	1024	1052
संस्तुति मात्रा का 50 प्रतिशत	845	802	823
संस्तुति मात्रा का 50 प्रतिशत + गोबर की खाद	995	945	970
संस्तुति मात्रा का 50 प्रतिशत + गोबर की खाद + राइजोबियम	950	988	1013
संस्तुति मात्रा का 50 प्रतिशत + गोबर की खाद + राइजोबियम + पी.एस.बी.	1040	988	1013

निष्कर्ष

तेजी से बढ़ते शहरीकरण, औद्योगीकरण व आधुनिकीकरण की वजह से खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल दिनोंदिन घटता जा रहा है। भविष्य में इसके बढ़ने की संभावना नगण्य है। इस संबंध में समन्वित पोषण प्रबंधन तकनीक अपनाकर उत्पादकता व उत्पादन बढ़ाने में सहायता मिल सकती है। समन्वित पोषण प्रबंधन तकनीक द्वारा बेहतर स्वास्थ्य प्रबंधन, खाद्यान्न उत्पादन व अधिक कृषि आय सुनिश्चित की जा सकती है।

वॉम (न्यूट्रिलिंक): एक बहुआयामी जैव उर्वरक

एम. एस. राठी, संगीता पॉल, के. अन्नपूर्णा एवं सीमा सांगवान

सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

माइकोराईजा एक फफूंद है। सर्वप्रथम माइकोराईजा शब्द का प्रयोग सन् 1885 ई. में जर्मन वनस्पति विज्ञानी ए.बी. फ्रैंक ने किया था, जिसका अर्थ है फफूंद जड़। इस शब्द का प्रयोग सामान्यतः पादप जड़ एवं कवक तंतु के मध्य सहयोग के लिए किया जाता है। माइकोराईजा जीवित पौधे के ऊपर अपनी संख्या बढ़ाता है। माइकोराईजा के कवक तंतु पौधे की जड़ एवं मृदा के बीच कवकजाल बनाकर विभिन्न पोषक तत्वों, विशेषता फॉस्फोरस एवं अन्य गौण पोषक तत्वों जैसे जिंक, तांबा, लौह, कोबॉल्ट तथा मोलीबिडनम आदि की पौधों की जरूरत को पूरी करता है। सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा कृषि, बागवानी और वानिकी फसलों की उत्पादकता एवं गुणवता में वृद्धि हेतु प्रदूषण रहित वॉम जीवाणु खाद तैयार किया जाता है। इस जीवाणु खाद में वॉम के स्पोर तथा वॉम से संक्रमित जड़ें बालू एवं मिट्टी के 1:1 अनुपात में मिश्रित होती हैं।

वृहत् स्तर पर वॉम का उत्पादन एवं प्रयोग

प्रकृति स्थल के बाहर एक बाड़े का निर्माण करें, इसको कम्पोस्ट एवं केंचुए की खाद से भरें एवं पूर्व समूहकृत पौध को इस मिश्रण में लगाएं। समय बीतने के साथ, घास बाड़े के अंदर फैल जाती है। फलस्वरूप माइकोराईजा (ए. एम.) भी फैलती है एवं इसके अंदर जनन करती है। सर्दी में घास के सूखने पर किसान को सांद्र ए.एम. मिश्रण मिल जाता है।

वॉम (न्यूट्रिलिंक) के प्रयोग से लाभ

वॉम (न्यूट्रिलिंक) के प्रयोग से फॉस्फोरस, जिंक, कॉपर, कोबॉल्ट, मैग्नीशियम तथा लौह आदि तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि हो जाती है। वॉम परोक्ष रूप से भूमि की उर्वराशक्ति को बढ़ाता है। इसके प्रयोग से सूत्रकृमि से होने वाली हानियाँ कम हो जाती हैं। इसका प्रयोग फसलों को पादप रोगों (फफूंदी एवं विषाणु जनित) से बचाता है। इसके प्रयोग से जड़ों के आस-पास सूक्ष्मजीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्रिया तेजी से होती है। भूमि संरचना में सुधार होता है जिससे भूमि की पानी धारण करने की क्षमता बढ़ जाती है। वॉम का प्रयोग रासायनिक उर्वरकों की उपयोगिता को बढ़ाता है। वॉम का प्रयोग शुष्क मौसम में पौधों में पानी की कमी से होने वाली हानि को कम करता है। माइकोराईजा के प्रयोग से जड़ों के अवशोषण क्षेत्र में वृद्धि हो जाती है जिससे पौधे सुदूर क्षेत्र में उपलब्ध पोषक तत्वों को आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। इसका प्रयोग नमक के दबाव को कम करता है जिससे पौधों की वृद्धि अच्छी होती है। इसके प्रयोग से मृदा क्षरण एवं अपघटन नियंत्रित होता है।

मात्रा एवं प्रयोग विधि

एक वर्ष अथवा इससे कम समय में तैयार होने वाली फसलों के लिए 3-5 कि.ग्रा. प्रति एकड़ वॉम का प्रयोग करना चाहिए। इससे अधिक मात्रा में प्रयोग करने से कोई हानि नहीं है बल्कि अपेक्षाकृत लाभ ही होता है। वॉम कल्चर को बीज बोने से पहले खेत में समान रूप से छिड़क दें अथवा हल के पीछे बीज के साथ डालें। इसका प्रयोग पौध द्वारा लगाई जाने वाली सभी फसलों जैसे धान, टमाटर, बैंगन, मिर्च, गोभी तथा प्याज आदि में आसानी से किया जा सकता है। पौधशाला में क्यारी (600 वर्ग मी.) बनाने के बाद वॉम की उचित मात्रा समान रूप से बिखेर दें। तदोपरांत बीज डालकर ऊपर की मिट्टी (2-3 सेंमी.) के साथ अच्छी प्रकार मिला दें और मिट्टी को समतल कर दें। राख, गोबर की खाद या

कम्पोस्ट की पतली परत समान रूप से बिछा दें और नर्सरी में आवश्यकतानुसार समय पर पानी डालते रहें।

पौधों को पॉलीथीन की थैली में तैयार करना है तो वॉम की उचित मात्रा (20-25) ग्रा. मिट्टी में मिलाकर पॉलीथीन की थैलियों में भरें और थैली के बीच में कलम लगाकर पानी दें। जब तक कलम में कलियां निकलें, समय पर आवश्यकतानुसार पानी देते रहें। बड़े पौधों में 50-100 ग्रा. प्रति पौधा की दर से वॉम का प्रयोग करें। यह क्रिया वर्ष में एक बार अवश्य दोहराएं।

इस टीके को खेत की मिट्टी, गोबर की खाद एवं केंचुए की खाद में 1:20 के अनुपात में मिलाकर पौध की पोषक जड़ों के पास लगाना चाहिए। गन्ना, आलू तथा पौध द्वारा तैयार होने वाली फसलों के लिए माइकोराईजा के बार-बार प्रयोग की संस्तुति की जाती है। बागवानी और वानिकी फसलों में वॉम कल्चर का प्रयोग (100-200 ग्रा. प्रति पौधा) पौधे की आयु के अनुसार करें। इसे प्रतिवर्ष जुलाई अगस्त एवं फरवरी मार्च के महीने में पौधे की सहायक जड़ों के पास खुदाई कर डालना चाहिए। यह टीका कॉफी, चाय, पपीता, नारियल एवं खजूर आदि में लाभकारी होता है।

वॉम कल्चर का रखरखाव एवं सावधानियां

- वॉम कल्चर को धूप तथा अधिक गर्मी से बचाकर रखें।
- वॉम कल्चर के भंडारण के लिए रेफ्रिजरेटर का प्रयोग करें। जहां पर यह सुविधा न हो वहां ऐसे स्थान, जहां पूरे दिन पेड़ की छाया रहती हो, वहां एक फीट गहरा गड्ढा खोद कर वॉम कल्चर को उसमें दबा दें और ऊपर से पानी का छिड़काव करें।
- वॉम कल्चर को कीटनाशकों तथा रासायनिक उर्वरकों के साथ न मिलाए।
- वॉम कल्चर को हाथों से न रगड़ें।

वृहत् स्तर पर माइकोराईजा (वॉम) टीके का उत्पादन

माइकोराईजा कवक जाल का कारनेशन पर प्रभाव

माइकोराईजा सहित एवं माइकोराईजा रहित टमाटर के पौधे

माइकोराईजा का तैयार टीका

बरानी क्षेत्रों के लिये मोटे अनाज पोषण क्रांति के वाहक

कमलेश कुमार सिंह[1] एवं वर्षा सिंह[2]

[1]कृषि अर्थशास्त्र संभाग भा.कृ.अ.सं. नई दिल्ली 110012

[2]दीन दयाल शोध संस्थान, कृषि विज्ञान केंद्र, मझगवां, सतना, म.प्र.

मोटे अनाज, छोटे दाने वाली धान्य फसलों को कहा जाता है। इनको अंग्रेजी में मिलेट कहा जाता है । जिसके अंतर्गत छोटे - छोटे परंतु पौष्टिक दानों वाली कई फसलें शामिल हैं। इन सभी फसलों के दाने का आकार इनके पौधे के आकार की अपेक्षा छोटा होता है अत: इन्हें छोटे या मोटे या लघु धान्य के नाम से जाना जाता है। परंपरागत खाद्य श्रृंखला में मोटे अनाज का विशेष महत्व होता था, इसी वजह से हमारी खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ पोषण सुरक्षा का पुख्ता इंतजाम था। यह खाद्यान्न उच्चकोटि के पोषण के भंडार होने के कारण कुपोषण व

बाजरा

खाद्यान्न सुरक्षा के लिये उपयुक्त हैं। यह फसलें बदलते जलवायु परिवेश, फसल सुरक्षा, मृदा स्वास्थ्य, भूमि का कटाव रोकने, खाद्यान्न व पोषण सुरक्षा के साथ-साथ पशुओं के लिये पोषणयुक्त चारो के साथ-साथ हमारी परंपरागत खेती के भविष्य को सुरक्षित रख सकती है।

भारत में परंपरागत तौर पर मोटे अनाज में बाजरा, ज्वार, रागी आदि की प्रमुख तौर पर खेती होती है। इनके अतिरिक्त कुटकी, कोदो, सांवा, कंगनी, चीना और अन्य फसलों की भी खेती होती है। कृषि मंत्रालय ने 2018 को ज्वार, बाजरा जैसे मोटे अनाज के 'राष्ट्रीय वर्ष' के तौर पर मनाने का निर्णय लिया है। देर से ही सही, लेकिन सरकार का यह कदम पोषक तत्त्वों से भरपूर इन अनाजों की अहमियत दर्शाता है। देश में हरित क्रांति का बिगुल बजने से दूसरी फसलों पर खासा जोर दिया गया, लेकिन मोटे अनाज की लगातार अनदेखी होती चली गई। सरकार ने संयुक्त राष्ट्र से भी मौजूदा वर्ष को मोटे अनाज के 'अंतरराष्ट्रीय वर्ष' के रुप में घोषित करने का आग्रह किया था। ऐसी पहल का मकसद पोषक तत्त्वों से भरपूर इन अनाजों की ओर ध्यान आकृष्ट करना और इनके उत्पादन एवं उपभोग को बढ़ावा देना है।

बुंदेलखंड और बघेलखंड के लिये वरदान

पोषण विशेषज्ञ अब मोटे अनाज को 'न्यूट्री सीरियल्स' या सुपर फूड्स (पोषण तत्त्वों से भरपूर अनाज) कहना पसंद करते हैं और कुपोषण और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों के भोजन में इन्हें शामिल करने की सलाह

ज्वार

देते हैं। देश में खाद्य सुरक्षा को मजबूती देने, कुपोषण एवं भूख मिटाने में चावल एवं गेहूं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, लेकिन बाजरा आदि मोटे अनाज आवश्यक पोषक तत्वों की भरपाई कर पोषण सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं।

मोटे अनाज में अहम सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं, जिनमें से कुछ गेहूं या चावल में मौजूद नहीं होते हैं। मोटे अनाज पहले शुष्क एवं अर्ध-शुष्क प्रदेशों में प्रमुख खाद्यान्न हुआ करते थे, जिनकी जगह बाद में चावल और गेहूं जैसे छोटे अनाज ने ले ली। गेहूं और चावल का उपभोग और उत्पादन बढ़ाने में सरकार ने भी योगदान दिया। पहले तो सरकार ने इनके लिए उचित मूल्य पर बाजार मुहैया कराया और बाद में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के जरिये अत्यधिक सस्ती कीमतों पर इनकी आपूर्ति सुनिश्चित की। दूसरी तरफ मोटे अनाज उपेक्षा के शिकार हो गए और इन पर खास ध्यान नहीं दिया गया। मोटे अनाज का भोजन के साथ ही चारा, जैव-ईंधन और शराब उत्पादन के लिए कच्चे माल के तौर पर भी इस्तेमाल किया जाता है। हालांकि अब राहत की बात यह है कि मोटे अनाज को लेकर नजरिया बदल चुका है। अधिक गुणवता वाले प्रोटीन, एमिनो एसिड के संतुलन एवं कच्चे रेशे (क्रूड फाइबर) की अधिक मात्रा और आवश्यक खनिजों जैसे लौह, जस्ता और फॉस्फोरस आदि की मौजूदगी के कारण चावल एवं गेहूं के मुकाबले इन्हें अधिक वरीयता दी जा रही है। इस तरह, इनके उपभोग से बड़े पैमाने पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी दूर की जा सकती है, खासकर महिलाओं एवं बच्चों के स्वास्थ्य के लिहाज से मोटे अनाज खास लाभदायक हैं।

खून की कमी, (एनीमिया), पेलेग्रा और विटामिन-बी कॉम्पलेक्स की कमी मोटे अनाज से पूरी की जा सकती है। भाग-दौड़ की इस जिंदगी में मोटापा और मधुमेह जैसी बीमारियों में भी मोटे अनाज लाभदायक हो सकते हैं, क्योंकि इनमें ग्लूटेन नहीं होता है। ये रेशे और एंटीऑक्सिडेंट से युक्त होते हैं। मोटे अनाज के साथ सबसे अच्छी बात यह है कि इनके लिए बड़े स्तर पर सिंचाई की जरूरत नहीं होती है। गैर-सिंचित, कम उपजाऊ और छोटे रकबे में भी इनकी खेती आसानी से की जा सकती है। विपरीत मौसमी परिस्थितियों का भी इन पर असर नहीं होता है और जलवायु परिवर्तन झेलने में भी ये सक्षम होते हैं। इनकी पैदावार के लिए उर्वरकों एवं कीटनाशकों पर भी अधिक रकम खर्च नहीं करनी होती है। यही नहीं, कम पैदावार या फसल खराब होने का भी खतरा नहीं रहता है। केंद्र के साथ अब कई राज्य सरकारें मोटे अनाज को बढ़ावा देने और उनका उत्पादन बढ़ाने के लिए योजनाएं तैयार कर चुकी हैं। नेशनल इंस्टीट्यूशन फॉर ट्रांसफॉर्मिंग इंडिया (नीति आयोग) की सिफारिश पर केंद्र ने वर्तमान राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के तहत मोटे अनाज प्रभाग को 'न्यूट्री-सीरियल्स' पर उप-अभियान (सब-मिशन) के रुप में परिवर्तित करने का निर्णय लिया है। मोटे अनाज पर विशेष ध्यान देने के लिए यह कदम उठाया गया है। इतना ही नहीं, मोटे अनाज के लिए बाजार मुहैया कराने और पीडीएस के जरिये इनकी आपूर्ति के लिए भी जल्द ही योजनाएं आने वाली हैं। कई राज्यों में मध्याह्न भोजन योजना में भी मोटे अनाज शामिल किए जाने की संभावना है।

ओडिशा ने तो 'मिलेट मिशन' का गठन किया है और अगले फसल सत्र से उचित एवं लाभकारी मूल्य पर मोटे अनाज खरीदने का भी निर्णय लिया है। कर्नाटक सरकार सूखा प्रभावित क्षेत्रों में इन्हें बढ़ावा दे रही है और इनके लिए विपणन सहायता भी मुहैया करा रही है। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कर्नाटक सरकार मोटे अनाज उत्पादकों और मोटा अनाज आधारित स्वास्थ्य खाद्य उद्योग के बीच संबंध स्थापित करने की दिशा में भी काम कर रही है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल, तेलंगाना, उत्तराखंड, झारखंड, मध्य प्रदेश और हरियाणा जैसे राज्यों में भी इनकी खेती जोर पकड़ रही है। इनकी खेती को बढ़ावा नहीं देने की कोई वजह भी नहीं है। देश में कुपोषण मिटाने और जन स्वास्थ्य सुधारने में मोटे अनाज की अहम भूमिका हो सकती है। जैविक खेती को सरकार बढ़ावा दे रही है। मोटे अनाजों की खेती में जैविक खेती के सभी तत्व मौजूद हैं।

पुष्टिकारक मोटे अनाज

पोषण के लगभग सभी मापदंडों से, यह अनाज चावल या गेहूं से आगे है। गेहूं या चावल के मुकाबले इनके अंदर खनिज पदार्थ की मात्रा ज्यादा है। इनमें से प्रत्येक अनाज में चावल या गेहूं की अपेक्षा ज्यादा रेशा रहता है। किसी-किसी अनाज में तो चावल से 50 गुना, रागी में चावल के मुकाबले 30 गुना ज्यादा कैल्शियम होता है और बाकी अनाज की किस्मों में कम से कम दोगुना कैल्शियम रहता है। लौह तत्वों के मामले में, काकुन और कुटकी इतने ज्यादा परिपूर्ण है कि चावल उनके मुकाबले कहीं नहीं टिकता है। जहां हम बीटा कैरोटीन नामक सूक्ष्म तत्व पुष्टिकारक दवाओं व गोलियों में ढूढ़ते हैं, अनाज की ये किस्में इसमें भी भरपूर हैं। यहां तक कि चावल में यह महत्वपूर्ण सूक्ष्म-पुष्टिकारक तत्व नहीं है। इन अनाजों की पौष्टिकता को देखते हुए इन अनाजों को मोटे अनाजों की जगह पोषक अनाज कहना ज्यादा उचित होगा। तालिका-1 में प्रमुख मोटे अनाजों का संघटन प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 1: अनाजों में अद्भुत पुष्टिकारक तत्वों की मात्रा प्रति 100 ग्राम

फसल /पुष्टिकारक	प्रोटीन (ग्रा.)	रेशा (ग्रा.)	खनिज(ग्रा.)	लौह तत्व (मि. ग्रा.)	कैल्शियम (मि. ग्रा)
चौलाई	15.30	9.60	3.10	22.40	255.14
बाजरा	10.6	1.30	2.30	16.90	38.00
रागी	7.30	3.60	2.70	3.90	344.00
चीना	12.5	2.20	1.90	0.80	14.00
काठू	15.00	18.00	4.00	155.0	64.00
कंगनी	12.30	3.60	2.70	12.90	31.00
चावल	6.80	0.20	0.60	0.70	10.00
गेहूं	11.80	1.20	1.50	5.30	41.00

लगन और योग्यता एक साथ मिलें तो निश्चय ही एक अद्वितीय रचना का जन्म होता है।

- मुक्ता

भारत के खाद्यानों व उनकी पौष्टिक तत्वों की सुरक्षा में पादप रोग सूत्रकृमि एक अवरोधक

हरेन्द्र कुमार, पंकज, उमा राव एवं जगन लाल

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

पादप परजीवी सूत्रकृमि एक प्रकार के कीट/कृमि वर्ग में आते हैं जो फल, फूल, सब्जियों, तिलहन, दलहनी व धान्य फसलों में व अन्य कई प्रकार के पेड़ पौधों को आर्थिक दृष्टि से क्षति पहुंचाते हैं। इन परजीवियों की संख्या 10-50 कृमि प्रति ग्राम मिट्टी हो सकती है। सूत्रकृमि मिट्टी में जड़ों पर व पौधों के ऊपरी भागों जैसे तना, पत्तियों व बीज आदि में लगकर हानि पहुचाते हैं। सूत्रकृमि बहुभक्षी व एकभक्षी दो प्रकार के होते हैं।

सामान्यतः सूत्रकृमि जड़ों की परत पर चिपकर भोजन करते हैं परंतु कुछ सूत्रकृमि जड़ों के अंदर कोशिकाओं में जाकर भोजन करते हैं व जड़ों को क्षति पहुचाते हैं। सूत्रकृमि अपना जीवन चक्र मिट्टी में ही रहकर पूरा करते हैं। सूत्रकृमि, पादप रोग वाहक का भी काम करते हैं। मिट्टी में रहने वाले अन्य जीवाणु व विषाणु व पादप भोजी फफूदों के साथ मिलकर अधिक तीव्रता से फसल पर दुष्प्रभाव पैदा करते हैं।

सूत्रकृमि, संसार के खाद्यान्न उत्पादन में लगभग 12.5 प्रतिशत की हानि करते हैं। भारत जैसे गर्म जलवायु के देश में यह उत्पादन क्षति 18-20 प्रतिशत तक हो सकती हैं। यह सत्य है कि सूत्रकृमि रोग द्वारा फसल उत्पादन में हानि, सूत्रकृमि की जनसंख्या, मिट्टी की किस्म व फसल की प्रजाति पर भी निर्भर करती है। इसी वजह से कभी-कभी टमाटर, भिन्डी व बैंगन आदि के फसल उत्पादन में लगभग 40-50 प्रतिशत की हानि हो जाती है। (तालिका-1) विश्व भर में सूत्रकृमि रोग से फसल उत्पादन हानि का रुपयों में मूल्यांकन करें तो 150 बिलियन डॉलर अथवा 9000/ अरब रुपयों की हानि होती है। (तालिका-2) जिससे हम समझ सकते हैं कि सूत्रकृमि रोग से उत्पाद हानि आर्थिक स्थिति पर अधिक प्रभाव डालती है।

भारत में सूत्रकृमि का फैलाव व फसल में क्षतिदेह क्षमता के आधार पर जड़गांठ सूत्रकृमि रोग प्रमुख है। यह अनाज, साग, सब्जियों व फलों की फसलों को अधिक हानि पहुंचाता हैं जिससे किसान को आर्थिक क्षति का सामना करना पड़ता है। गेहूं व धान भारत की प्रमुख खाद्यान्न फसलें हैं। गेहूं उत्पादन में अधिक हानि पहुंचाने वाला धान्य पुटटी सूत्रकृमि (*हैटेरोडेरा एवीनी*) एक प्रमुख सृत्रकृमि है।

गेहूं में पुट्टी सूत्रकृमि से मौल्या रोग होता है। यह सूत्रकृमि उत्तरी भारत में गेहूं, जौ व जई की फसलों में मौल्या रोग उत्पन्न करके हानि पहुंचाता है। इसका विस्तार राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश तक है। इस कृमि का अधिक प्रकोप राजस्थान के जयपुर, अलवर व सीकर आदि जिलों में बलूई दोमट मिट्टी में उगने वाली फसलों को 20-25 प्रतिशत उपज में हानि पहुंचाता है। यह गेहूं की फसल का प्रमुख हानिकारक कृमि है। इसके समय से रोकथाम के उपाय करने चाहिए।

गेहूं में पुट्टी सूत्रकृमि व खेत में मौल्या रोग

तालिका 1: भारत में आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण फसलों की उपज में पादप परजीवी सूत्रकृमियों द्वारा अनुमानित हानि/क्षति

क्र. स.	फसलें	फसलों के हानिकारक सूत्रकृमि	उत्पादन मिलियन टन	उत्पादन में हानि %	मूल्य/मैट्रिक टन रु.	आर्थिक हानि मिलियन रु.
1	केला	*मेलाइडोगाइन जवानिका, एम. इनकागनिटा, रोडोंफोलस सिमलिस, हैटरोडेरा ओराईजिकोला*	1.20 (12.04)	12.30	20.00	2960.00
2.	उड़द, मूंग	*एम. इनकागनिटा, एम. जवानिका एच. केजानि, रोटायलैक्यूलास रेनीफार्मिस*	0.13 (1.31)	8.90	13.00	162.0
3.	बैंगन	*एम. इनकागनिटा*	0.84 (8.39)	16.67	10.000	140.30
4.	चना	*एम. इनकागनिटा, एम. जवानिका आर. रेनीफार्मिस, प्रेटाईलेक्स थोरनेइ*	0.52 (5.17)	18.30	25.000	2379.00
5.	मिर्च	*एम. इनकागनिटा*	0.11 (1.08)	12.85	15.000	210.00
6.	नींबू	*टायलैक्यूलस सेमिपेनीट्रान्स*	0.05 (0.50)	12.60	15.000	945.00
7.	कपास	*आर. रेनीफार्मिस, एम. जवानिका, एम. इनकागनिटा,*	0.19 (1.85)	7.63	16.750	234.50
8.	अदरक	*एम. इनकागनिटा, प्रेटाईलेक्स स्पेसिज*	0.03 (0.30)	14.50	22.500	90.0
9.	मूंगफली	*एम. इनकागनिटा, एम. जवानिका*	0.65 (6.50)	21.60	13.659	1911.00
10.	भिन्डी	*एम. इनकागनिटा,*	0.34 (3.43)	14.10	10.000	480.00
11.	अनार	*एम. इनकागनिटा*	0.05 (0.50)	17.30	30.000	270.00
12.	धान	*एम. ग्रेमीनीकोला, एम. ओराईजिकोला एफलेंकाइडिस बेसेई, डिटीलेन्कस ऐनगेंस्टस*	8.44 (84.39)	10.54	53.704	779.30
13.	टमाटर	*एम. इनकागनिटा*	0.81 (812)	27.21	10.000	204.00
14.	गेहूं	*एनगुइना टिरिटीसाई, एच. एवनी*	0.93	2.00	5.230	97.28

तालिका 2: विभिन्न देशों में पादप परजीवी सूत्रकृमियों द्वारा फसलों की पैदावार में हानि/क्षति

क्र. स.	देश	सूत्रकृमिय से हानि (यू एस डालर)	फसलें	हानिकारक सूत्रकृमि	रोग नियंत्रण
1.	आस्ट्रेलिया	400 मिलियन	सभी फसलें	सभी सूत्रकृमि	कृमिनाशी और आई.पी.एम.
2.	चीन	120 मिलियन, 3 बिलियन	सोयबीन, चीड	*हैटेरोडेरा ग्लेसिनेस बर्षाएफलेंक्स जाईलोफिलस*	कृमिनाशी
3.	डेनमार्क	17.4 मिलियन,	जौ	सिरीयल सिस्ट सूत्रकृमि *(हैटेरोडेरा एवनी)*	कृमिनाशी और आई.पी.एम.
4.	यूरोप	28.6 बिलियन (2008 से 2015)	चीड	*बर्षाएफलेंक्स जाईलोफिलस*	कृमिनाशी और आई.पी.एम.
5.	भारत	40.3 मिलियन	आर्थिक दृष्टि से मुख्य फसलें	आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्पेसिज	कृमिनाशी और आई.पी.एम.
6.	नार्वे	3-15 मिलियन	अनाज	सिरीयल सिस्ट सूत्रकृमि *(हैटेरोडेरा एवनी)*	आई.पी.एम और कृमिनाशी
7.	साउथ अफ्रीका	216 मिलियन	आर्थिक दृष्टि से मुख्य फसलें	महत्वपूर्ण सूत्रकृमि स्पेसिज	कृमिनाशी और आई.पी.एम
8.	अमेरिका	10 बिलियन	आर्थिक दृष्टि से मुख्य फसलें	आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्पेसिज	कृमिनाशी, बायोलोजिकल आई.पी.एम
		1.268 बिलियन	सोयबीन	सोयबीन सिस्ट सूत्रकृमि *(गलाईसिनेमेक्स)*	बायोलोजिकल और आई.पी.एम
9.	यू.के.	70 मिलियन	आलू	आलू सिस्ट सूत्रकृमि *(ग्लोबोडेरा स्पेसिज)*	बायोलोजिकल और आई.पी.एम
पूरे विश्व की आई.पी.एम. पूर्ण क्षति		157 बिलियन1	सभी फसलें	महत्वपूर्ण फाइटोपेरिसटिक सूत्रकृमि	कृमिनाशी और आई.पी.एम

आलू की खेती में राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय अनुशासन (कोरनटाईन) के अंतर्गत आलू का सुनहरी पुट्टी/कोष्ठक सूत्रकृमि, (*ग्लोबोडेरा रोस्टोकेंनेन्सिन*) के महत्व को समझना होगा। यह सूत्रकृमि नीलगिरी पहाड़ी, तमिलनाडु एरिया में आलू की फसल को अत्यधिक हानि पहुंचाता है। इसे रोकने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कुछ नियम बनाए गए हैं जिससे इस सूत्रकृमि का फैलाव दूसरे राज्यों में ना हो सके। इस रोग में आलू के पौधों की बढ़वार कम होना, पत्तियां पीली पड़ जाना, कंद छोटे व कम निकलना आदि लक्षण पाए जाते हैं। आलू की उपयोगिता पूरे विश्वभर में है। यह गरीबों का आसान व सस्ता और पौष्टिक आहार है इससे कुपोषण जैसी सामाजिक समस्या को कम किया जा सकता है। आलू नगदी फसलों में आता है। रोगी आलू के चिप्स बनाने पर काले-काले धब्बे दिखाई देते हैं। जिससे किसानों को फसल उत्पादन में हानि से आय-व्यय पर असर पड़ता है।

आलू में जड़-गांठ सूत्रकृमि रोग

धान की फसल में *हिर्षमैनियेला ओराइजी* सूत्रकृमि मेन्टेक रोग, *एफलेंकाइडिस बेसेई* सूत्रकृमि श्वेत शिखर रोग, व (*मेलाइडोगाइन ग्रेमीनीकोला*) जड-गांठ रोग फैलाकर धान की पैदावर में अत्यधिक क्षति पहुंचाते है। धान की फसल में जड़-गांठ सूत्रकृमि से फसल को 60-70% हानि हो सकती है। यह सूत्रकृमि ऊपरी गंगा क्षेत्रों में बलुई दोमट मिट्टी होने से ज्यादा रोग फैलाता है और फसल उत्पादन में ज्यादा हानि होती है।

जड-गांठ रोग (*मेलाइडोगाइनो ग्रेमीनीकोला*) रोग से ग्रसित धान

केले की फसल में जड़-गांठ सूत्रकृमि (*मिलाईडोगाइनी इन्कोगनिटा*) रोग लगने से फसल की उपज में 30.9% की हानि हुई इस सूत्रकृमि रोग से पौधे की ऊंचाई व पौधे की मोटाई में कमी देखी गई। पत्तियों की लंबाई व चैड़ाई भी कम हो जाती है। केले छोटे व कम मोटे बने और फलों में कार्बोहाइट्रेड व एस्कार्बिक अम्ल की कमी होने से फलों में खादय गुणों का अनुपात बिगड़ जाता है। फसल पकने की अवधि भी कम हो जाती है। केले में (*रोडोंफोलस सिमलिस*) सूत्रकृमि श्याम शिखर रोग उत्पन्न करता है। इस रोग में पौधे सड़कर गिर जाते हैं व सूख जाते हैं। यह सूत्रकृमि दक्षिण भारत में सक्रिय हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए केले की फसल में कार्बोफ्यूरान-3 जी/4 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से फसल में डालने से इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

जड़-गांठ सूत्रकृमि रोग से ग्रसित केले का पौधा

गाजर की फसल में जड़-गांठ सूत्रकृमि (*मिलाईडोगाइनी इन्कोगनिटा*) रोग से फसल उपज में कमी व गाजर की गुणवता भी अच्छी नहीं होती। इस रोग की रोकथाम के

लिए फसल में जैविक पदार्थ से उपचार किया जाता है जिससे गाजर में विटामिन-ए, बीटा कैरोटीन की मात्रा बढ़ जाती है एवं फसल उत्पादन में वृद्धि होती है। जैविक पदार्थ उपचार से गाजर की फसल में सूत्रकृमि नियंत्रण के साथ उपज में संख्यात्मक सुधार होता है।

जड़-गांठ सूत्रकृमि रोग से ग्रसित गाजर

टमाटर की खेती में जड़-गांठ रोग - जड़-गांठ सूत्रकृमि रोग सभी सब्जियों के फसल उत्पादन को क्षति पहुंचाता है परंतु खेत में इस सूत्रकृमि की अत्यधिक संख्या हो तो टमाटर की पैदावार को भारी क्षति पहुंचाता है। फसलों की गुणवता और पौष्टिक गुणों में भी कमी आ जाती है। टमाटर में विटामिन सी, लाइकोपिन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम और जिंक जैसे पौष्टिक तत्व होने से इसका स्वास्थ्य संबंधित महत्व बढ़ जाता है। टमाटर में प्रतिऑक्सीकारक जैसे गुणों के होने से कैंसर जैसी अनेक रोगों को रोकने में सहायक है। अतः यह सूत्रकृमि रोग उपरोक्त टमाटर के पौष्टिक गुणों को प्रभावित करता है और टमाटर का स्वस्थ व अच्छे फल उत्पादन न होने से बाजार में अधिक कीमत नहीं मिलती है और किसान को भारी क्षति होती है।

टमाटर की जड़ों में जड़-गांठ रोग

नींबू सूत्रकृमि (*टायलैक्यूलस सेमिपेनीट्रान्स*) अंगूर व नींबू की जड़ों में धीमा उखरा/क्षयरोग उत्पन्न करके पौधों को धीरे-धीरे सुखा देता है। यह सूत्रकृमि पूरे भारत में सक्रिय है।

गुर्दानुमा सूत्रकृमि (*रोटीलेकुलस रेनीफॉर्मिस*):- यह सूत्रकृमि फसल उपज में हानि करने के आधार पर दूसरे स्थान पर है। यह कृमि नगदी फसलें जैसे - कपास, दलहन, सोयाबीन, सूरजमुखी, सब्जियां व अरंडी आदि के उत्पादन को हानि पहुंचाता है। यह गर्म मौसम में अधिक सक्रिय रहता है और पूरे भारत में पाया जाता है। फसल में क्षति, खेत में कृमि की संख्या पर निर्भर करती है। यदि मिट्टी में कृमि की संख्या ज्यादा है तो फसल उत्पादन में ज्यादा हानि होगी। यह कृमि पौधों की जड़ों में आधे अंदर और आधे बाहर रहकर जड़ों में पानी व लवण सोखने वाली कोशिकाओं को क्षति पहुंचाते हैं। इससे पौधों में खाद्य पदार्थ की कमी के लक्षण उत्पन्न होते हैं और पौधे मुरझाए से नजर आते हैं। पौधों में पीलापन, सूखापन, पत्तियां छोटी रहना व फूल व फलों का आकार छोटे रहना व पौधों में फुटाव कम होना आदि लक्षण पौधों में पानी व लवण की कमी को दर्शाते हैं। यह कृमि विपरीत परिस्थितियों में भी जीवित रह सकता है।

जड़ों पर *रोटायलैक्यूलास रेनीफार्मिस* सूत्रकृमि

संसार में खाद्य वितरण और गुणवता के संबंध में अधिक समस्याएं हैं। खाद्य गुणवता संबंधी मुददों में विश्वभर में खनिज पदार्थों की कमी में वृद्धि बढ़ती चिन्ता का विषय है। इससे गरीब लोग अधिक पीड़ित हैं। संसार में पोषक तत्वों की कमी संबंधित बीमारियां, पर्याप्त पोषण के बिना, विशेष रूप से लोगों में खनिजों की कमी से आती हैं। आज की जीवनशैली के पौष्टिक अध्ययन ने आज के सबसे प्रचलित घातक रोग जैसे- मधुमेह, हृदय रोग, स्ट्रोक/अटैक, मोटापा, उच्च रक्त चाप, धब्बेदार, हड्डियों का क्षय आदि रोग हो रहे हैं।

आज के समय में आधुनिक कृषि व न्यूनतम कृषि में इन सभी मुख्य बिंदुओं को ध्यान में रखना होगा एवं किसी भी संवेदनशील सूत्रकृमि रोग की रोकथाम के लिए एक प्रभावी समेकित प्रणाली को अपनाना होगा जो सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरण के लिए भी लंबे समय तक उपयोगी रहेगी।

कोई भी नई पद्धति अपनाएं उसमें दूरदृष्टि होनी चाहिए अन्यथा उसका परिणाम विफलता की तरफ ले जा सकता है। सूत्रकृमि का जैविक/अजैविक तत्वों के साथ परस्पर संबंध के बारे में उचित जानकारी के उपरांत, सूत्रकृमि नियंत्रण करने के एक आसान विकल्प को अपनाया जा सकता है। कुछ अच्छी कृषि पद्धतियां जैसेः-

- उचित जैविक खाद्य पदार्थ को खेतों में डालना।
- समय पर खेतों में फसल अवशेषों की सफाई कराना।
- अच्छे व स्वस्थ बीजों की बुवाई कराना।
- समय पर फसलों में निराई-गुड़ाई कराना।
- सही समय पर फसलों में सिंचाई कराना।
- फसल बुवाई क्षेत्र के आधार पर कार्बनिक खाद व पोषक तत्वों को डालने का समेकित प्रबंधन करना चाहिए।

उपरोक्त सभी उपाय करने से फसलों में सूत्रकृमि रोग व अन्य रोगों को कम किया जा सकता है और फसल उपज में समयानुसार वृद्धि हो सकती है एवं खर्चा/लागत व आमदनी का अनुपात भी अच्छा किया जा सकता है।

अनुराग, यौवन, रूप या धन से उत्पन्न नहीं होता। अनुराग, अनुराग से उत्पन्न होता है।

- प्रेमचंद

सूत्रकृमियों द्वारा फसलों में क्षति एवं प्रबंधन

अर्चना उदय सिंह

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग,
भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110 012

सूत्रकृमि विज्ञान के अंतर्गत सूत्रकृमियों का जीवन चक्र, पोषण, वयवहार, दिखने वाले लक्षण एवं इनके द्वारा फसलों में क्षति तथा इस क्षति को रोकने के लिए नियंत्रण प्रबंधन के उपाय आते हैं। सूत्रकृमि छोटे, पतले, खंड रहित एवं धागे की तरह के आकार होते हैं। सूत्रकृमि द्विलिंगी तथा इनके शरीर में कूटगुहा होती है। सूत्रकृमि उपांग रहित तथा पौधों की कोशिकाओं से अपना पोषण मुख में उपस्थित शुक्रिका अथवा शूलनाशक संरचना के द्वारा करते हैं। ये सूक्ष्मदर्शी जीव हर प्रकार के वातावरण में पाए जाते हैं। सभी ऋतुओं में विभिन्न प्रकार की मिट्टी में सूत्रकृमि पाए गए हैं। विश्व में इनकी लगभग 1,00,000 जातियां पाई जाती हैं। ये पोषण के लिए जीवाणु, फफूंदी, विषाणु अथवा अन्य सूक्ष्म जीवों पर निर्भर रहते हैं। इनकी बहुत सारी जातियां पौधों, कीट, जंतुओं तथा पक्षियों पर एक परजीवी के रुप में पाई जाती हैं। एक पौधे पर कई प्रकार के सूत्रकृमियों का संक्रमण हो सकता है। प्रायः परजीवी सूत्रकृमि की लंबाई 2 मि.मी. तथा व्यास 0.05 मि.मी. से कम होती है। इनको नंगी आँखों से देखना संभव नहीं है।

सूत्रकृमि का रुप

आर्थिक महत्त्व

सूत्रकृमि का वितरण हमारे देश के सभी राज्यों में है। हमारे देश में सर्वप्रथम दास गुप्ता (1962) ने दिल्ली में विभिन्न सब्जियों में 60% की क्षति का आकलन किया था। भट्टी तथा जैन ने (1971) भिण्डी में 91%, टमाटर में 46% तथा बैंगन में 27% की वार्षिक हानि बताई है। डॉ. गौड ने (1973) में बहुत सी फसलों में भारी क्षति का अनुमान लगाया था। डॉ. डी. प्रसाद ने मूंगफली एवं सोयाबीन की फसलों पर सूत्रकृमियों द्वारा 35% क्षति का अनुमान लगाया और 1993 से इसका वैज्ञानिक प्रकाशन शुरू किया गया।

ये पौधों की जड़ों एवं बाहर से भी पोषण लेते हैं। इनको जड़ों में प्रवेश करने के आधार पर अर्ध अंतर्जीवी एवं पूर्ण अंतर्जीवी भी कहते हैं। इनको दो भागों में बाँटा गया है।

(I) भूमिगत परजीवी (II) भूमि के ऊपर के परजीवी

(I) भूमिगत परजीवी

जड़गांठ सूत्रकृमि - मेलोइडोगाइनी

ये प्रायः हर प्रकार की फसल में पाए जाते हैं। ये सूत्रकृमि विस्तृत परपोषी क्षेत्र में आने वाले प्राणियों में आते हैं। ये फल, सब्जियाँ, तिलहन, अनाज, दलहन, औषधि तथा फूलों वाली फसलों में बहुतायत में मिलते हैं। ये 15^0-30^0 सेल्सियस पर बालू तथा हल्की मिट्टी में अधिक विकसित होते हैं। विभिन्न प्रकार की जातियों में विभिन्न प्रकार के लक्षण पाए जाते हैं। जड़गांठ सूत्रकृमि की विभिन्न जातियां द्वारा अलग-अलग तरह की गांठें बनाती हैं। गांठों का आकार पौधों की किस्मों पर भी

निर्भर करता है। ग्रसित पौधों की जड़ों में दरार पड़ने से फफूंदी, विषाणु एवं अन्य जीवाणुओं के आक्रमण से जड़ें सड़ जाती हैं एवं अंत में पौधा मर जाता है।

गुर्दाकार सूत्रकृमि - रोटाइलेंकुलस

इस जाति में नर और मादा अलग-अलग होते हैं। मादा का जड़ के बाहर फूल कर गुर्दे का आकार लेने की वजह से इसे गुर्दाकार सूत्रकृमि कहते हैं। ये सब्जियों, फलों और दलहनी फसलों में अर्ध अंतर्जीवी की तरह पाए जाते हैं। ये पौधों की जड़ों से पोषण लेते हैं। इनका जीवन चक्र 20-25 दिन में पूर्ण हो जाता है। एक फसल में कई पीढ़ी बन जाती हैं। अगर इनकी संख्या 2 सूत्रकृमि/ग्राम मिट्टी पाई जाए तो, ये सूत्रकृमि फसल को बहुत क्षति पहुंचाते हैं। सूत्रकृमि द्वारा बनाई गई जगहों पर जीवाणु एवं विषाणु का आक्रमण अधिक होता है। ये दलहनों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण को भी प्रभावित करते हैं।

अनाजपुट्टी सूत्रकृमि - *हेटेरोडेरा एवेनी*

इसके नर और मादा में भिन्नता पाई जाती है। यह सूत्रकृमि हमारे देश में सर्वप्रथम राजस्थान में पाया गया था। परंतु अब यह पंजाब, दिल्ली, हरियाणा, जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और बिहार में अधिक मिलता है। नर का आकार इल्लीनुमा होता है। विकास के बाद मादा जड़ से बाहर निकल आती है। मरते समय मादा अपने ऊपर अंडों को घेरते हुए गोलाकार नींबू के आकार में पुट्टी बना लेती है। एक ऋतु में एक पीढ़ी पूरी हो जाती है। ये पुट्टी के रूप में बहुत दिन तक जीवित रहते हैं। मिट्टी में 2 अंडे/ग्राम ही क्षति के लिए काफी हैं। पौधों का पीलापन, बौनापन तथा शाखाएं कम होना ही इसके लक्षण है। बालियां कम तथा असमय निकलना भी इसी के कारण होता है। ऐसी बालियों में बहुत कम दाने लगते हैं।

अरहर पुट्टी सूत्रकृमि - *हेटेरोडैरा केजेनी*

यह सूत्रकृमि दलहनी फसलों का मुख्य परजीवी है। ये सूत्रकृमि तिलहन फसल को भी संक्रमित करते हैं। द्वितीय स्तर के शिशु पौधों में प्रवेश करते हैं। विकसित होकर मादा थोड़ी बाहर आ जाती है तथा एक जिलेटनी कवच में अंडे देती है। मरते समय अंडे अंदर रहते हुये एक पुट्टी बना जाती हैं। इस सूत्रकृमि का 3-4 हफ्ते में जीवन चक्र पूरा हो जाता है। एक फसल में कई पीढ़ी बन जाती है। फसल में फलियों का विकास रुक जाता है। दलहन की फसल में भारी मात्रा में क्षति होती है। मध्य प्रदेश में

सोयाबीन फसल में इस सूत्रकृमि की वजह से बहुत क्षति होती है।

आलू का पुट्टी सूत्रकृमि - ग्लोबोडैरा

यह सूत्रकृमि सोलेनेसी कुल की जातियों में विशेष रूप से एक परजीवी की भूमिका निभाता है। यह हमारे देश के दक्षिणी भागों में विशेषतः नीलगिरी और कोडईकैनाल की पहाड़ियों में मिलता है। द्वितीय स्तर का शिशु पौधों की जड़ों में प्रवेश करता है तथा विकास के बाद मादा पुट्टी के रूप में परिवर्तित हो जाता है। ये पुट्टियां आलू की फसल की जड़ों में भी चिपक जाता हैं तथा बिना कुछ खाए कई वर्षों तक जीवित रहती हैं। पौधे पीले, छोटे तथा अविकसित रह जाते हैं। फसल पैबंदनुमा दिखाई देती है। बाद में ये पुट्टियां मिट्टी में गिर जाती हैं। अगली फसल से पहले ये पुट्टियां फट जाती हैं तथा द्वितीय स्तर के शिशु निकल कर जड़ों को संक्रमित करते हैं। इनमें *ग्लोबोडैरा रोस्टोकाइनैन्सिस* तथा *ग्लोबोडेरा पैलीडा* मुख्य जातियां हैं।

मेदक सूत्रकृमि - रेडोफेलिस

प्रायः यह सूत्रकृमि नम और उष्ण वातावरण में अधिक मिलता है। इसकी लगभग 375 जातियां विशेषकर उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में मिलती हैं। यह सूत्रकृमि बागानी फसलों एवं मसाले वाली फसलों जैसे नारियल, केला, पान, पाम, हल्दी, अदरक, सुपारी तथा काली मिर्च आदि में बहुत क्षति पहुंचाता है। काली मिर्च की फसल में यह स्लौविल्ट नामक रोग फैलाता है। केरल और कर्नाटक इसके अधिक प्रभाव वाले क्षेत्र हैं।

नींबू कुल के सूत्रकृमि - टाईलैन्कुलस

नींबू वर्गीय फसलों में *टाइलैन्कुलस सैमीपैनीट्रान्स* नामक सूत्रकृमि मुख्यतः प्रधान भूमिका निभाता है। नींबू में स्लौडिक्लाइन रोग का मुख्य कारण यही सूत्रकृमि है। द्वितीय स्तर के शिशु जड़ों पर आक्रमण करते हैं तथा विकास के बाद मादा थोड़ी बाहर निकल कर अंडे देती है जो मिट्टी से चिपक कर जड़ों के रुप को बिगाड़ देते हैं। इसके लक्षण ऐसे दिखाई देते हैं जैसे कि पोषण की कमी से पौधे पीले व बौने दिखाई देते हैं। इनकी वजह से फल कम लगते हैं तथा पत्तियां गिरती रहती हैं।

जड़ विक्षत सूत्रकृमि - प्रेटीलेन्कस

इस सूत्रकृमि की बहुत सारी जातियां गेहूं, बाजरा, मक्का, कॉफी, जौ, जई, कपास, आलू, धान, सोयाबीन, गन्ना, सब्जियाँ, सजावट के पौधे तथा बागवानी की फसलों में मिलती हैं। पौधों के ऊपरी भागों में इसके संक्रमण के लक्षण साफ दिखाई नहीं देते, परंतु पौधों की वृद्धि रुकने के साथ पीलापन आ जाता है। प्राथमिक जड़ों का छोटा होना, फूल छोटा होना तथा सिकुड़ना आदि इसके मुख्य लक्षण हैं। इसका प्रभाव पौधों की जातियों तथा सूत्रकृमि की संख्या पर भी निर्भर करता है। जड़ों पर छोटे-छोटे पानी भरे धब्बे दिखाई देते हैं। प्रेटिलेन्क गेहूं, गन्ना, धान, चाय, काफी तथा फलों में काफी क्षति पहुंचाती है।

धान जड़ सूत्रकृमि - हिर्शमिनैला

यह सूत्रकृमि मुख्यतः धान उगाने वाले क्षेत्रों, मैदानी भागों तथा सिंचित इलाके में अधिक मिलता है। कोई लक्षण स्पष्टतः न भी मौजूद हो तब भी फसल को भारी क्षति होती है। पौधों का विकास अच्छा नहीं होता।

(II) भूमि के ऊपर के परजीवी

बीज पुट्टी का सूत्रकृमि - *एन्ग्यूना ट्रिटिकई*

यह सूत्रकृमि भारतवर्ष में मुख्यतः गेहूं उगाने वाले क्षेत्रों में मिलता है। गेहूं में सेहन, तना या सेंहूँ रोग को फैलाने में इसकी मुख्य भूमिका है। फूल आने के समय यह बालियों में घुस जाते हैं। इनके प्रवेश के 20-25 दिन

बाद तने का निचला भाग फूल जाता है। इनके द्वारा संक्रमित पौधे में शाखाओं की संख्या अन्य पौधों से अधिक होती है। पत्तियां टेड़ी होकर मुड़ जाती हैं तथा उन पर धब्बे बन जाते हैं। संक्रमित बालियां मोटी और छोटी हो जाती है। दाने फूल कर तिरछे हो जाते हैं। सभी वर्तिकाएं सेहूँ में बदल जाती हैं। एक मादा हर वर्तिका में 20-25 हजार अंडे देती है। दाना कड़ा हो जाता है तथा इसके अंदर सूत्रकृमि 20-25 साल तक जिन्दा रह सकता है।

अगर जीवाणु का संक्रमण हो जाए तो यह रोग टुन्डू रोग कहलाता है। पीला सा गोंद पौधों की बालियों तथा पत्तियों पर चिपक जाता है। बाद में यह कड़ा होकर भूरा हो जाता है। पौधे में अधिक शाखाएं निकलती हैं तथा लंबाई में बौना रह जाता है। अंत में बालियों में दाने नहीं बनते।

श्वेत सिरा रोग - *एफेलैन्काइडेस वेसीई*

यह सूत्रकृमि अधिकांशतः धान उगाने वाले क्षेत्रों में अधिक मिलता है। यह फूल एवं पत्तियों पर एक बाह्य परजीवी के रुप में पोषण लेता है। पौधा बौना, शाखाएं कम तथा पत्ती का अगला भाग मुरझा कर सिकुड़ जाता है। बालियों में स्पाईक की लंबाई तथा संख्या कम हो जाती है एवं पूर्णतयः तथा बाहर नहीं आ पाती।

तना सूत्रकृमि - *डिटाइलैन्कस एंगस्टस*

यह सूत्रकृमि पूर्वी भारतवर्ष में पाया जाता है। यह बाह्य परजीवी के रूप में तना, पत्तियां तथा बालियों को खाता है। एक हफ्ते के संक्रमण के बाद अंकुर पीले, पत्तियों का मुड़ जाना तथा पौधे का झाड़ीनुमा रूप लेना एक आम बात है। प्रभावित फसल में दाने न बन पाने से यह रोग 'उफ्रा' रोग कहलाता है।

सूत्रकृमि प्रबंधन

- अनाज, सब्जी, तिलहन और दलहनी फसलों में जड़ गांठ रोग व पुट्टी सूत्रकृमियों का नीम आधारित पदार्थों के उपयोग द्वारा।
- सूत्रकृमियों की जातियों में प्रतिरोधक क्षमता विकसित होने पर पौधों की विकसित सूत्रकृमि प्रतिरोधक जातियों के उपयोग द्वारा।
- सूत्रकृमि द्वारा क्षति का आकलन करके सूत्रकृमियों के स्तर का प्रबंधन।
- सूत्रकृमि के व्यवहार और मौसम के सहयोग से उचित फसल चक्र अपनाकर।
- पौध तैयार करते समय सूत्रकृमि रहित पौधशाला तैयार करना।
- गेहूं में सेंहन एवं तना रोग की वजह से बीज की सफाई तथा उचित बीज उपचार द्वारा।
- रसायन एवं अन्य तरीकों को साथ साथ उपयोग करके।
- देश में पाई जाने वाली *एसपर्जीलस नाईजर* एवं *पेसिलोंमाईसस लीलेसिनस* फफूंद की जातियों द्वारा जड़गांठ रोग का प्रबंधन। सूत्रकृमि रोधक किस्मों का उत्पादन करके प्रयोग में लाना।
- *पाश्चूरिया पेनीट्रांस* के सूत्रकृमि पर चिपकने की वजह से इस जीवाणु द्वारा सूत्रकृमि का प्रबंधन।
- नीलहरित शैवाल तथा कीट जनक सूत्रकृमि द्वारा उचित प्रबंधन।
- *स्टरनीमा थर्मोफिलम* तथा *हेटरोरेविटिडिस* द्वारा हानिकारक कीटों का प्रबंधन।

- *हेटरोरेविटिडिस इन्डीकास* द्वारा मिली बग तथा सफेद तितली का प्रबंधन।

अगर सूत्रकृमि को फफूंद जीवाणु तथा विषाणु का साथ मिल जाए, तो क्षति की दर बढ़ जाती है। इसके लिए समेकित सूत्रकृमि प्रबंधन अति आवश्यक है। वातावरण सुरक्षित कीटनाशक रसायन, रोग प्रतिरोधी किस्में, शक्तिशाली जैवनियंत्रक एवं किसानों में जागरूकता की कमी होना सूत्रकृमि के लिए परेशानी बढ़ा देता है। अभी आने वाले लंबे समय तक प्रचलित विधियों का ही प्रयोग करना होगा और सूत्रकृमि रोधक किस्मों तथा जैवनियंत्रकों का विकास करना होगा।

समय परिवर्तन का धन है। परंतु घड़ी उसे केवल परिवर्तन के रूप में दिखाती है, धन के रूप में नहीं।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

आपका कोई भी काम महत्वहीन हो सकता है पर महत्वपूर्ण यह है कि आप कुछ करें।

- महात्मा गांधी

कीटनाशक सूत्रकृमि

राशिद परवेज, विशाल सिंह सोमवंशी एवं उमा राव

सूत्रकृमि संभाग

भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

सूत्रकृमि की वे जातियां जो कीटों पर अंतर्जीवी होती हैं, कीटनाशी सूत्रकृमि कहलाती हैं। ये बहुत सूक्ष्म, रंगहीन, पतली, खंडरहित धागेनुमा, बेलनाकार, अतिसूक्ष्म (0.3-1.5 मि.मि.), एक लिंगी तथा परिपोषी होती हैं। इन्हें नग्न आँखों से नहीं देखा जा सकता है एवं इन्हें देखने के लिए सूक्ष्मदर्शी का प्रयोग करते हैं। इनकी सर्वप्रथम खोज, जर्मनी के वैज्ञानिक स्टाइनर ने 1923 ईसवी में की थी। ये कीटों के बाह्य शरीर पर स्थित प्राकृतिक छिद्रों द्वारा कीटों के शरीर में प्रवेश करके विष का सृजन कर कीट को मारने में भूमिका निभाते हैं।

स्टीनरनीमा, हैटरोरैहवडाइटिस तथा *ओशियस* नामक सूत्रकृमि क्रमशः *जीनोरैहबडस* तथा *फोटोरैहबडस* जीवाणुओं के साथ सहजीवी संबंध रखते हैं। ये कीटों के लिए प्राणघातक पूर्ण परजीवी हैं। विभिन्न दलहनी फसलों में लेपिडोपटेरन, कोलिओपटेरन तथ डिपटेरन कीट समूह के नियंत्रण में इन कीटनाशी सूत्रकृमियों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

कीटनाशक सूत्रकृमि का जीवन चक्र

कीटनाशक सूत्रकृमि का जीवन चक्र प्रारूपिक होता है। स्टीनरनेमेटिडी जातियों में नर एवं मादा अलग-अलग होते हैं परंतु हैटरोरहेनडाइटिडी की जाति में मादा बिना निषेचन के ही प्रसव कर सकती हैं। मादा अंडे देती है या अपने शरीर में ही रखती हैं। भ्रूणावस्था के पश्चात एक सूत्रनुमा शिशु सूत्रकृमि पैदा होता है जो तीन-चार बार क्रमिक केंचुली उतारने के पश्चात अंत में व्यस्क नर या मादा का रूप प्राप्त करता है। तृतीय शिशु अवस्था ही हानिकारक होती है क्योंकि इस अवस्था में यह 4-5 महीने तक मृदा में रह सकता है एवं इस प्रकार उसका पूर्ण जीवन चक्र 4-5 दिन में पूरा होता है।

उच्च तापक्रम के लिए सहिष्णु कीटनाशी सूत्रकृमि

कीटनाशी सूत्रकृमियों की दो जातियां *स्टीनरनीमा सीमायी* तथा *स्टीनरनीमा मसूदी* को उत्तर प्रदेश के अरहर वाले क्षेत्र से चिन्हित किया गया है। ये जातियां उच्च तापक्रम पर भी प्रभावी हैं। ये दलहनी फसलों के शत्रु कीट *हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा* के लार्वा पर परजीवी हैं तथा मात्र दो से तीन दिनों में ही इस कीट को मार देती हैं।

वृहद स्तर पर उत्पादन

कीटनाशक सूत्रकृमियों का वृहद उत्पादन कीटों अथवा कृत्रिम माध्यम से किया जा सकता है। कीटों के माध्यम से इनका उत्पादन क्रमशः *हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा* के प्रति लार्वे से लगभग 50 हजार से 2 लाख, *गैलेरिया मैलोनिला* से 2 लाख से 3 लाख तथा *कोरसायरा सिफेलोनिका* से 1 से 2 लाख शिशु सूत्रकृमि उत्पन्न किए जा सकते हैं। विभिन्न कृत्रिम माध्यमों के उपयोग से 10 से 40 लाख प्रति 250 मि.ली. फ्लास्क से संवर्धित किए जा सकते हैं। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में कीट नियंत्रण हेतु लगभग 20 करोड़ शिशु सूत्रकृमियों की आवश्यकता होती है।

भंडारण

कीटनाशी सूत्रकृमि के उचित भंडारण के लिए मिट्टी के पात्रों में गीली मिट्टी के साथ, टाक पाउडर के प्लास्टिक पैकेट में तथा कीटों के कोकून में भंडारित किया जा सकता है। इन दशाओं में इन्हें लगभग 6 महीनों तक भंडारित किया जा सकता है।

प्रयोग

पराबैंगनी किरणों तथा त्वरित शुष्कता के कारण कीटनाशी सूत्रकृमियों के प्रयोग में अत्यंत कठिनाइयां

आती हैं। फिर भी आर्द्र दशाओं (ऊषाकाल एवं सायंकाल) में प्रयोग करने पर ये अत्यंत प्रभावी होते हैं। इनकी उचित मात्रा (20 करोड़ प्रति हेक्टेयर की दर से) तथा तकनीक (उजाला नील, ग्लिसरीन) के साथ प्रयोग करने से चना तथा अरहर के कीटों पर प्रभावी नियंत्रण पाया जा सकता है। कीटनाशी सूत्रकृमियों द्वारा कई हानिकारक कीटों को प्रभावी ठंग से नियंत्रित किया जा सकता है। (तालिका-1)

कीटनाशी सूत्रकृमियों द्वारा कीटों के प्रबंधन की विधियां

सिंचाई जल विधि द्वारा

कीटनाशक सूत्रकृमि की तृतीय शिशु अवस्था (2.5 x 19^9 एक हैक्टर के लिए) की संख्या क्षेत्रफल के अनुसार लेकर उसे सिंचाई के जल में डाल कर खेत तक पहुंचाते हैं। यह सूत्रकृमि पानी के साथ-साथ मृदा में चले जाते हैं। वहां पहुंचकर यह कीटों के संपर्क में आने पर उनके भीतर प्राकृतिक रन्ध्रों द्वारा उनके शरीर के अंदर पहुंच जाते हैं। वहां पहुंच कर वे अपने शरीर के जीवाणु को कीटों के शरीर में स्रावित करते हैं। यह जीवाणु ही कीटों को मारने में सहायक होते हैं।

छिड़काव द्वारा

इस विधि द्वारा उन कीटों का नियन्त्रण करते हैं जो बाहर से क्षति पहुंचाते हैं। जब कीटों का प्रकोप हो तब तृतीय अवस्था के शिशु को आवश्यकतानुसार (2.5 x 10^9 एक हैक्टर के लिए) 0.1 ग्लिसरीन एवं एक ग्राम नील का घोल बनाकर पौधों के ऊपरी भाग में छिड़काव करते हैं। नील का प्रयोग सूत्रकृमि को पराबैंगनी किरणों से बचाने के लिए करते हैं। इसी प्रकार ग्लिसरीन का उपयोग सूत्रकृमि में निर्जलीकरण रोकने के लिए करते हैं, ताकि सूत्रकृमि अधिक समय तक जीवित और प्रभावी रह सकें।

कीटनाशक सूत्रकृमि की विशेषताएं

कीटनाशक सूत्रकृमि की विशेषताएं निम्नलिखित हैं, जिसके कारण हम इसको एक अच्छा जैविक नियन्त्रण कारक कह सकते हैं:

- विविध कीटों को मारने की क्षमता।
- लघु जीवन चक्र (7- 8 दिन)
- अल्पकाल (24-72) घंटे में ही प्रभावी।
- सरलतापूर्वक उपलब्धता।
- उच्च तापमान पर भी प्रभावी।
- कृत्रिम भोजन पर भी कीटनाशी सूत्रकृमि की संख्या वृद्धि का संभव होना।
- घोल में मिश्रित करने में आसान।
- सुगम और आसान विधियों द्वारा उपयोग संभव।
- अनेक रसायनिक कीटरोधक रसायनों के साथ संगतता।
- एकीकृत जैव कीट नियंत्रण/प्रबंधन का एक अभिन्न अंग।
- अधिक समय के लिए सुरक्षित भंडारण संभव।
- पर्यावरण-मित्र प्रौद्योगिकी।

तलिका 1: महत्वपूर्ण कीटों के नियंत्रण हेतु कीटनाशी सूत्रकृमि।

कीट	कीटनाशी सूत्रकृमि
हेलिकोवर्पा अरमीजिरा (फली भेदक)	*स्टीनरनिमा मसूदी, स्टीनरनिमा सीमायी*
लैम्पिडिस वौयूटीकस (नीली तितली)	*स्टीनरनिमा मसूदी, स्टीनरनिमा सीमायी* तथा *स्टीनरनिमा कारपोकेपसी*
मारुका विटराटा (धब्बेदार फली भेदक)	*स्टीनरनिमा मसूदी* तथा *स्टीनरनिमा सीमायी*
माइलोसिरस (अरहर की पत्ती मक्खी)	*स्टीनरनिमा मसूदी, स्टीनरनिमा सीमायी* तथा *स्टीनरनिमा कारपोकेपसी*
डाइक्रेसिया औवलीगुआ	*स्टीनरनिमा मसूदी, स्टीनरनिमा सीमायी* तथा *स्टीनरनिमा कारपोकेपसी*
एग्रोटिस एपसिलोन (कटुआ)	*स्टीनरनिमा कारपोकेपसी*

माइलोवरिस पसचुलेटा (धारीदार वीटिल)	*स्टीनरनिमा मसूदी* तथा *स्टीनरनिमा सीमायी*
प्ल्यूटीला जाइलोस्टीला	*स्टीनरनिमा कारपोकेपसी*
कैलोसोब्रुकस (घुन)	*स्टीनरनिमा मसूदी, स्टीनरनिमा सीमायी*
ट्राइवोलियम कैस्टेनियम	*स्टीनरनिमा मसूदी* तथा *स्टीनरनिमा सीमायी*

कीटनाशक सूत्रकृमि का जीवन चक्र एवं मारक प्रदर्शन

कीटनाशक सूत्रकृमि कीट की तलाश में सूत्रकृमि कीट के शरीर मुख्य गुदा और बाहरी छिद्र के द्वारा प्रवेश करता है

स्वस्थ फलीभेदक गिडार

सूत्रकृमि ग्रसित फलीभेदक गिडार

शिशु के नाल में जीवाणु

शिशु जीवाणु को कीट के शरीर में छोड़ते हुए भोज्य कीट की 24-48 घंटे में मृत्यु

शिशु से वयस्क सूत्रकृमि (परिवर्तित अवस्था)

कीटनाशक सूत्रकृमि, फलीभेदक गिडार को खाते हुए

मादा सूत्रकृमि के शरीर में शिशु मादा के शरीर से शिशु बाहर आते ही मादा प्राण त्याग देती है (*इण्डोटोकिया मेट्रीसीडा*)

कीटनाशक सूत्रकृमि फलीभेदक गिडार के शरीर को फाड़कर बाहर निकलते हुए

वैज्ञानिक विधियों से करें अमरूद के बागों की देखभाल

मधुबाला ठाकरे, अमित कुमार गोस्वामी, चवलेश कुमार एवं ए. नागराजा

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

अमरूद का नाम लेते ही मुँह खट्टे-मीठे स्वाद से भर जाता है। यह स्वादिष्ट फल पौष्टिकता से भी परिपूर्ण है। न सिर्फ इसके फलों का बल्कि पेड़ के सभी भागों का उपयोग बहुत से रोगों को ठीक करने के लिए किया जाता है। फलों में यह विटामिन 'सी' का तीसरा सबसे बड़ा स्रोत है तथा कैल्शियम एवं खाद्य रेशों से भी भरपूर है। यदि किसानों के लाभ की दृष्टि से देखा जाए तो भी इसकी बागवानी तय मापदंडों पर खरी उतरती है। यही वजह है कि किसानों का इस फल की बागवानी की तरफ रुझान बढ़ रहा है और भारत विश्व में अमरूद उत्पादन में अग्रणी स्थान रखता है। कुछ बहुत कम या अधिक तापमान एवं वर्षा वाले स्थानों को छोड़कर इसकी बागवानी देश के सभी भागों में होती है। ऐसे क्षेत्र जहां शीत ऋतु काफी ठंडी तथा ग्रीष्म ऋतु में पर्याप्त गर्मी होती है इसके उत्पादन के लिए उपयुक्त होते हैं। अमरूद की बागवानी बहुत अधिक जटिलता भरी नहीं है। कुछ तथ्यों को ध्यान में रखकर इसकी बागवानी सफलतापूर्वक की जा सकती है।

फसल निर्धारणः अमरूद में मुख्यतः दो बार फल आते हैं वर्षा ऋतु एवं शीत ऋतु। शीत ऋतु के फल, वर्षा ऋतु के फलों की तुलना में अधिक पौष्टिक एवं स्वादिष्ट होते हैं। इसके साथ ही वर्षा ऋतु के फलों में कीट एवं रोगों का प्रकोप अधिक होता है। इसलिए किसानों को फसल नियंत्रण द्वारा शीत ऋतु की फसल लेने की सलाह दी जाती है। अमरूद में अप्रैल माह के दूसरे पखवाड़े से नए प्ररोह आना प्रारंभ होते हैं जिन पर कलियां, फूल एवं फल आते हैं। यह फल वर्षा ऋतु में परिपक्व होते हैं। यदि किसान वर्षा ऋतु में फल नहीं लेना चाहते हैं या कम लेना चाहते हैं तो इसी समय वे फसल नियंत्रण कर सकते हैं। फसल निर्धारण के लिए विधि का चयन, स्थान विशेष पर निर्भर करता है। फसल नियंत्रण की विधियों में काँट-छाँट, वृद्धि-नियामकों या कहीं-कहीं तो यूरिया का उपयोग भी किया जाता है। इसमें से सबसे अच्छी विधि काँट-छाँट है। अप्रैल के अंतिम सप्ताह में फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृंतन किया जा सकता है। इस विधि में नए कल्लों के आधार पर एक जोड़ा पत्ती को छोड़कर शेष ऊपर के भाग को काट देते हैं। इस प्रकार फूल एवं कलियाँ, जो कि नए कल्लों के ऊपर होती हैं, वृक्ष से अलग हो जाती हैं। इस विधि का एक और लाभ यह है कि कृन्तन के बाद नीचे गिरी पत्तियां ग्रीष्म ऋतु में पलवार का काम करती है एवं भूमि में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाती है। यह कार्य अप्रैल माह से लेकर मई के शुरुआती दिनों तक कर लेना चाहिए।

अमरूद में फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृन्तन

पोषण प्रबंधनः अमरूद वर्ष में मुख्यतः दो बार फल देता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि पेड़ों को उचित पोषण दिया जाए जिससे कि वे आने वाले समय में अच्छी उपज देने में सक्षम हो जाएं। बाग की मृदा का परीक्षण करवाकर ही उसमें पोषक तत्वों को डालें।

सामान्यतः अमरूद के छह वर्ष के वृक्ष के लिए 450 ग्राम नाइट्रोजन, 400 ग्राम फॉस्फोरस एवं 600 ग्राम पोटैशियम की आवश्यकता होती है। जुलाई माह में वृक्ष के नीचे थालों को अच्छे से साफ करके नाइट्रोजन की आधी मात्रा डालें। इसलिए 225 ग्राम नाइट्रोजन (लगभग 490 ग्राम यूरिया) प्रति वृक्ष की दर से डालें। अक्टूबर माह में नाइट्रोजन की शेष मात्रा (225 ग्राम/वृक्ष अर्थात 490 ग्राम यूरिया/वृक्ष) डालें। शीत ऋतु के फलों की तुड़ाई जब समाप्त हो जाए तो बाग की अच्छी तरह से सफाई करें। अब 50-60 किलोग्राम गोबर की अच्छी से सड़ी हुई खाद तथा फ़ॉस्फ़ोरस एवं पोटाश 400 ग्राम प्रति वृक्ष (1.25 किलोग्राम डबल सुपर फॉस्फेट) एवं 600 ग्राम प्रति वृक्ष (1 किलोग्राम सल्फ़ेट ऑफ़ पोटाश) डालें। इन्हें वृक्ष के छत्रक के नीचे एक पट्टी के रूप में डालकर 20-30 सेमी. गहराई तक मिला दें। जुलाई-अगस्त में 0.6-0.8 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव करें। इसका छिड़काव 15-20 दिन बाद फिर से किया जा सकता है। बोरॉन की कमी के कारण से फल ज्यादा नहीं बढ़ते एवं कड़क रहते हैं व बीज के पास भूरे काले रंग के धब्बे पाए जाते हैं।

बागों में सिंचाई : अमरूद में वर्षा ऋतु को छोड़कर संपूर्ण वर्ष सिंचाई की आवश्यकता होती है। कभी-कभी आवश्यकता पड़ने पर वर्षा ऋतु में भी सिंचाई की आवश्यकता होती है। ग्रीष्म ऋतु में तापमान वृद्धि की वजह से कम अंतराल में सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई के लिए टपक सिंचाई विधि सबसे उपयुक्त होती है। इसके अतिरिक्त यदि थाला विधि द्वारा सिंचाई कर

टपक सिंचाई विधि

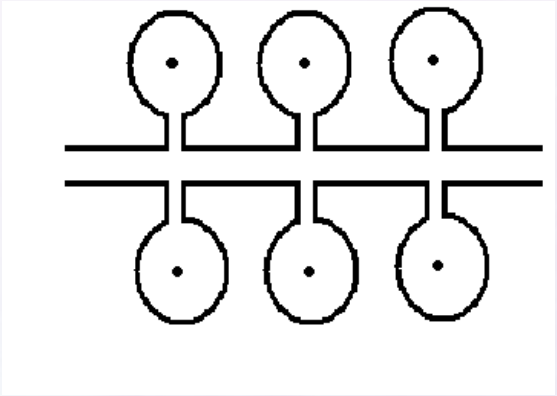

थाला विधि द्वारा सिंचाई

रहे हैं तो चित्र में दिखाए गए तरीके से करें। इससे बाग़ में उकठा रोग का संक्रमण नहीं फैलता है। सिंचाई की कमी से फल बनने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और फल झड़न या कम गुणवता के फलों जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

कीट प्रबंधनः फल मक्खी अमरूद में बहुत ही अधिक क्षति पहुंचती है। वर्षा ऋतु की फसल में इसका अधिक प्रकोप होता है। यही कारण है कि कुछ किसान वर्षा ऋतु की फसल लेना नहीं चाहते हैं। फल मक्खी फलों में छिद्र करके अंडे देती है जिससे इल्लियां निकलकर गूदे को खाती हैं और उन्हें उपयोग के लायक नहीं रहने देती। फल मक्खी के प्रकोप से बचने के लिए मिथाइल यूजीनोल के फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करना चाहिए। यदि फल मक्खी की समस्या अधिक है तो जब फल छोटे हो तब बाग में स्पिनोसैड (3.5 मिली./10 ली.) का छिड़काव करें। फल मक्खी के प्रबंधन हेतु फलों की थैलाबंदी बहुत आसान, प्रभावी एवं किसान-मित्र प्रौद्योगिकी है।

अमरूद में कुछ और कीट जैसे कि मीली बग एवं छालभक्षी इल्ली भी क्षति पहुंचाते हैं। अमरूद में मीली बग के प्रकोप में बहुत से सफ़ेद रंग के रुई के समान कीट प्ररोहों पर दिखाई देते हैं। परंतु यदि प्रकोप कम है तो प्रभावित प्ररोहों को तोड़कर गड्ढों में दबा दें। परंतु यदि प्रकोप अधिक है तो बाग में थायमेथोक्सम (5 ग्रा./ 10 ली.) का छिड़काव करें। सितंबर माह में छालभक्षी इल्ली की रोकथाम का प्रबंध करें। जहां-जहां तने और शाखाओं पर जाला जैसा दिखाई दें, वहां पर इसका प्रकोप

अमरूद में फल मक्खी का प्रकोप

अमरूद के फल की सतह पर फल मक्खी द्वारा किए गए छिद्र

मिथाइल यूजीनोल का फेरोमोन ट्रैप

मीली बग का प्रकोप

छालभक्षी इल्ली का प्रकोप

होता है। जाले को हटा कर उसके समीप स्थित छिद्र में तार डालकर घुमाएं। इसके पश्चात रुई या कपड़े के छोटे से भाग को केरोसीन या पेट्रोल में डुबाकर छेद में डालें। तत्पश्चात छेद को गीली मिट्टी से बंद कर दें।

रोग प्रबंधन: अमरूद में उकठा रोग से बहुत क्षति होती है क्योंकि इससे पूरा पेड़ मर जाता है। किसी भी वृक्ष में यदि उकठा रोग के लक्षण दिख रहे हैं (वृक्ष में पत्तियां पीली पड़कर शाखाएं ऊपर से नीचे की तरफ सूखती हैं) तो ऐसे वृक्ष को एक ऊंची मेढ़ बनाकर बाकी पौधों से अलग करें तथा बेविस्टीन डालें। यदि फिर भी पेड़ ठीक ना हो तो उसे उखाड़कर नष्ट करें एवं गड्ढे को खुला रखें तथा उसमें बेविस्टीन का छिड़काव करें। यदि तनों पर कैंसर रोग का प्रकोप दिखे (तनों एवं टहनियों की छाल बीच में से चिटक कर सूखने लगती है) तो रोगग्रस्त स्थान को तेज चाकू से थोड़ा छील कर ब्लाईटाक्स -50 के गाढ़े घोल (100 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाएं) का लेप लगाएं।

उकठा रोग

स्टाइलर एन्ड सड़न

तना कैंसर से ग्रसित अमरूद का पेड़

इसके अतिरिक्त कुछ और महत्वपूर्ण क्रियाकलाप हैं। जैसे वर्षा ऋतु प्रारंभ होने से पहले इंडोफिल-एम-45 (0.2%) या बेविस्टीन (0.1-0.2%) का छिड़काव करें जिससे वर्षा ऋतु में फलों में एन्थ्रक्नोज ना आने पाए। फलों की पक्षियों से रक्षा करें। इसके लिए भी फलों की थैलाबंदी अत्यंत लाभकारी है। फलों की सही समय पर तुड़ाई करते रहें। ध्यान रहे कि किसी भी क्रिया से फलों की बाहरी सतह पर कोई चोट ना आए। उन्हें साफ करें तथा श्रेणीकरण के बाद अच्छी तरह से पैक करके ही मार्केटिंग करनी चाहिए। शीत ऋतु के फलों की तुड़ाई समाप्त होने पर बाग़ की सफाई करें एवं टूटी, सूखी, रोगग्रस्त, ज़मीन को छूती शाखाओं तथा अवांछित शाखाओं को कांट दें। तथा कटे हुए भागों पर ब्लाइटॉक्स या बोर्डो पेस्ट लगाएं।

इन सभी बातों को ध्यान में रखकर किसान अमरूद की बागवानी सफलतापूर्वक कर सकते हैं और अधिकाधिक लाभ कमा सकते हैं।

प्रकृति अपरिमित ज्ञान का भंडार है, पत्ते-पत्ते में शिक्षापूर्ण पाठ हैं, परंतु उससे लाभ उठाने के लिए अनुभव आवश्यक है।

- हरिऔध

भारत में पपीते का उत्पादन: वर्तमान स्थिति तथा भविष्य की संभावनाएं

सुनील कुमार शर्मा

भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे

देश में पपीते का मुख्य उत्पादन दक्षिण तथा पश्चिम के राज्यों में होता है। किसानों द्वारा पपीते को उपभोक्ता तक पहुंचाने हेतु श्रृंखला 'उत्पादक-एजेंट-थोक व्यापारी-खुदरा व्यापारी-उपभोक्ता' है। बाजार में पपीते की आमद में विगत वर्षों में वृद्धि 6.4% हुई है जबकि पपीते के थोक तथा खुदरा के 'वास्तविक मूल्य' में वृद्धि नगण्य ही रही है। पपीते के व्यापार में मांग एवं पूर्ति के सामान्य नियमों का हमेशा पालन नहीं होता है। दिल्ली, मुंबई, हैदराबाद, बेंगलुरु तथा जयपुर पपीते की मुख्य मंडियां हैं। रमजान के महीने में पपीते की मांग अधिक होने के कारण पपीते के थोक तथा खुदरा मूल्यवर्ष के अन्य महीनों से ज्यादा रहते हैं। पपीते का विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक देश होने के बाद भी भारत से निर्यात होने वाले पपीते की मात्रा बहुत कम होती है। विगत तीन वर्षों में निर्यात होने वाले पपीते की औसत मात्रा कुल उत्पादन का मात्र 0.38% ही रही है। भारत से पपीता आयात करने वाले देशों में यूरोपीय देश, मध्य-पूर्व के देश तथा निकट पड़ोस के देश शामिल हैं। भारी घरेलू मांग तथा आयात करने वाले देशों में फलों में पाए जाने वाले रासायनिक अवशेषों के प्रति सख्त नियम-कायदों के कारण फलों के वापस किए जाने की स्थिति में भारी आर्थिक हानि की सम्भावना रहती है।

पपीता का उत्पादन

हालांकि पपीता भारत में उत्पन्न होने वाले प्रमुख फलों में शामिल नहीं है परंतु विगत दस वर्षों में देश में कुल फल उत्पादन में हिस्सेदारी की दृष्टि से इसके क्षेत्रफल तथा उत्पादन दोनों ही बढ़े हैं। वर्ष 2003-04 में कुल फल उत्पादन में पपीते की हिस्सेदारी क्षेत्रफल में 1.2% तथा उत्पादन में 3.7% थी, जो कि वर्ष 2012-13 में बढ़कर 1.9% तथा 6.6% हो गई। इस दौरान वार्षिक वृद्धि दर क्षेत्रफल के लिए 5.2% तथा उत्पादन के लिए 6.6% रही। वर्ष 2012-13 में सभी फलों की तुलना में पपीते की उत्पादकता सर्वाधिक (41 टन/हे.) थी। पपीते का उत्पादन मुख्य रूप से उष्णकटिबंधीय तथा उपोष्णकटिबंधीय देशों में होता है। संयुक्त राष्ट्र संगठन के खाद्य तथा कृषि संगठन के अनुसार वर्ष 2016 में पपीते का ज्यादातर उत्पादन एशिया (59%) के अतिरिक्त दक्षिण अमेरिका (33%) तथा अफ्रीका (11%) में हुआ था। विगत 30 वर्षों में पपीते के क्षेत्रफल तथा उत्पादन की वृद्धि दर सतत बढ़ी है। इस प्रकार भारत में पपीते का उत्पादन 1985 के अपने न्यूनतम स्तर (7.7 टन/हे.) से 6.8% वृद्धि दर से पांच गुना बढ़ कर 2012 में 40 टन/हे. हो गया। वर्तमान में देश में संपूर्ण विश्व के पपीते के कुल क्षेत्रफल का लगभग 30% है जिससे विश्व के कुल उत्पादन का लगभग 44% पपीता पैदा होता है। पपीते के उत्पादन में यह वृद्धि पपीते की खेती के क्षेत्रफल के साथ-साथ उत्पादकता में हुई वृद्धि के कारण भी प्राप्त हुई। भारत में पपीते का मुख्य उत्पादन दक्षिण तथा पश्चिम के राज्यों में होता है। तेलंगाना, सीमान्ध्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक तथा महाराष्ट्र पपीते के उत्पादन में अग्रणी राज्य हैं। इन राज्यों में देश के पपीते के उत्पादन का आधा क्षेत्रफल आता है जिससे यह राज्य देश के कुल उत्पादन का तीन चौथाई हिस्सा पैदा करते हैं। भारत में पपीते की उत्पादकता 2016 में 43 टन/हे. रही जो कि विश्व की औसत उत्पादकता से काफी ज्यादा है।

इतनी भारी मात्रा में पैदा हुए पपीते को बेचना भी एक चुनौती पूर्ण कार्य है। भारत में किसानों द्वारा पपीते को उपभोक्ता तक पहुंचाने के बहुत सारे माध्यम हैं, जिनमें मुख्य श्रृंखला 'उत्पादक-एजेंट-थोक व्यापारी-खुदरा व्यापारी-उपभोक्ता' है। पपीते के बाज़ार के विषय में प्रस्तुत जानकारी देश के विभिन्न प्रान्तों में फैली 30 मंडियों से एकत्र की गई विगत दस वर्षों की सूचना पर

आधारित है। बाज़ार में पपीते की आमद में विगत 10 वर्षों में 6.4% वृद्धि हुई है। जबकि पपीते के थोक तथा खुदरा के 'वास्तविक मूल्य' में वृद्धि नगण्य ही रही है। पपीते के थोक तथा खुदरा मूल्य पर मौसम का प्रभाव भी देखा जाता है। औसत थोक तथा खुदरा मूल्य सितंबर में अधिकतम तथा जनवरी में न्यूनतम पाए गए हैं। पपीते की कुल आमद पर मौसम का कोई प्रभाव नहीं देखा गया। हालांकि यह मार्च में अधिकतम तथा जून में न्यूनतम पाई गई है। पपीते के व्यापार में मांग एवं पूर्ति के सामान्य नियमों का हमेशा पालन नहीं होता है। कई बार पपीते की बढ़ी हुई पूर्ति के बाद भी इसके दामों में कमी नहीं आती है। दिल्ली, मुंबई, हैदराबाद, बेंगलुरु तथा जयपुर पपीते की मुख्य मंडियां हैं। इन मंडियों में विगत 10 वर्षों में पपीते की औसत आमद पूरे देश की कुल आमद की 68% रही है। इन मंडियों में पपीते का थोक मूल्य देश भर के औसत मूल्य से 18% कम पाया गया था जब कि खुदरा मूल्य में यह कमी मामूली थी। दिल्ली तथा मुंबई देश की मंडियां सबसे बढ़ी हैं। पपीते के कुल व्यापार में इनकी भागीदारी 40% है। रमजान के महीने में पपीते जैसे बड़े आकार के फलों की मांग अधिक होने के कारण इनकी आमद वर्ष के बाकी महीनों से ज्यादा रहती है। लेकिन इसके बाद भी पपीते के थोक तथा खुदरा मूल्य में कोई कमी नहीं आती, बल्कि यह वर्ष के अन्य महीनों से ज्यादा ही रहते हैं। इसलिए अधिकतर किसान पपीते की फसल को इस प्रकार लगाते हैं कि फल-उत्पादन का दूसरा या तीसरा महीना रमजान के दौरान पड़े।

पपीते का निर्यात

पपीते का विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक देश होने के बाद भी भारत से निर्यात होने वाले पपीते की मात्रा बहुत कम होती है। ज्यादातर पपीते की खपत घरेलू बाज़ार में ही होती है। विगत तीन वर्षों में निर्यात होने वाले पपीते की औसत मात्रा कुल उत्पादन का मात्र 0.38% ही रही है। वर्ष 2010-11, 2011-12 तथा 2012-13 में भारत से निर्यात होने वाले पपीते की मात्रा क्रमशः 17,176, 18,672 तथा 16,491 टन थी तथा इसका मूल्य क्रमशः 19.31, 24.73 तथा 33.31 करोड़ रुपये था। भारत से पपीता आयात करने वाले देशों में यूरोपीय देश, मध्य-पूर्व के देश तथा निकट पड़ोस के देश शामिल हैं। इनमें संयुक्त अरब अमीरात, नीदरलैंड, सऊदी अरब तथा अमेरिका ही ऐसे देश हैं जहां पपीते के सालना निर्यात का मूल्य एक करोड़ से ज्यादा है जब कि जर्मनी, बहरीन, कुवैत, नेपाल, कतर तथा ओमान में होने वाले निर्यात का मूल्य एक करोड़ से कम था। बहरीन, कुवैत, नेपाल तथा कतर को होने वाला निर्यात, नीदरलैंड तथा अमेरिका को होने वाले निर्यात से ज्यादा था, परंतु इस का मूल्य एक करोड़ रुपये से कम था। भारी घरेलू मांग तथा आयात करने वाले देशों में फलों में पाए जाने वाले रासायनिक अवशेषों के प्रति सख्त नियम-कायदों के कारण फलों के वापस किए जाने की स्थिति में भारी आर्थिक हानि की संभावना रहती है। भारत से पपीते के निर्यात को बढ़ावा देना एक प्रमुख प्राथमिकता है। इसके लिए जरूरी है कि किसानों को अंतरराष्ट्रीय मापदंडों के अनुसार पपीते की गुणवता बनाए रखने हेतु प्रशिक्षण दिया जाए। साथ ही किसानों के स्वयं सहायता समूह को पपीते के निर्यात संबंधित सभी जानकारियां उपलब्ध करा के निर्यात में आने वाले खतरों को कम किया जा सकता है।

भविष्य में पपीते की संभावनाएं

भविष्य में पपीते की खेती की संभावनाएं उन क्षेत्रों में ज्यादा हैं जहां का वातावरण पपीते की खेती के लिए अनुकूल हो तथा जहां 'पपीते का रिंगस्पॉट विषाणु' नामक रोग के संक्रमण की संभावना कम हो। विगत 20 वर्षों की वृद्धि दर के आधार पर पपीते के उत्पादन की संभावना वर्ष 2020 में 90 लाख टन तथा 2030 में 178 लाख टन है। भारत में पपीते की खेती की केवल एक किस्म पर निर्भरता इसे रोगों के प्रति अधिक संवेदनशील बनाती है। साथ ही साथ किसानों के आर्थिक शोषण की संभावना भी बढ़ती है। इस का समाधान यह हो सकता है कि किसानों को पपीते की वर्तमान किस्मों के अतिरिक्त अन्य विकल्प भी उपलब्ध कराए जाए।

तालिका 1: विगत 50 वर्षों में विश्व तथा भारत में पपीते के उत्पादन की तुलना

वर्ष	क्षेत्र (000हे)		उत्पादन (लाख टन)		उत्पादकता (टन/हे)	
	विश्व	भारत	विश्व	भारत	विश्व	भारत
1961-1990	172.80	19	22.19	2.76	13	19
1991-2000	315.78	60	57.60	13.54	18	22
2001-2011	379.79	86	99.74	31.31	25	36
2016	442	133	130.51	56.99	30	43

तालिका 2: विगत 50 वर्षों के विभिन्न भागों में भारत में पपीते के क्षेत्रफल, उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि की दर

	क्षेत्रफल		उत्पादन		उत्पादकता	
काल	औसत (1000 हे)	वृद्धि दर (%)	औसत (1000टन)	वृद्धि दर (%)	औसत (टन/ हे)	वृद्धि दर (%)
1961-2012	44.2	6.21	1230	7.13	23.8	8.86
1961-1990	18.6	7.47	276	2.33	19.1	-4.78
1991-2012	77.5	4.04	2476	8.18	30.0	3.97
1991-2000	60.4	4.39	1354	8.80	22.1	4.22
2001-2012	90.6	6.65	3338	9.14	36.0	2.34

तालिका 3: विगत तीन वर्षों में भारत से विभिन्न देशों को होने वाले पपीते का निर्यात

देश	2010-11		2011-12		2012-13	
	मात्रा (टन)	कीमत (लाख रु)	मात्रा (टन)	कीमत (लाख रु)	मात्रा (टन)	कीमत (लाख रु)
यू.ए.ई.	7,954	724	8,293	928	5,548	1,031
सऊदी अरब	1,703	284	2,634	506	3,179	754
नीदरलैंड	660	285	540	261	1,177	470
नेपाल	1,024	68	1,403	108	1,882	223
कुवैत	1,671	87	1,397	129	1,136	177
अन्य	4,163	483	4,404	541	3,568	676
कुल उत्पादन	4,196	-	4,457	-	5,160	-
कुल निर्यात	17,176	1,931	18,672	2,473	16,491	3,331
कुल उत्पादन का प्रतिशत	0.41%	-	0.42%	-	0.32	-

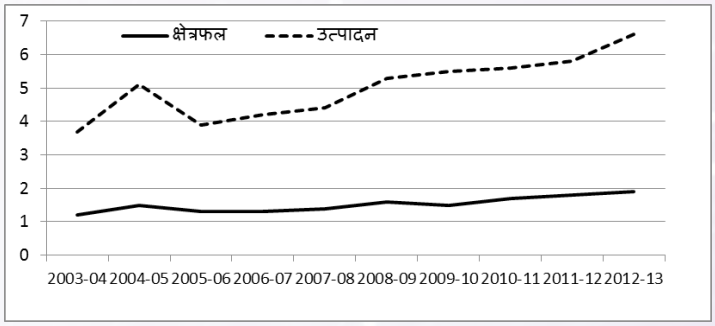

चित्र 1: विगत दस वर्षों में भारत में कुल फलों के उत्पादन की तुलना में पपीते के क्षेत्रफल तथा उत्पादन में हुई वृद्धि

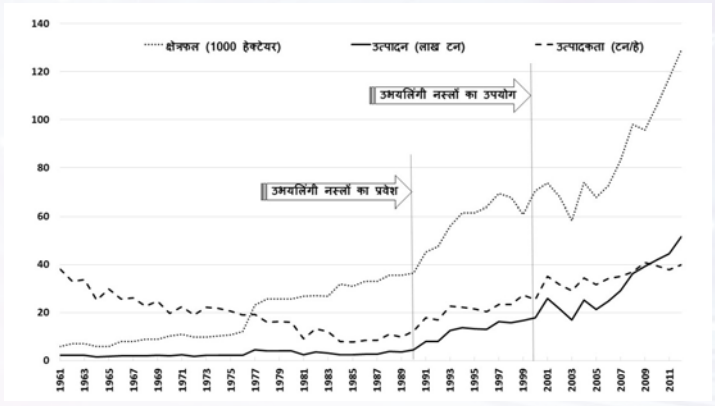

चित्र 2: पपीते के क्षेत्रफल, उत्पादन तथा उत्पादकता में 1961 के बाद आए परिवर्तन

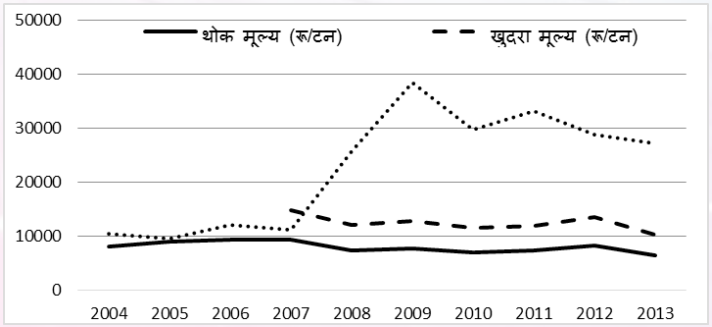

(कुल आमद को चार्ट के क्षेत्र में रखने के लिए दस से विभाजित किया गया है)

चित्र 3: विगत दस वर्षों में पपीते की कुल आमद, थोक तथा खुदरा मूल्य में आए परिवर्तन

चित्र 4: पपीते का आधुनिक बाग

शीतोष्ण जलवायु में अनार की वैज्ञानिक खेती

कल्लोल कुमार प्रामाणिक, अरुण कुमार शुक्ला, संतोष वाटपाडे, बलदेव कुमार एवं सुनील कुमार गर्ग

भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला 171004

सामान्यतः अनार उपोष्ण जलवायु का फल वृक्ष है परंतु इसकी खेती शीतोष्ण क्षेत्रों में भी की जा सकती है। यह अपने औषधीय गुणों के कारण अधिक लोकप्रिय है। यह सूखा सहनशील होने के साथ-साथ कम लागत में अधिक आमदनी देता है। इसके फलों की भंडारण क्षमता अधिक होती है तथा इसकी निर्यात की संभावनाएं भी अधिक हैं। अनार के फल कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, लौह तत्व, सल्फर के अच्छे स्रोत हैं। हमारे देश में इसकी खेती मुख्य रुप से आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, राजस्थान एवं तमिलनाडु में की जाती है।

जलवायु एवं भूमि

फल विकास एवं पकने के समय गर्म एवं शुष्क जलवायु होने पर उत्तम गुणवता के फल लगते हैं। कम सर्दी वाले क्षेत्रों में यह पर्णपाती होता है जबकि उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु में सदाबहार होता है। समुद्र तल से 500 मीटर की ऊंचाई तक इसकी खेती की जा सकती है। अनार लगभग सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परंतु अच्छी पैदावार के लिए जल निकासयुक्त गहरी, भारी दोमट भूमि उपयुक्त रहती है। भूमि की गहराई एक मीटर से कम नहीं होनी चाहिए।

उन्नत किस्में

काबुली, धोलका, मस्कट, कन्धारी, ज्योति, गणेश, जालौर सीडलेस, मृदुला, जोधपुर रेड, कन्धारी हन्सी, नाभा आदि

प्रवर्धन

अनार के पौधे कलम एवं गूटी द्वारा तैयार किए जाते हैं। कलम व गूटी से तैयार किए गए पौधे बीज द्वारा तैयार किए गए पौधों की तुलना में जल्दी फल देने लगते हैं एवं उनमें पैतृक गुण बने रहते हैं। कलम को इंडोल ब्यूटारिक अम्ल 3000 पी.पी.एम. (3 ग्राम/लीटर पानी में) के घोल में डुबो कर लगाने से अच्छी सफलता मिलती है। कलम लगाने के लिए फरवरी माह अधिक उपयुक्त है।

रोपण

उपोष्ण क्षेत्रों में पौधे लगाने का अच्छा समय वर्षाकाल है परंतु सिंचाई का समुचित प्रबन्ध हो तो अनार के पौधे फरवरी-मार्च माह में भी लगाए जा सकते हैं। शीतोष्ण जलवायु में पौध रोपण का कार्य जनवरी से मार्च माह में करते हैं (जब पौधे सुसुप्तावस्था में होते हैं)। पौधे लगाने के एक माह पूर्व 4×4 मीटर की पौध अंतराल पर 60×60×60 सें.मी. आकार के गड्ढे तैयार करने चाहिए। इनको 20-25 दिन खुला रखने के बाद ऊपर की मिट्टी में 15-20 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद तथा 50-100 ग्राम क्यूनॉलफॅस 1.5 प्रतिशत या एण्डोसल्फॉन 4 प्रतिशत चूर्ण मिलाकर गड्ढे को भर देना चाहिए तथा सिंचाई कर देनी चाहिए। वर्षा के शुरू होने पर उनमें पौधे लगा देने चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

आयु	मात्रा (किलोग्राम/पौधा)			
	गोबर की खाद	यूरिया	सुपर फॉस्फेट	म्यूरेट ऑफ पोटाश
1 वर्ष	8-10	0.10	0.25	0.50
2 वर्ष	16-20	0.20	0.50	0.50
3 वर्ष	24-30	0.30	0.75	0.100
4 वर्ष	32-40	0.40	1.00	0.150
5 वर्ष	40-50	0.50	1.25	0.150

देसी खाद, सुपर फॉस्फेट की पूरी मात्रा एवं यूरिया की आधी मात्रा फूल आने के करीब 6 सप्ताह पूर्व देवें। यूरिया की शेष आधी मात्रा फल बनने के बाद देना चाहिए।

एक स्थान पर 4 तने रखकर अन्य शाखाओं को हटाते रहें। इसके पश्चात छठे साल से इन चारों तनों के स्थान पर नए तने विकसित करें जो पांचवें साल फल देना प्रारंभ कर देंगे।

फसल निर्धारण:- अनार में वर्ष में तीन बार पुष्प आते हैं जिन्हें बहार कहा जाता है। (1) फरवरी से मार्च (अम्बे बहार) (2) जून से जुलाई (मृग बहार) (3) अक्टूबर से नवंबर (हस्त बहार)

इनमें से जुलाई-अगस्त वाली शीतोष्ण (अम्बे बहार) फसल अच्छी होती है तथा फल भी अच्छे होते हैं। पौधे की मजबूती एवं वृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि आरम्भ के तीन वर्ष तक फसल नहीं ली जाए। अतः इस समय यदि पेड़ों पर फूल आएं तो भी उन्हें तोड़ देना चाहिए।

व्यवसायिक दृष्टि से केवल एक ही बहार की फसल ली जाती है जिसका निर्धारण पानी की उपलब्धता तथा बाजार मांग के ऊपर निर्भर करता है। साधारणतः मृग बहार से फसल ली जाती है परंतु शीतोष्ण जलवायु में अम्बे बहार से फल लिए जाते हैं क्योंकि फल के समय पहाड़ी क्षेत्रों में मानसून सक्रिय रहता है। जिस बहार के फल लेने होते हैं, फूल आने से दो माह पहले पौधों में पानी देना बंद कर दिया जाता है। इस दौरान पौधा फैलाव के अनुपात में ट्रेन्च बनाई जाती है तथा उसमें खाद भर देते हैं। तत्पश्चात नियमित रुप से सिंचाई करते हैं। इस क्रिया को अपनाने से मनचाहे बहार में फूल अधिक संख्या में पैदा होते हैं तथा 5-6 माह पश्चात फल प्राप्त होते हैं।

दैहिक विकार

फल फटना: फल फटने की मुख्य समस्या दैहिक विकार है। यद्यपि शीतोष्ण क्षेत्र में फल फटने कि समस्या कम है। फल फटने के स्थान से कवक व जीवाणु अंदर प्रवेश कर जाते हैं जिससे ये फल विपणन व खाने योग्य नहीं रहते। फल फटने का कारण मृदा में अनियमित नमी होना तथा अनियमित सिंचाई करने के साथ बोरोन सूक्ष्म तत्वों की कमी मुख्य है। इस की रोकथाम हेतु सही व नियमित अंतराल पर बाग में सिंचाई करें। जिबैरिड अम्ल (40 पी.पी.एम.) व बोरोन (0.17 प्रतिशत) का पर्णीय छिड़काव फल मटर के दाने के बराबर विकसित होने की अवस्था पर करें।

जहां वातावरणीय समस्या हो वहां सहनशील किस्में जैसे बेदाना, भगवा व जालौर सीडलेस उगाए। फलों को पकने की जल्दी अवस्था पर तुड़ाई करें।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

छाल भक्षक कीटः यह कीट पेड़ की छाल को खाता है तथा छिपने के लिए अंदर डाली में गहराई तक सुरंग बना लेता है जिसमें कभी-कभी डाल/शाखा कमजोर पड़ जाती है। इसके नियंत्रण हेतु सूखी शाखाओं को काट कर जला देवें। एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर शाखाओं तथा डालियों पर छिड़कें तथा साथ ही सुरंग को साफ करके पिचकारी की सहायता से 3 से 5 मिलीलीटर केरोसीन प्रति सुरंग डाले या रुई का फोहा बनाकर सुरंग के अंदर रख देवें और बाहर से गीली मिट्टी से बंद कर देवें।

अनार की तितली: मादा तितली पुष्प कली पर अंडे देती है। इनसे लटें निकल कर बनते हुए फलों में प्रवेश कर जाती हैं। फल को अंदर ही अंदर खाती हैं फलस्वरूप फल सड़ कर गिर जाते हैं। इस कीट की रोकथाम हेतु बाग को साफ-सुथरा रखना अति आवश्यक है। निषेचन के तुरंत बाद बटर पेपर द्वारा फलों को ढकना चाहिए। फूल व फल बनते समय कार्बेरिल 2 से 4 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

मिली बग: इसके अवयस्क (शिशु) प्रायः नवंबर दिसंबर माह में बाहर निकल कर तने के सहारे चढ़ते हुए वृक्ष की कोमल टहनियों एवं फूलों पर एकत्रित हो जाते हैं तथा रस चूस कर क्षति पहुंचाते हैं। इनके प्रकोप से फल नहीं बनते हैं। इसके द्वारा एक तरह का मीठा चिपचिपा पदार्थ छोड़ा जाता है जिससे काला कवक (शूटी मोल्ड) लग जाता है। इसकी रोकथाम हेतु पेड़ के आस-पास की जगह को साफ रखें। अगस्त-सितंबर तक पेड़ के थांवले की

मिट्टी को पलटते रहें जिससे अंडे बाहर आकर नष्ट हो जाएं। क्यूनालफॉस (1.5 प्रतिशत) या एण्डोसल्फॉन (4 प्रतिशत) या मिथाइल पैराथियॉन (2 प्रतिशत) चूर्ण 50-100 ग्रा./पेड़ के थांवले में 10-25 से.मी. की गहराई में मिलावें। शिशु कीट को पेड़ पर चढ़ने से रोकने के लिए नवंबर में 30-40 से.मी. चैड़ी 400 गेज एल्काथिन की पट्टी जमीन से 60 से.मी. की ऊंचाई पर तने के चारों ओर लगाएं तथा इसके निचले (15-20 से.मी.) भाग पर ग्रीस का लेप करें। यदि पेड़ पर मिली बग चढ़ गई हो तो डाईमिथोएट 30 ई.सी. 1.5 मि.ली. या मिथाइल पैराथियॉन 50 ई.सी. या फेनथियॉन 50 ई.सी. 1 मि.ली./लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

पत्ती मोड़क (बरुथी): सितंबर माह में बरुथी के प्रकोप से पत्तियां सिकुड़ कर मुड़ जाती हैं जिससे पौधे के प्रकाश संश्लेषण क्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और पौधे की बढ़वार व फलन बुरी तरह प्रभावित होते हैं। नियंत्रण हेतु सितंबर माह में घुलनशील गंधक की मात्रा 4 ग्रा./ली. पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद अवश्य दोहराएं।

प्रमुख रोग एवं प्रबंधन

पत्ती धब्बा एवं फल सड़न: वर्षा ऋतु में पत्तियों पर छोटे छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं तथा बाद में धब्बे भूरे काले रंग के हो जाते हैं। रोगी पत्तियां गिर जाती हैं। वातावरण में अधिक नमी होने पर फल एवं कलियों पर काले धब्बे बन जाते हैं और धीरे-धीरे रोगी फल सड़ जाते हैं। इस रोग की रोकथाम टोपसिन एम 1 ग्रा. या जिनेब का 2 ग्रा./ली. पानी की दर से 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करना चाहिए।

तुड़ाई एवं उपज

फलों का रंग जैसे ही हरे से हल्का पीला या लाल में बदलने लगे तो समझ लेना चाहिए कि फल पकने की स्थिति में आ गए हैं। फूल आने के लगभग 5 से 6 माह बाद फल तैयार हो जाते हैं। फलों को अंगुलियों से थपथपाने पर धात्विक आवाज आती है। अनार के अच्छे विकसित पौधे से जिसकी उम्र 5-6 साल की हो 20 से 22 किलोग्राम फल प्रति पौधे के हिसाब से प्राप्त हो जाते हैं। अनार के फल बाजारों में वर्ष भर 70-150 रुपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से बिकते हैं। इसकी भंडारण क्षमता अधिक होने के कारण किसानों को अच्छी आमदनी मिलती है।

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

फलों की परिपक्वता, तुड़ाई एवं प्रसंस्करण

राम रोशन शर्मा, श्रुति सेठी एवं राम आसरे

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग,
भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

फलों की परिपक्वता एवं तुड़ाई

फल के विकास की वह अवस्था जिसमें फल की पूर्ण वृद्धि हो जाती है उसे 'परिपक्वता' कहते हैं। परिपक्वता की दृष्टि से फल दो प्रकार के होते हैंः क्लाइमैक्ट्रिक (क्रांतिक श्वासी) तथा नॉन-क्लाइमैक्ट्रिक (अक्रांतिक श्वासी)। क्लाइमैक्ट्रिक फलों में पक्वन पर श्वसन क्रिया की गति अचानक बढ़कर धीमी पड़ जाती है। श्वसन के एकाएक बढ़ने का कारण इथिलीन गैस का उत्पादन होता है। इस अवस्था का गुणात्मक परिवर्तनों से काफी संबंध होता है क्योंकि फल की खाद्य परिपक्वता की अधिकतम स्वीकार्यता इसी अवस्था में होती है। क्लाइमैक्ट्रिक फलों में आम, केला, सेब, खुबानी, अमरूद, पपीता, अलूचा आदि प्रमुख फल आते हैं। नॉन क्लाइमैक्ट्रिक फलों में पक्वन पर श्वसन क्रिया की गति की अधिकतम सीमा नहीं होती है। ऐसे फलों में इथिलीन गैस का स्तर बहुत कम होता है और ऐसे फलों को तुड़ाई के बाद रखकर पकाया नहीं जा सकता है। अतः इन फलों की तुड़ाई तभी करनी चाहिए जब ये फल पूर्णतः पेड़ पर ही पक जाएं। इन फलों के अंतर्गत नींबू वर्गीय फल, अंगूर, लीची, चेरी, अनार, स्ट्राबेरी आदि फल आते हैं।

विशिष्ट फलों की तुड़ाई हेतु परिपक्वतांक

आम

आम की विभिन्न किस्मों की तुड़ाई हेतु विभिन्न मापक निर्धारित किए गए हैं, परंतु सबसे बढ़िया निर्धारण रंग में बदलाव, फलों के पेड़ से गिरने की शुरुआत एवं आपेक्षित घनत्व (1.01-1.02) आदि विशेष हैं। आपेक्षित घनत्व विधि बहुत ही आसान है, जिसे किसान आसानी से प्रयोग में ला सकते हैं। आम में परिपक्वता की जांच हेतु चारों दिशाओं से फल तोड़ें और 2-4 फलों को बारी-

आम हेतु तोडक यंत्र

बारी से पानी से भरी बाल्टी में डालें। यदि आम पानी में डूब जाएं तो वे तुड़ाई हेतु तैयार हैं अन्यथा नहीं। इसके अतिरिक्त हमारे देश में 'टपका' विधि भी आम की तुड़ाई हेतु अच्छा परिपक्वतांक है। इसका तात्पर्य है कि जब आम के पेड़ से स्वयं कुछ फल पककर गिर रहे हों तो समझें कि अब फलों की तुड़ाई शुरू कर देनी चाहिए।

किन्नो

किन्नो में आकर्षक रंग पूर्ण परिपक्वता से बहुत पहले आ जाता है। अतः रंग का विकास किन्नो की तुड़ाई हेतु अच्छा सूचक नहीं है, परंतु कुल घुलनशील ठोस पदार्थों व अम्लता का अनुपात यदि 12:1 व 14:1 के बीच है तो यह तुड़ाई हेतु अति उत्तम है।

अंगूर

अंगूर पेड़ पर ही पक जाते हैं और इसकी किस्मों में विभिन्न प्रकार का रंग (पीला, जामुनी, लाल, काला आदि) आता है। अतः जब अंगूर में अच्छा रस व आकार आ गया हो एवं उनमें भरपूर व आकर्षक रंग हो तो उसे आधार मानकर तुड़ाई कर लेनी चाहिए।

पपीता

पपीते की तुड़ाई हेतु उपयुक्त परिपक्वतांक का निर्धारण नहीं हुआ है। यह एक बहुत की नाजुक फल है। अतः स्थानीय बाजार हेतु अधपके पीले फल तोड़ने चाहिए परंतु दूर-दराज के बाजारों के लिए उन फलों को तोड़ लें जिन पर अभी पीले, लाल रंग की धारियां आना शुरू हो गई हों।

अमरूद

अमरूद के फल लगने के 17-20 सप्ताह के बीच तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं, परंतु यह एक ऐसा फल है जिसे लोग परिपक्वता की विभिन्न अवस्थाओं पर खाना पसंद करते हैं। जैसे कुछ लोग इसे अधपका, कुछ कच्चा व कुछ पूर्ण रूप से पके फल खाना पसंद करते हैं, परंतु बाजार में उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त करने हेतु फलों के पूर्ण रूप से परिपक्व होने से 2-3 सप्ताह पूर्व तुड़ाई करनी चाहिए।

बेर

बेर के फल पेड़ पर ही पककर तैयार हो जाते हैं। यदि उनकी तुड़ाई उचित अवस्था पर की जाए तो वे तुड़ाई के बाद भी पकते हैं। अतः जब फलों का रंग हरे से पीला पड़ना शुरू हो जाए तो समझें कि फलों की तुड़ाई का समय आ गया है।

अनन्नास

अनन्नास के पके फल ही तोड़ने चाहिए। परिपक्व फल जब पकने लगते हैं तो उनका रंग हरे से पीला होने लगता है, फल पर स्थित आँखें पीली पड़ने लगती हैं तथा कभी-कभी गहरी रंग की दिखाई देती हैं। इस समय फल तोड़ने योग्य हो जाते हैं। दूर-दराज के बाजार में भेजने के लिए पीत-हरित अवस्था आने पर फल तोड़ लिए जाते हैं। यह अवस्था फल पकने के लगभग दो सप्ताह पहले ही आ जाती है। आमतौर पर फलों की आँख जब हल्की पीली दिखाई देने लगे, फल तभी तोड़ लिए जाते हैं, जिससे फल जल्दी खराब नहीं होते।

चीकू

चीकू की तुड़ाई हेतु निम्नलिखित परिपक्वतांक उपयोग में लाए जाते हैं:

1. फलों की पूर्ण परिपक्वता पर उनका छिलका आलू के छिलके के रंग जैसा या फीका नारंगी हो जाता है।
2. जब फलों को खुरचा जाता है, तब छिलके के ठीक नीचे वाला हिस्सा पीला दिखाई देता है।
3. फल के छिलके से भूरे शल्की पदार्थ अलग हो जाते हैं तथा फल की सतह चिकनी हो जाती है।
4. फल से निकलने वाला दुधिया स्राव समाप्त हो जाता है।
5. फल के सिरे से जुड़ा सूखा हुआ कांटा (पुष्प का अवशेष) छूने पर आसानी से झड़ जाता है।

नारंगी

नारंगी के फलों में पुष्पन से लेकर फल पकने तक 9 महीने का समय लगता है। पूरी तरह पक जाने पर फल हरे से नारंगी रंग में परिवर्तित हो जाते हैं, परंतु रंग की सघनता जलवायु से अधिक प्रभावित होती है। जैसे आर्द्र जलवायु वाले क्षेत्रों में फल पकने के बाद हरे ही रहते हैं। उत्तरी भारत में नारंगी की तुड़ाई का मुख्य समय नवंबर से फरवरी तथा आंध्र प्रदेश में सतगुड़ी नारंगी की फसल नवंबर से मार्च तक उपलब्ध होती है एवं महाराष्ट्र में नारंगी नवंबर में तैयार हो जाती है।

अनार

अनार के फलों की तुड़ाई हेतु निम्नलिखित तुड़ाई परिपक्वतांक उपयोगी रहते हैं:

1. फलों का रंग किस्म के अनुसार हरे से बदलकर पीला, गुलाबी या चटक लाल हो जाता है।
2. फलों को हाथ से थपथपाने पर धातु जैसी आवाज आती है।
3. पुष्पन के बाद फल किस्म-विशेष के अनुसार 135-170 दिनों में तुड़ाई हेतु तैयार होते हैं।

4. कुल घुलनशील ठोस व अम्लता का अनुपात (70:1) अच्छा परिपक्वतांक है।

लीची

लीची के फलों की तुड़ाई हेतु वैसे तो कई परिपक्वतांक प्रयोग में लाए जाते हैं, परंतु इसका रंग सबसे उपयोगी परिपक्वतांक है। इसके अतिरिक्त कुल घुलनशील ठोस व अम्लता का अनुपात (70:1) भी अच्छा परिपक्वतांक माना गया है।

केला

हमारे देश में केले को साधारणतः कच्चा ही तोड़ लिया जाता है और बाद में पकाकर दूर दराज के क्षेत्रों में भेजा जाता है, जो बहुत ही गलत प्रथा है। उपर्युक्त तुड़ाई हेतु फलों के रंग में परिवर्तन, जब फलों की मेढ़िया गोल होना शुरु हो जाएं, पुष्पक्रम के निचले हिस्से गिरना शुरु हो जाएं, गूदे व छिलके का अनुपात 10:1 के लगभग हो, आदि परिपक्वतांक अच्छे गिने जाते हैं।

सेब

फलों के रंग में बदलाव, दृढ़ता तथा सुवास के विकास आदि का निरीक्षण कर फलों को समय से तोड़ लेना चाहिए। पूर्ण फूल खिलने से तुड़ाई तक लिए गए दिनों की एक निश्चित संख्या होती है, यह भी सेब में फलों को तोड़ने का सबसे विश्वसनीय परिपक्वतांक होता है। रैड डिलिशियस किस्म को पूर्ण रुप से फूलों के खिलने के 133-139 दिन बाद, गोल्डन डिलिशियस को 148-154 दिन बाद तथा टाइडमैन अर्ली वारसेस्टर किस्म को पूर्ण फूल खिलने के 88-94 दिन बाद तोड़ लेना चाहिए। जब लाल रंग की किस्मों में फल की सतह का रंग हरे से बदलकर पीला हो जाए तो फलों को परिपक्व समझना चाहिए। अधिकतर फल पेड़ पर एक साथ नहीं पकते, अतः फलों को कई बार तोड़ा जाता है। आजकल सेब में तुड़ाई हेतु स्टार्च-आयोडीन का अनुपात परिपक्वतांक उपयोग में लाया जाता है। उपयुक्त तुड़ाई हेतु यह अनुपात 2:5/6 होना चाहिए।

बाग से किल्टे में सेबों को ले जाती एक हिमाचली महिला

आड़ू

आड़ू के फलों को उस समय तोड़ना चाहिए जब उनका रंग बदलने लगता है। फलों को तोड़ने के समय खरोंच से बचाना चाहिए। तुड़ाई हेतु पुष्पन के बाद दिनों की संख्या, फलों का आकार, दृढ़ता, स्वाद आदि परिपक्वतांक भी प्रयोग में लाए जाते हैं।

आलूबुखारा

आलूबुखारे के फलों का रंग किस्म के अनुसार गहरा बैंगनी या लाल बैंगनी हो जाए तब फलों को तोड़ना चाहिए। परिपक्वता पर फलों का घनत्व कम हो जाता है तथा उनमें कुल घुलनशील ठोस की मात्रा 11-18 प्रतिशत तक हो जाती है। पेड़ पर फल एक समय पर नहीं पकते हैं, अतः उन्हें 2-3 बार में तोड़ा जाता है।

नाशपाती

नाशपाती की तुड़ाई हेतु वैसे तो कई परिपक्वतांक हैं पर रंग में बदलाव, पूर्ण पुष्पण से दिनों की संख्या, कुल घुलनशील ठोस की मात्रा आदि परिपक्वतांक प्रयोग में लाए जाते हैं।

फलों का श्रेणीकरण एवं पैकिंग

छंटाई एवं श्रेणीकरण

ग्रेडिंग यानी श्रेणीकरण एक तरह से दूर-दराज के व्यापार हेतु एक आधार होता है क्योंकि इसमें फलों का उनके गुणों के अनुसार वर्णन होता है, जिनको क्रेता और विक्रेता दोनों भली-भांति समझ सकते हैं। इसके अतिरिक्त श्रेणीकरण से फलों का उचित मूल्य निर्धारित करना सरल हो जाता है। श्रेणीकरण के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं:

कटे-फटे या असंतोषजनक फलों को छांटकर अलग कर देना

इस विधि में असंतोषजनक फलों को स्वस्थ फलों से अलग कर दिया जाता है क्योंकि ऐसे फलों से दूसरे स्वस्थ फलों में रोग बहुत तेजी से फैलता है। अतः पैकिंग कार्य की दृष्टि से यह बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त खराब फल ढेर में बहुत थोड़े अनुपात में होते हुए भी अनाकर्षक प्रतीत होते हैं जिनके कारण अच्छे फलों के मूल्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

संपीडन

इसमें किस्म, आकार, बाहरी रूप, रंग, गुणता, अन्य कमियों आदि को सम्मिलित किया जाता है। किसी किस्म-विशेष के अंतर्गत फल का आकार श्रेणीकरण के लिए सबसे अधिक स्पष्ट कारक होता है। अधिकांश फलों में उनके व्यास तथा भार के अनुसार श्रेणीकरण किया जाता है। फल के बाह्य रुप में यह ध्यान रखा जाता है कि फल देखने में अच्छा हो तथा रंग चमकदार व आकर्षक हो। आंतरिक गुणों में शर्करा तथा अम्ल का अनुपात अधिक महत्व रखता है क्योंकि फलों का स्वाद, शर्करा व अम्ल के एक विशेष अनुपात पर सबसे अधिक निर्भर करता है। हमारे देश में श्रेणीकरण के लिए फल के माप पर अधिक ध्यान दिया जाता है, जबकि विदेशों में फल की स्वच्छता, भार, नाप, रूप, रंग, दाग, परिपक्वता आदि पर जोर दिया जाता है। कभी-कभी व्यापारी पैकिंग के समय पेटियों में सबसे नीचे खराब फल (छोटे या बेरूपी) रखकर उसके ऊपर लगभग 25 प्रतिशत अच्छे आकार के चमकदार फल रखकर बिक्री के लिए भेजते हैं इसे 'टोपिंग' कहते हैं। इससे खरीदने वालों को कभी-कभी धोखा हो जाता है। प्रायः ऐसा देखा गया है कि जब पेटियां मंडियों में खोली जाती हैं तो अक्सर ग्राहक सर्वप्रथम नीचे वाली तहों में फलों का निरीक्षण करता है और पेटी के दाम नीचे वाली तहों के घटिया फलों के आधार पर ही निश्चित करता है। इस प्रकार अच्छे फलों के मूल्य पर घटिया किस्म के फलों का बुरा प्रभाव पड़ता है और कम मूल्य मिलता है। अतः टोपिंग से क्रेता व विक्रेता दोनों को घाटा हो सकता है। कुछ प्रमुख फलों के श्रेणीकरण की निम्नलिखित विधियां हैं:

सेब में छंटाई एवं श्रेणीकरण

हमारे देश में आम का क्रमबद्ध श्रेणीकरण कहीं नहीं किया गया है क्योंकि इसके लिए कोई मानक निश्चित नहीं किया गया है। बाग में फल तोड़ने के बाद इसमें श्रेणीकरण सड़े गले फलों को अलग करने तक ही सीमित है। थोक व्यापारी जब आम को खरीदता है तो किस्म तथा आकार के अनुसार श्रेणीकरण करके वितरण क्षेत्रों में भेज देता है। गुजरात तथा महाराष्ट्र में अलफांसो आम का श्रेणीकरण ठीक ढंग से किया जाता है। इसी प्रकार दशहरी किस्म का श्रेणीकरण भार तथा रंग रूप के अनुसार किया जाता है।

केले के फलों का श्रेणीकरण, फलियों के व्यास तथा लंबाई के अनुसार किया जाता है जो किस्मों के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। परिपक्वता के आधार पर भी फलों का श्रेणीकरण होता है। उदाहरणतः एकसार पीले या हरे सिरे वाले फलों की मांग अधिक होती है।

अंगूर के गुच्छों के श्रेणीकरण के लिए सर्वप्रथम गुच्छों से रोगी, कीटों द्वारा खाए फल, सूखे, कच्चे, बहुत ज्यादा पके या बहुत छोटे दानों को सावधानीपूर्वक कैंची से काटकर निकाल देना चाहिए। इसके बाद गुच्छों का आकार व रंग के अनुसार श्रेणीकरण किया जाता है। साधारणतः गुच्छों के श्रेणीकरण के लिए दो ग्रेड रखे जाते हैं। 'ए' श्रेणी और 'बी' श्रेणी।

हमारे देश में सेब के फल की सात श्रेणियां होती हैं (1) सुपर लार्ज या सुपर (फल का व्यास कम से कम 81 मि.मी.) (2) एक्स्ट्रा लार्ज या स्पेशल (फल का व्यास 75

-80 मि.मी.), (3) लार्ज या फेन्सी (फल का व्यास 69-74 मि.मी.), (4) मीडियम या सेलेक्टेड (फल का व्यास 63-73 मि.मी.), (5) स्माल या कमर्शियल (फल का व्यास 57-62 मि.मी.), (6) एक्स्ट्रा स्माल या जनता (फल का व्यास 51-56 मि.मी.) और (7) पिट्टू (फल का व्यास 45-50 मि.मी.)।

नींबू वर्ग के फलों का श्रेणीकरण निम्न विधियों द्वारा होता है। माल्टा में चार श्रेणियां एक्स्ट्रा स्पेशल (8 सें.मी. फल का व्यास), स्पेशल (7.5 सें.मी. फल का व्यास), गुड़ (6.75 सें.मी. फल का व्यास) तथा 'ए' श्रेणी (5 सें.मी. फल का व्यास) के अनुसार होता है। मौसंबी में तीन श्रेणियां, एक्स्ट्रा स्पेशल (7.5 सें.मी. व्यास), स्पेशल (6.7 सें.मी. व्यास) तथा गुड़ (6.25 सें.मी. व्यास) आदि होती हैं। संतरे के आकार के अनुसार पांच श्रेणियां, एक्स्ट्रा स्पेशल (8 सें.मी. व्यास), स्पेशल (7.5 सें.मी. व्यास), गुड़ (6.75 सें.मी. व्यास), 'ए' (6.25 सें.मी. व्यास) तथा बी (5.25 सें.मी. व्यास) होती हैं।

हमारे देश में अधिकतर फलों के लिए अभी तक श्रेणीकरण के लिए कोई मानक निश्चित नहीं किए गए हैं लेकिन इस दिशा में भारतीय मानक संस्थान, नई दिल्ली ने विभिन्न फलों के लिए कदम उठाए हैं। वैसे निम्न सुझावों द्वारा फलों को आकार व गुणता (रंग-रुप, स्वच्छता) के आधार पर श्रेणीकरण करना लाभप्रद रहता है।

फलों की पैकिंग

श्रेणीकरण के बाद फलों के संग्रहण, परिवहन तथा विपणन के लिए पैकिंग अति आवश्यक है। पिछले कुछ वर्षों में हमारे देश में पैकिंग के क्षेत्र में काफी सुधार हुआ है जिसके फलस्वरूप फल के व्यवसाय पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा है।

पैकिंग के पात्र

जो वस्तु पैकिंग में प्रयोग की जाती है उसकी उपयोगिता भिन्न-भिन्न स्थानों पर विभिन्न फलों के लिए भिन्न हो सकती है। ये कई प्रकार की होती हैं जैसेः-

टोकरियांः हमारे देश में फल अधिकतर टोकरियों में ही पैक किए जाते हैं। ये टोकरियां अधिकतर बांस, अरहर की लकड़ी, शहतूत, फालसा आदि से तैयार की जाती हैं। विभिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न माप व आकार की टोकरियां प्रयोग में लाई जाती हैं। टोकरी के माप का कोई मानकीकरण नहीं है। पैकिंग के लिए टोकरियां बहुत सस्ती पड़ती हैं लेकिन दूर-दराज के परिवहन के लिए ये उपयुक्त नहीं होती हैं, क्योंकि ये कम मजबूत होती हैं।

बक्से या पेटियांः पैकिंग के लिए लकड़ी तथा कार्डबोर्ड के बक्से भी प्रयोग होते हैं। फलों को दूर-दराज के स्थानों में भेजने के लिए लकड़ी के क्रेट ज्यादा उपयोगी होते हैं। बक्सों में भी विभिन्न प्रकार के आकार होते हैं। फलों की पैकिंग कार्ड बोर्ड के बक्सों में दिल को लुभाने वाली होती हैं। इसमें हवा के आदान-प्रदान के लिए छिद्र होते हैं। इनके अंदर के भाग मोम से लेप दिए जाते हैं। इनकी कीमत लकड़ी के बक्सों से ज्यादा पड़ती है। हवाई जहाज से फलों को दूर-दराज या विदेशों में भेजने के लिए ऐसे बक्सों का प्रयोग किया जाता है।

लकड़ी के बक्से में पैक सेब

थैलेः पॉलीथीन के थैले, हल्के भार वाले रेशे के कार्टून, प्लास्टिक, सिलोफेन तथा विशेष कागज या कपड़े के थैले पैकिंग के लिए पुराने समय से प्रयोग में लाए जा रहे हैं। फलों को फुटकर बेचने के लिए पॉलीथीन के थैले अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। यह पारदर्शक, नमी प्रतिरोधक तथा गैसों के आदान-प्रदान में सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त ये मजबूत, भार में हल्के तथा सुविधाजनक होते हैं और

इन पर आसानी से छपाई की जा सकती है। थैले विभिन्न आकार के होते हैं, जैसे 0.5 कि.ग्रा. फल की पैकिंग के लिए थैलों का साइज 25 X 30 सें.मी. तथा मोटाई 200 गेज उचित मानी गई है। इनमें हवा के आदान-प्रदान के लिए 0.6 सें.मी. व्यास के 20 से 24 छिद्र होते हैं। पारदर्शक थैलों में फल का प्राकृतिक सौन्दर्य बहुत ही लुभावना प्रतीत होता है और उपभोक्ता इसे अच्छे मूल्य पर खरीदता है। प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि अंगूर, सेब तथा नीबू के फलों को पॉलीथीन के थैलों में प्रीपैक करके कमरे के तापमान पर संग्रहण करने से उनके जीवन काल में 3,9,10 दिन की वृद्धि हो जाती है। इसी प्रकार संतरे तथा नींबू के फलों को प्रीपैक करके शीत संग्रहण करने से उनके जीवन काल में 4 तथा 5 सप्ताह की वृद्धि हो जाती है।

फल परिरक्षण एवं मूल्यवर्धन

फलों का परिरक्षण निम्न विधियों द्वारा किया जाता है:

निर्जर्मीकरण द्वारा: किसी भी खाद्य पदार्थ के समस्त जीवाणुओं को नष्ट कर देने की क्रिया को निर्जर्मीकरण कहते हैं। इसके लिए खाद्य पदार्थों को बहुत अधिक गर्म करना पड़ता है, जिससे उनके विटामिन, रंग, स्वाद आदि नष्ट हो जाते हैं। इसलिए खाद्य पदार्थों को केवल इतना ही गर्म करते हैं कि इनमें उपस्थित जीवाणु निष्क्रिय हो जाएं। इस विधि को 'संसाधन' कहते हैं। डिब्बाबंद फलों को इसी सिद्धान्त के द्वारा संरक्षित किया जाता है।

फलों को साधारणतः उबलते पानी में संसाधित किया जात है क्योंकि ये खटासयुक्त होते हैं। इनके जीवाणु पानी में उबलने के तापमान (100^0 सेल्सियस) पर निष्क्रिय हो जाते हैं। विभिन्न फलों के संसाधन का समय उनकी संरचना के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। डिब्बे के आकार के अनुसार भी संसाधित करने का समय अलग-अलग होता है। उदाहरणतः बड़े आकार के डिब्बों के संसाधन में अधिक समय तथा छोटे आकार के डिब्बे के लिए कम समय की आवश्यकता पड़ती है।

चीनी द्वारा: यदि किसी पदार्थ में चीनी की मात्रा 66 प्रतिशत से अधिक हो जाती है तो वह पदार्थ स्थाई रूप से सुरक्षित हो जाता है। चीनी जीवाणुओं के लिए विष का कार्य नहीं करती है बल्कि उनके गाढ़े घोल में जीवाणु निष्क्रिय या नष्ट हो जाते हैं। जैसे जैम, जैली, मार्मलेड, मुरब्बा, कैन्डी, सीरप आदि प्रसंस्कृत उत्पाद इसी सिद्धांत पर सुरक्षित किए जाते हैं।

नमक द्वारा: नमक जीवाणुओं के लिए परासरण द्वारा काम करने के साथ-साथ उनके लिए विष का काम भी करता है। इसके अतिरिक्त नमक से जीवाणुओं की कोशिकाओं का विदारण भी हो जाता है। 15 प्रतिशत या इससे अधिक नमक द्वारा फलों का स्थाई परिरक्षण किया जाता है। विभिन्न फलों से बने अचार इसी सिद्धान्त पर सुरक्षित रहते हैं, क्योंकि जिस फल में नमक मिलाया जाता है उसे वह आंशिक रुप से निर्जलीकृत कर देता है। यह फलों से नमी सोख लेता है तथा नमी के अभाव में सूक्ष्मजीव वृद्धि नहीं कर पाते हैं। नमक ऑक्सीजन की घुलनशीलता को भी कम कर देता है जिससे सूक्ष्मजीवों की वृद्धि रुक जाती है।

फलों से जूस

जैली

कैंडी

एसिटिक अम्ल द्वारा: दो प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल की उपस्थिति में खाद्य पदार्थों का स्थाई परिरक्षण हो जाता है। सिरके में लगभग 4-5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल होता है। इसलिए इसके द्वारा कई अचार संरक्षित रहते हैं।

रसायनों द्वारा: रसायनों के सीमित प्रयोग से कुछ खाद्य पदार्थों का स्थाई परिरक्षण हो जाता है, परंतु इन रासायनिक पदार्थों का प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि इन्हें सही मात्रा में ही डाला जाए। भारतीय फल पदार्थ आदेश (1955) के अनुसार हमारे देश में निम्नलिखित दो रासायनिक पदार्थों को फलों के परिरक्षण हेतु प्रयोग किया जाता है:

पौटेशियम मेटाबाईसल्फाइट या सोडियम मेटाबाईसल्फाइट एवं सोडियम बेंजोएट

उपर्युक्त दोनों रासायनिक पदार्थ केवल खटासयुक्त खाद्य पदार्थों के परिरक्षण में ही प्रभावशाली होते हैं। इन्हें पानी में अच्छी तरह घोलकर उत्पाद में मिलाना चाहिए। पौटेशियम मेटाबाईसल्फाइट को पानी में घोलने पर सल्फर डाईऑक्साइड गैस और सोडियम बेंजोएट को पानी में घोलने पर बेंजोइक अम्ल बनते हैं। ये दोनों, उत्पाद में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि व प्रसारण को रोकते हैं जिससे उत्पादों को कई दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

खमीर द्वारा (किण्वन): खमीर बनाना एक ऐसी क्रिया होती है जिसमें जीवाणुओं तथा एन्जाइमों की क्रिया से खाद्य पदार्थों के कार्बोहाइड्रेटस नष्ट हो जाते हैं। इस क्रिया से निर्मित पदार्थों से भी खाद्य पदार्थों का स्थाई संरक्षण हो जाता है। किण्वन तीन प्रकार से होता है:

1. एल्कोहलीय किण्वन: वह क्रिया है जिसमें ईस्ट की कार्बोहाइड्रेटस पर क्रिया से एल्कोहल तथा कार्बन-डाइऑक्साइड गैस बनती है। एल्कोहल की अधिक मात्रा में जीवाणुओं की वृद्धि रुक जाती है। उत्पाद में 18 प्रतिशत एल्कोहल होने पर सारे जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। शराब इसी सिद्धांत पर बनाई जाती है।

2. एसिटिक किण्वन: एसिटिक अम्ल जीवाणु की क्रिया द्वारा एल्कोहल से एसिटिक अम्ल तैयार होता है जो जीवाणुनाशी होता है। दो प्रतिशत एसिटिक अम्ल में अधिकांश खाद्य पदार्थ स्थाई रूप से सुरक्षित रह जाते हैं। इसका प्रयोग कैचप, अचार तथा चटनी बनाने में किया जाता है। सिरका फलों के रस के खमीर द्वारा बनाया जाता है। इसमें एसिटिक अम्ल की मात्रा 4-5 प्रतिशत होती है।

3. लेक्टिक किण्वन: इस क्रिया में खाद्य पदार्थों के कार्बोहाइड्रेटस लेक्टिक अम्लीय जीवाणुओं की क्रिया से लेक्टिक अम्ल में बदल जाते हैं। यही लेक्टिक अम्ल जीवाणुओं की क्रिया को कम करता है। कई प्रकार के अचार लेक्टिक अम्ल में सुरक्षित रहते हैं।

निर्जलीकरण द्वारा: जीवाणुओं के पनपने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। यदि उन्हें पानी न मिले तो इनका पनपना बंद हो जाता है। खाद्य पदार्थों को धूप या मशीन द्वारा सुखा देने से इनमें उपस्थित पानी उड़ जाता है तथा कुल घुलनशील पदार्थों की मात्रा बढ़कर 70-72 प्रतिशत हो जाती है। बहुत से फलों को इसी सिद्धांत पर सुखाकर सुरक्षित रखा जाता है। सुखाने के बाद इन्हें हवाबंद डिब्बों में रखना अति आवश्यक होता है अन्यथा वे वायुमण्डल से नमी सोख लेते हैं तथा उन पर फफूंदी लग जाती है। किशमिश, मुनक्का, छुहारे, अंजीर, आमचूर आदि विभिन्न फलों के सूखे उत्पाद निर्जलीकरण के सिद्धान्त पर सुरक्षित रखे जाते हैं।

जीवन की जड़ संयम की भूमि में जितनी गहरी जमती है और सदाचार का जितना जल दिया जाता है उतना ही जीवन हरा भरा होता है और उसमें ज्ञान का मधुर फल लगता है।

- दीनानाथ दिनेश

मुनक्का एकः लाभ अनेक

विद्या राम सागर व जितेंद्र कुमार बैरवा

खाद्य विज्ञान और फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

किशमिश या मुनक्का एक प्रकार का सूखा हुआ अंगूर है। यह स्वास्थ्य के लिए काफी अच्छा होता है एवं कई प्रकार की स्वास्थ्य संबंधित समस्याओं को ठीक करता है। मुनक्का एक ऊर्जावान शुष्क फल के रूप में जाना जाता है। आयुर्वेद में तो इसे औषधीय गुणों का भंडार बताया गया है। मुनक्का के स्वास्थ्यवर्धक गुण इसमें मौजूद शर्करा (ग्लूकोज) की मात्रा के कारण होते हैं। इसमें अंगूर की तुलना में आठ गुना अधिक शर्करा होती है। इसमें मौजूद शर्करा अंगूर की तरह उत्तम प्रकार की होती है, क्योंकि इस शर्करा का अधिकतर हिस्सा ग्लूकोज और फलों की शर्करा से बनता है। ग्लूकोज शरीर को जल्दी ऊर्जा देने का काम करता है। इसलिए मुनक्का कमजोरी और रोगों के सभी मामलों में कारगर है। किशमिश या मुनक्का फाइबर, प्रतिऑक्सीकारक और कैल्शियम के अच्छे स्रोत होते हैं। कैल्शियम और सूक्ष्म पोषक तत्व, बोरॉन के होने के कारण वे हमारी हड्डियों और दांतों को मजबूत करने में सहायता करते हैं। बोरॉन हड्डियों में कैल्शियम के त्वरित अवशोषण में सहायता करता है और हड्डियों के खतरनाक रोग, ऑस्टियोपोरोसिस को रोकने में सहायता करता है। मुनक्का में एक अमूल्य कैटेचिन नामक प्रतिऑक्सीकारक होता है। इसमें कैम्फेरोल एक फ्लैवोनॉयड भी होता है जो कोलन कैंसर के ट्यूमर के विकास को कम करने में सहायता करता है।

मुनक्का के लाभ

मुनक्का अधिकांश रोगों जैसे हृदय रोग, पेट के रोग और फेफड़ों के रोगों को ठीक करने में सहायता करता है। लंबी बीमारी के बाद मुनक्का तेजी से राहत पाने के लिए बेहद लाभदायक है। यह प्रतिरक्षा प्रणाली के कार्य को बेहतर बनाने में सहायता करता है। यह पोटैशियम में अच्छा होता है जो रक्त वाहिकाओं में तनाव को कम करता है। पोटैशियम के अतिरिक्त इसमें अन्य महत्वपूर्ण पोषक तत्व भी होते हैं जो रक्तचाप को नियंत्रित करने में सहायता करते हैं।

मुनक्का का सेवन हमारे शरीर में निम्नलिखित प्रकार से लाभ पहुंचाता है -

स्मरण शक्ति व आँखों की रोशनी बढ़ाने में

मुनक्का में फॉस्फोरस और विटामिन की अच्छी मात्रा होती है जो स्मरणशक्ति में क्षति को रोकने में सहायता करते हैं। मस्तिष्क के सही रूप से कार्य करने के लिए फॉस्फोरस की आवश्यकता होती है। फॉस्फोरस की कमी अल्जाइमर, डिमेंशिया और संज्ञानात्मक कमजोरी की शुरुआत से जुड़ा हुआ है। मुनक्का लंबी और अल्पकालिक स्मृति की क्रमिक गिरावट को रोकता है। मुनक्का का सेवन छात्रों और बुजुर्गों के लिए बहुत ही अच्छा होता है।

आँखों की कोशिकाओं में रक्त संचरण और महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की आपूर्ति को बढ़ाने में किशमिश बहुत उपयोगी होती है। वे ग्लूकोमा, रात का अंधापन एवं मोतियाबिंद के इलाज में लाभदायक होते हैं।

खून की कमी व मुंह की समस्याओं को दूर करने में सहायक

जब आप अक्सर थकावट, कमजोरी, पीली त्वचा या सांस की तकलीफ महसूस करते हैं तो ये लक्षण एनीमिया के होते हैं। ऐसी स्थिति में हमें हीमोग्लोबिन के स्तर की जांच करवानी चाहिए। किशमिश में लौह तत्व, मैंगनीज, तांबा और फोलेट होते हैं। ये पोषक तत्व लाल रक्त कोशिकाओं के उत्पादन को बढ़ावा देने में सहायता करते है। यदि आप ऐसी समस्याओं से पीडित हैं तो मुनक्का खाना आपके लिए लाभदायक हो सकता है।

किसी भी प्रकार की मुंह की समस्या को दूर करने के लिए मुनक्का बहुत ही उपयोगी है। बस 8-10 मुनक्का और ब्लैकबेरी के 3-4 पत्ते लें और उन्हें 10 मिनट के लिए एक गिलास पानी में उबालें। दिन में 3-4 बार इस काढ़े का उपयोग करें। यह मुंह की किसी भी प्रकार की समस्या विशेष तौर पर मुंह के छालों का इलाज करने के लिए यह एक प्रभावी घरेलू उपाय है।

कैंसर व गुर्दे की पथरी को रोकने में

शरीर में कैंसर कोशिकाओं के विकास के पीछे मुक्त कण होते हैं। मुनक्का में व्याप्त कैटेकिन उन एंजाइमों की गतिविधि को रोकते हैं जो मुक्त कणों को उत्पन्न करते हैं। कैंसर की रोकथाम के लिए आप अपने आहार में मुनक्का को शामिल कर सकते हैं। ठीक इसी प्रकार गुर्दे के पथरी के गठन को रोकने में मुनक्का सहायता करता है।

त्वचा में चमक व बालों के विकास में

किशमिश दांतों के क्षय और गुहाओं के गठन को रोकता है। चूंकि यह विटामिन 'ए' का समृद्ध स्रोत है जो हमारी आंखों के लिए लाभदायक है। इसकी रिजर्वट्रोल नामक पॉलिफिनोल के कारण यह त्वचा एजिंग की प्रगति को धीमा कर देता है। यह रक्त परिसंचरण को बढ़ाता है जो आपकी त्वचा में प्राकृतिक चमक देता है। मुनक्का में लौह तत्व की अच्छी मात्रा होती है। यह रक्त संचरण को बढ़ावा देता है जो बालों के विकास के लिए टॉनिक के रुप में कार्य करता है। मुनक्का पाचन तंत्र से जहरीले पदार्थों को खत्म करते हैं। वे जीवाणु विकास और आंतों के रोगों को रोकने में लाभदायक होते हैं।

कोलेस्ट्रॉल व चक्करो को नियंत्रित करने में

जब मुनक्का का नियमित सेवन किया जाता है तो यह आपके शरीर में कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करता है और हृदय के स्वास्थ्य में सुधार करता है। यह रक्त के थक्कों के निर्माण की रोकथाम में सहायता करता है जो दिल के दौरे से बचाता है।

चक्कर आने की समस्या को नियंत्रित करने के लिए मुनक्का उपयोगी है। आप 100 ग्राम मुनक्का लें और उन्हें घी में भून लें। फिर उन्हें एक चुटकी खड़े नमक के साथ रोजाना उपभोग करें। आप 8-10 मुनक्का को रात में पानी में भिगों दें। अगली सुबह इनके बीज हटाने के बाद उन्हें पानी में अच्छी तरह मसल दें, फिर इसे खाली पेट सेवन करें। यह आपके चक्कर आने की परेशानी को कम कर सकता है।

हड्डियों का गठन करने व सिर दर्द रोकने में

हड्डी के स्वास्थ्य के लिए कैल्शियम और बोरॉन पोषक तत्व आवश्यक होते हैं। हड्डियों का गठन और कैल्शियम का उचित अवशोषण बोरॉन का काम होता है। ये दोनों खनिज मुनक्का में मौजूद रहते हैं। यह आस्टियोपोरोसिस की संभावना को कम करता है।

यदि आपको अक्सर सिर दर्द होता है तो इस समस्या को मुनक्का का उपयोग कर दूर किया जा सकता है। बस 8-10 मुनक्का, 10 ग्राम मुलेठी और 10 ग्राम मिश्री लें। फिर तीनों को पीस लें। इस पाउडर की एक चुटकी आपके सिर दर्द का उपचार कर सकती है जो विशेष रुप से अम्लता के कारण होता है।

प्राकृतिक लैक्सेटिव (रेचक) के रुप में

मुनक्का अच्छे रेचक गुणों के लिए जाने जाते हैं। कब्ज से पीड़ित लोगों के लिए मुनक्का लाभदायक होती है अगर वे रोजाना कुछ मुनक्का का सेवन करते हैं, खासकर रात में सोने से पहले। अच्छे से मल को त्यागना कोलन कैंसर होने की संभावना को कम करता है।

इसके अतिरिक्त मुनक्का को दमा, टायफाइड एवं एनीमिया आदि को ठीक करने एवं रोगों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने हेतु प्रयुक्त करते हैं।

गर्मियों में वरदान है तरबूज एवं खरबूजे का सेवन

शालिनी गौड़ रुद्रा एवं विद्या राम सागर

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

गर्मियों के आते ही बाजार में तरबूज व खरबूजे दिखने लगते हैं। गर्मी की तीखी धूप से बचाने के लिए प्रकृति के इन उपहारों की बात ही निराली है। इन फलों में न केवल मिठास व ठंडक है बल्कि ये स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत लाभकारी हैं। देखते ही जिन फलों से गर्माहट का अहसास खत्म हो जाए, हम इस लेख में उन्हीं फलों की बात करेंगे। वर्ष 2014 में इन फलों का कुल वैश्विक उत्पादन 29.6 लाख टन था, जिसमें चीन की भागीदारी 44 प्रतिशत थी।

विभिन्न प्रकार के तरबूज एवं खरबूजे

तरबूजः तरबूज में पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह पौटेशियम, विटामिन ए, सी एवं बी का उच्च स्रोत है। (तालिका-1) इसका लाल रंग लाईकोपीन के कारण होता है जो एक प्रतिऑक्सीकारक है एवं दिल के रोग एवं उच्च रक्तचाप के लिए लाभदायक है।

कार्यात्मक लाभ

1. तरबूज दिल के रोग की रोकथाम हेतु एक अच्छा फल है। यह लाभ सिट्रुलिन नामक घटक के कारण होता है जो कि नसों में बुरे कॉलेस्ट्राल को बढ़ने से बचाता है और नसों की कसावट कम करता है।
2. लाइकोपीन, जो तरबूज को लाल रंग देता है, सूजन को घटाने का काम करता है।
3. तरबूज शरीर को तरल प्रदान करने का सबसे अच्छा तरीका है। यह गुर्दे पर जोर डाले बिना मूत्र का प्रसार बढ़ाता है।
4. कसरत करने के बाद, मांसपेशियों की थकान मिटाने के लिए तरबूज का जूस काफी अच्छा होता है। इसमें पाए गए सिट्रुलिन अमीनो अम्ल मांसपेशियों से लैक्टिक अम्ल निकालने में सहायता करते हैं। प्राकृतिक स्रोत्र से मिला सिट्रुलीन कृत्रिम अवयव से ज्यादा लाभकारी होता है। तरबूज के रस से मांस पेशियों को अधिक ऑक्सीजन भी मिलती है जो कि थकान मिटाने के लिए आवश्यक है।
5. आंखों में उम्र के साथ बढ़ने वाले मांसपेशियों के पतन को रोकने में भी लाइकोपीन लाभकारी होता है।
6. लाइकोपीन, बदलते मौसम की वजह से बच्चों में ठंड व सर्दी-जुकाम होने से बचाता है।
7. उच्च रक्तचाप की रोकथाम करने में तरबूज का गाढ़ा किया जूस लाभकारी पाया गया है।
8. तरबूज में उपस्थित विटामिन बाल, त्वचा व हड्डियों के लिए अच्छे होते हैं।
9. रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में भी तरबूज सहायता करता है। इसमें पाए गए विटामिन सी, ए, बी 6, शरीर में एंटीबाडी एवं रक्त में उपस्थित लाल रक्त कणिकाओं को बनाने में सहायता करते हैं।

अनूठे तरबूज

10. तरबूज शरीर के अम्ल स्तर को सही रखने में सहायता करता है क्योंकि यह क्षारीय होता है और शरीर में भोजन से उत्पन्न अम्ल तत्वों को शांत करता है।

तरबूज खरीदते समय विशेष जानकारी

आमतौर पर लोग तरबूज खरीदते समय असमंजस में पड़ जाते हैं क्योंकि खूशबू से या रंग से अंदर के फल की जानकारी मिलना काफी कठिन होता है। जानकारी हेतु कुछ सरल उपाय इस प्रकार हैंः

- असमान आकार, कटे-फटे या गड्ढें वाले फलों को ना खरीदें। इस प्रकार के फलों को सही धूप या पानी नहीं मिला होगा।
- तरबूज को उठाएं। अपने आकार के हिसाब से भारी तरबूज अच्छा होगा। यह अंदर से पका और ज्यादा पानी वाला होगा।
- आपको वह सतह ढूंढनी चाहिए जोकि तरबूज को जमीन पर रखती थी। यह जगह तरबूज के निचले हिस्से में पाई जाती है। यदि तरबूज कच्चा तोड़ा गया हो तो यह सतह सफेद रंग की होती है परंतु यदि यह गहरी रंग की हो तो समझो यह पूर्ण परिपक्वता पर तोड़ा गया है।
- ध्यान रखें कि चमकीला तरबूज अच्छा नहीं होता।

भंडारण

तरबूज को एक सप्ताह तक फ्रिज में रखा जा सकता है। 4^0 सेल्सियस से कम तापमान पर इसमें प्रशीतन क्षति हो जाती है। 7^0 सेल्सियस से कम तापमान पर भंडारण से अक्सर तरबूज में गड्ढे, रंग में कमी, स्वाद में नीरसता आ जाती है। शीतगृह से बाहर निकालने पर तरबूज जल्दी सड़ जाता है। सात दिनों तक दूर मंडी ले जाने के लिए 7.2^0 सेल्सियस एवं नमी स्तर 85-95 प्रतिशत मानकीकृत है। $7\text{-}15^0$ सेल्सियस पर यह फल 21 दिन तक ठीक रह सकता है।

खरबूजा

जब तरबूज की बात हो तो खरबूजा तो याद आएगा ही। खरबूजा भी अपने अंदर ढेर सारा पानी समावेश रखता है। परंतु सिर्फ ठंडक एवं तरल प्रदान करने के अतिरिक्त भी यह फल बहुत काम का है। कैलोरी कम होते हुए भी खरबूजा पौष्टिकता का भंडार है। 150 ग्राम खरबूजे में लगभग 3126।U विटामिन 'ए' होता है जोकि दिन भर की जरुरत का 62.5 प्रतिशत है। (तालिका 1) इसी प्रकार यह फल विटामिन 'सी' की भी 67.6 प्रतिशत जरूरत पूर्ति कर देता है। इसमें फोलिक अम्ल भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

खरबूजा एवं कंतालूप

स्वास्थ्यवर्धक गुण

खरबूजे में रंग बीटा कैरोटीन एवं ज़ीयाज़ैथिन के कारण होता है। यह दोनों आँखों की रोशनी एवं बढ़ती आयु के साथ मांसपेशियों का अधःपतन कम करते हैं।

विटामिन 'ए' एवं 'सी' दोनों ही आँखों की रोशनी बढ़ाते हैं एवं सूजन से निजात प्रदान करते हैं। विटामिन 'सी' त्वचा, सेहत एवं कोशिकाओं के लिए लाभदायक होते हैं एवं नाभिकीय डी.एन.ए. को भी पतन से रोकते हैं।

खरबूजे में त्वचा का मित्र कौलाजन होता है जो कि त्वचा के उतकों को खिंचाव प्रदान करता है और झुर्रियों से रोकथाम करता है। विटामिन 'सी' वैसे भी त्वचा में आंतरिक चमक लाता है।

खरबूजे में पौटेशियम प्रचुर मात्रा में होता है जो कि रक्त वाहिकाओं को चौड़ा करता है, एवं उन्हें लचीला बनाता है जिससे रक्तचाप नियंत्रित रहता है। पौटेशियम के अतिरिक्त खरबूजे में एडिनोसीन अवयव भी है जो रक्त को जमने से रोकता है एवं हृदय में रक्त का संचार सुचारु रखता है। रक्त को पतला करने की क्षमता खरबूजे में वैज्ञानिकों द्वारा प्रमाणित की गई है।

खरबूजा गुर्दे में पथरी होने से भी बचाता है जिसका कारण इसमें प्राकृतिक रूप से उपस्थित 'आक्सीकाइन' है।

खरबूजे में फोलिक अम्ल की प्रचुरता के कारण यह गर्भवती महिलाओं के लिए अच्छा होता है। यह शरीर से फालतू सोडियम निकालता है और शरीर में पानी प्रतिधारण रोकता है जिससे शरीर में फुलावट कम होती है।

खरबूजा शरीर में ऐंठन भी कम करता है इसलिए मासिक धर्म के दौरान इसका सेवन अच्छा रहता है। यह मस्तिष्क की कोशिकाओं को भी आराम देता है और अनिद्रा से निजात दिलाता है। मस्तिष्क में ऑक्सीजन का संचार बढ़ा कर यह दिमागी शांति व तनावमुक्ति देता है।

खरबूजा खरीदते समय विशेष जानकारी

- खरबूजा खरीदते समय यह जरुर देख लें कि इनकी उपरी सतह पर कोई दरार तो नहीं है, दरार हो तो उसे छोड़ दें।
- हल्के रंग वाला ही फल चुने, बाहर से यह जितना चमकदार होगा, अंदर से उतना ही कच्चा निकलेगा।
- साइज पर भी जरूर ध्यान दें, वजन में भारी खरबूजा रस भरा और मीठा निकलेगा।
- एक बार इसकी परत पर थपथपा कर भी चेक कर लें, खोखली आवाज आने पर यकीन करलें कि यह अंदर से अच्छा है।
- सूंघ कर चैक करने से भी आपको इसके मिठास का एहसास हो जाएगा।

भंडारण

कंतालूप की अपेक्षा धारीदार खरबूजे को ज्यादा दिन तक भंडारित किया जा सकता है। जालीदार छिलके के कारण कंतालूप 2 हफ्तों में ही सिकुड़ जाता है। शीत भंडारण हेतु 2-7^0 सेल्सियस आयु बढ़ाने के लिए तुड़ाई उपरांत ठंड़क में एवं 90-95 प्रतिशत आर्द्रता ठीक रहती हैं। किंतु कुछ शीत जातियों को भंडारण प्रशीतन क्षति भी हो जाती है जिसके लक्षण सतह पर बदरंगी, गड्ढ़े एवं ऊपरी सड़न होते हैं। ये फल 2-3 हफ्तों तक भंडारित किए जा सकते हैं।

खरबूजों के वितरण के लिए जालीनुमा पैकिंग

खरबूजे व तरबूजे के बीजों की गुणवता

इन चमत्कारी रसीले फलों के बीज कम पौष्टिक नहीं होते। खरबूजे के बीज आमतौर पर मिठाइयों में डाले जाते हैं व भून कर भी खाए जाते हैं। ये स्वादिष्ट बीज 14.6 प्रतिशत प्रोटीन, 30.8 प्रतिशत वसायुक्त होते है। (तालिका-2) इनमें 84.4 प्रतिशत असंतृप्त वसा होता है। ये पेट के कीड़ों से भी निजात दिलाते है। तरबूज के बीजों

में प्रोटीन, विटामिन, ओमेगा 3 एवं 6, वसीय अम्ल प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। यही नहीं, खनिज पदार्थ जैसे लौह, फॉस्फोरस एवं पौटेशियम तरबूज के बीजों में भरपूर मात्रा में होते हैं। वहीं खरबूजे के बीजों में फॉस्फोरस एवं पौटेशियम (हड्डियों व नसों के लिए लाभदायक) भरपूर होते हैं। दिल के लिए बेहतर एवं शरीर के लिए आवश्यक लिनोलिक अम्ल भी अच्छी मात्रा में होता है। खरबूजे के बीजों में भी 69.18 प्रतिशत वसा पूफा के रूप में होती है जोकि प्रचलित जैतून के तेल से कहीं अधिक है। तरबूज एवं खरबूज की प्रोटीन का जैविक मूल्य 59 एवं 64 है, जो कि गेहूं के बराबर है। इसलिए गर्मियों में न केवल इन रसीले फलों को भरपूर खाइए, खिलाइए एवं बीजों को भी बाद में भून कर या चबेने व मिठाइयों में डाल कर सेवन करिए।

तरबूज़ एवं खरबूजे के बीज

तालिका 1: तरबूज एवं खरबूजे के फलों की पौष्टिकता
(प्रति 100 ग्राम)

तत्व	तरबूज	खरबूजा
ऊर्जा	30 कैलोरी	34 कैलोरी
कार्बोहाइड्रेट	4.4-7.6 ग्राम	8 ग्राम
प्रोटीन	0.6- 1.02 ग्राम	0.8 ग्राम
वसा	0.15 ग्राम	0.2 ग्राम
रेशा	0.4 ग्राम	1.4 ग्राम
विटामिन ए	569।U	3126।U
विटामिन सी	8.1 मिलीग्राम	34.56 मिलीग्राम
लाइकोपिन	4532 माइक्रोग्राम	-
सिट्रोलीन	250 मिलीग्राम	-
पोटाशियम	112 मिलीग्राम	332.96 मिलीग्राम
फोलेट	3 माइक्रोग्राम	21 माइक्रोग्राम

तालिका 2: तरबूज एवं खरबूजे के बीजों की पौष्टिकता
(प्रति 100 ग्राम)

तत्व	तरबूज	खरबूजा
ऊर्जा	557 किलो कैलोरी	446 किलो कैलोरी
कार्बोहाइड्रेट	155 ग्राम	8 ग्राम
प्रोटीन	25.5-27.4 ग्राम	18.6 ग्राम
वसा	47 ग्राम	42 ग्राम
संतृप्त वसा	9.8 ग्राम	9.24 ग्राम
कैल्शियम	54 मिलीग्राम	8.34 मिलीग्राम
लौह	7.08-7.75 मिलीग्राम	81.17 मिलीग्राम
सोडियम	87-99 मिलीग्राम	386.13 मिलीग्राम
जिंक	10.13 मिलीग्राम	44.03 मिलीग्राम
पौटेशियम	614.3 मिलीग्राम	9548 मिलीग्राम

केल: एक नया स्वास्थ्यवर्धक सुपर फूड

बिंदवी अरोड़ा, श्रुति सेठी, अल्का जोशी एवं राम रोशन शर्मा

खाद्य विज्ञान एवं फसलोतर प्रौद्योगिकी संभाग,
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

हरी सब्जियों को खाना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक माना जाता है। हरी सब्जियों के सेवन से मानव शरीर को विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व प्राप्त होते हैं। वैसे तो कई प्रकार की हरी सब्जियां उपलब्ध होती हैं। परंतु ज्यादातर हरी सब्जियां गोभी कुल, ब्रासीकेसी से संबंधित होती हैं जैसे कि फूल गोभी, पत्ता गोभी, लाल गोभी, ब्रोकोली एवं सरसों। इनमें से एक सब्जी 'केल' भी है जो कि वैसे तो भारत की स्वदेशी सब्जियों में से नहीं है परंतु सेहत बढ़ाने वाले गुणों के कारण बहुत प्रमुख होती जा रही है। भारत में इसका आयात यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका से किया जाता है और साथ ही साथ अब इसको भारत में भी शीत ऋतु में उगाया जा रहा है। भारत में केल को 'करम साग' के नाम से जाना जाता है।

केल की किस्में

केल कई प्रकार का होता है। इसकी पत्तियां हरे रंग से बैंगनी रंग की होती हैं। इसके घुंघराले आकार की पत्तियां और बैंगनी रंग, इसे बाकी हरी सब्जियों से अलग करते हैं। इनमें से अमेरिकन फ्लैट केल (चित्र क), प्रीमियर केल (चित्र ख), रेड रसियन केल (चित्र ग) एवं

चित्र क: फ्लैट केल

चित्र ख: प्रीमियर केल

चित्र ग: रेड रशियन केल

चित्र घ: करली केल

करली केल (चित्र घ) प्रमुख रूप से खाया जाता है। भारत में अधिकतर रेड रसियन केल ही खाया जाता है।

केल के स्वास्थ्यवर्धक गुण

केल एक स्वास्थ्यवर्धक सब्जी है। अपने पोषक तत्वों के कारण इसे विश्व की सबसे स्वास्थ्यवर्धक सब्जी माना जाता है। 100 ग्राम केल में केवल 36 कैलोरी की शक्ति होती है। साथ ही, इसमें वसा की मात्रा न के बराबर होती है। केल में विटामिन 'के' की अधिक मात्रा होती है, जो की कई प्रकार के कैंसर को रोकने में सहायक होती है।

सभी हरी सब्जियों की तरह इसमें लौह तत्व अधिक मात्रा में होता है, जिससे रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा बढ़ सकती है। भारत में 50 प्रतिशत से अधिक महिलाओं मे हिमोग्लोबिन की कम मात्रा पाई जाती है। अतः केल का सेवन, एनीमिया (लौह तत्व की कमी) के इलाज में सहायक है। साथ ही केल में बहुतायत से प्रतिऑक्सीकारक जैसे की कैरोटिनोइड एवं फ्लेविनोइड पाए जाते हैं जोकि कई शारीरिक रोगों जैसे कैंसर, दिल के रोग, एंथ्रोस्क्लेरोसिस इत्यादि से बचाव करते हैं। इसके साथ ही प्रतिऑक्सीकारक होने के कारण कम घनत्व के कोलस्ट्रोल को भी यकृत

में तोड़ देता है। यह प्रतिऑक्सीकारक शरीर में बनने वाले फ्री-रेडिकल्स को नाकाम करने में सहायक होता है। इसके कारण केल खाने वाले व्यक्तियों को कैंसर एवं दिल के रोगों का खतरा कम होता है।

केल में पाए जाने वाले प्रतिऑक्सीकारक, बुरे कोलेस्ट्रोल को कम करने में सहायक होते हैं जिसके कारण यह हृदय संबंधित रोगों से बचाव करने में सक्षम है। केल में पाए जाने वाले कुछ गुण मानव शरीर में उत्पन्न होने वाले कोलेस्ट्रोल को बनने से रोकने में भी सक्षम है। केल में पाए जाने वाले स्वास्थ्यवर्धक तत्व मानव शरीर में बनने वाले एंजाइम हाइड्रोक्सी मिथाइल ब्लूट्रायल कोएंजाइम ए रिजेक्टेड को असमर्थ कर देता है जिसके कारण कोलेस्ट्रोल नहीं बनता है।

केल में विटामिन-सी की भी अधिक मात्रा होती है, जो कई कीट उत्पादित रोगों से बचाव में सहायक होती है, क्योंकि यह इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाता है। उसके साथ ही यह शरीर के जोडों के दर्द का भी निवारण करता है। केल में विटामिन-ए बहुतायत मात्रा में पाया जाता है, जो कि आंखों की रोशनी को तेज रखने में सहायक होती है और साथ ही यह एक प्रतिऑक्सीकारक भी है। केल में रेशा भी अधिक मात्रा में होती है, जो कि शरीर को कब्ज अथवा पेट के रोगों से बचाता है। रेशा यानी कि फाइबर की अधिक मात्रा के कारण केल शरीर के लीवर को स्वस्थ रखने में सहायता करता है। यह रेशा मानव शरीर में संकलित नहीं होता जिसके कारण केल खाने वाले व्यक्तियों को कब्ज एवं पेट के रोगों से निवृत रखता है।

इसके अतिरिक्त केल में बहुत सारे पोषक तत्व जैसे की फोलेट, मैग्नीशियम इत्यादि भी भरपूर होते हैं। अधिक मात्रा में कैल्शियम होने के कारण ये हड्डियों की हानि होने से बचाता है और साथ ही साथ ऑस्टियोपोरोसिस को रोकने और स्वस्थ चयापचय बनाए रखने में सहायता करता है। केल में पाए जाने वाले पोषक तत्वों के कारण रक्तचाप भी नियंत्रण में रहता है। अतः ब्लड प्रेशर के रोगियों के लिए भी केल स्वास्थ्यवर्धक माना गया है। तालिका-1 में केल में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की मात्रा को दर्शाया गया है।

तालिका 1: केल का संघटन एवं पौष्टिक मान

पोषक तत्व	मात्रा (प्रति 100 ग्राम)
कैलोरी	36 किलो कैलोरी
वसा	1 ग्राम
कोलस्ट्रोल	0 ग्राम
कार्बोहाइड्रेटस	10 ग्राम
रेशा	2 ग्राम
प्रोटीन	3 ग्राम
सोडियम	43 मिली ग्राम
विटामिन ए	308 प्रतिशत दैनिक मात्रा
विटामिन सी	200 प्रतिशत दैनिक मात्रा
कैल्शियम	14 प्रतिशत दैनिक मात्रा
लौह	9 प्रतिशत दैनिक मात्रा

केल से बनने वाले व्यंजन

केल अथवा कर्म साग को हर उस प्रकार से बनाया जा सकता है जैसे कि अन्य पत्तेदार हरी सब्जियों को बनाया जाता है। भारत में खाने वाले आम व्यंजन जैसे कि साग, पकौड़े, पराठे आदि में केल की पत्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। केल के पत्तों को सुखाकर, उनका पाउडर बनाकर, अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थों में मिलाकर भी उपयोग किया जा सकता है जैसे कि पराठों में, नूडल्स में एवं बिस्किट में भी केल का प्रयोग किया जा सकता है।

विदेशों में केल का एक बहुत ही प्रमुख व्यंजन है 'केल के चिप्स'। केले के चिप्स बनाने के लिए हरे पत्तों को चिप्स जितने आकार में तोड़ कर रख लें। इन्हें पानी से अच्छे से धो कर बेकिंग ट्रे में फैला लें। फैलाने के बाद कुछ समय के लिए खुली हवा में रखें ताकि धुलाई के कारण जमा हुआ पानी सूख जाए। पत्तों के ऊपर न्यूनतम मात्रा में तेल अथवा नमक (स्वादानुसार) मिलाएं। इसके पश्चात बेकिंग ट्रे को अवन में 22^0 सेल्सियस तापमान पर 18-20 मिनट रख कर बाहर निकालें। इस प्रकार स्वादिष्ट केल के चिप्स तैयार किए जा सकते हैं।

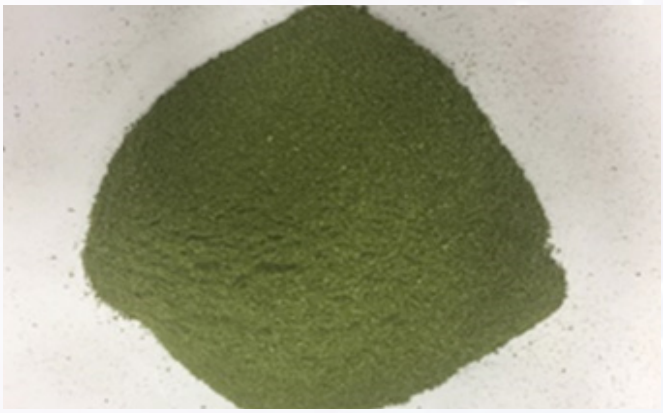

केल चूर्ण

केलयुक्त नूडल्स

भा.कृ.अनु. संस्थान, नई दिल्ली में भी केल के चूर्ण का उपयोग कर केलयुक्त नूडल्स तैयार की हैं जो खाने में स्वादिष्ट एवं पौष्टिकता से भरपूर होती हैं।

निष्कर्ष

केल एक बहुत ही उपयोगी एवं स्वास्थ्यवर्धक सब्जी है। यह एक कम ऊर्जा प्रदान करने वाला पुष्टिकृत खाद्य पदार्थ है। बाकी हरी सब्जियों की तरह ही केल के विभिन्न उपयोग हैं एवं इससे अनेक प्रकार के व्यंजन तैयार किए जा सकते हैं। केल में पाए जाने वाले पौष्टिक तत्वों के कारण इसको 'सुपर फूड्स' के वर्ग में सम्मिलित किया गया है। केल में पाए जाने वाले पोषक तत्व, विटामिन एवं अन्य प्रतिऑक्सीकारक मनुष्य के शरीर को कई रोगों से बचाने में सक्षम हैं। अतः हमें अपने दैनिक खाद्य पदार्थों में केल को सम्मिलित करना चाहिए एवं इससे बनाए जाने वाले उत्पादों को खाना चाहिए।

कष्ट ही तो वह प्रेरक शक्ति है जो मनुष्य को कसौटी पर परखती है और आगे बढ़ाती है।

- सावरकर

उच्च गुणवतायुक्त पुष्पोत्पादन हेतु पौधशाला का प्रबंधन

सपना पंवर, नमिता एवं सत्यवीर सिंह सिंधु

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग

भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

घरेलू व अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में तेज गति से बढ़ते पुष्प व्यापार के कारण भारत में पुष्पोत्पादन के क्षेत्रफल में लगातार वृद्धि हुई है। इस कारण आज भूदृश्य निर्माण व पुष्पोत्पादन हेतु उच्च गुणवता के पौधों की मांग भी बढ़ रही है। इस बढ़ती मांग के कारण पौधशाला व्यवसाय भी तेज गति से बढ़ रहा है। सार्वजनिक क्षेत्रों के शोध संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों व राज्यों के उद्यान विभागों की अच्छी गुणवता वाले पौधे प्रवर्धित करने की सीमित क्षमता के कारण, पौधशाला तैयार करना निजी क्षेत्रों में अच्छा व्यवसाय बन गया है। पौधशाला वह स्थान है जहां रोपण तथा बिक्री हेतु बीज से या अलैंगिक विधि से नए पौधे तैयार किए जाते हैं। एक सफल पौधशाला की स्थापना व इसका ठीक नियोजन एवं प्रबंधन आवश्यक होता है और व्यवसाय को सफल बनाने के लिए कुशल माली एवं प्रबंधक का होना अनिवार्य है। पौधशाला हेतु निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता हैः

स्थान का चुनाव

पौधशाला मुख्य सड़क पर या सड़क से जुड़े ऐसे स्थान पर बनानी चाहिए जहां बिजली व संचार के साधन उपलब्ध हों। यह स्थान थोड़ा उठा हुआ होना चाहिए जिसमें जल भराव न हो सके। पौधशाला की सफलता, मिट्टी व पानी की गुणवता व उपलब्धता पर निर्भर करनी है। पानी व मिट्टी की जांच कराकर यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि ये लवणीय एवं क्षारीय तो नहीं हैं। बलुई से बलुई दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6-7 के बीच हो, पौधशाला हेतु उपयुक्त मानी जाती है।

पुष्प पौधशाला का नियोजन

पौधशाला के स्थान का चुनाव करने के बाद, उसका नियोजन तथा नक्शा तैयार किया जाता है। एक अनुभवी उद्यान विशेषज्ञ के परामर्श से तैयार रूपरेखा से पौधशाला के विभिन्न कार्यों को अधिक दक्षता से किया जा सकता है तथा इससे पौधशाला की स्थापना, रखरखाव व विपणन लागत में कमी आती है। पौधशाला का नियोजन तथा रूप रेखा बनाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिएः

बाड़ः चोरी तथा जानवरों से क्षति को रोकने के लिए पौधशाला के चारों तरफ दीवार या काँटेदार तार की बाड़ बनाना आवश्यक होता है। इसके साथ कांटेदार झाड़ियां जैसे करोंदा लगाने से सुरक्षा व सुन्दरता के साथ-साथ, फलों से या सब्जी की लताएं चढ़ाकर अतिरिक्त आय भी प्राप्त की जा सकती है।

प्रकाशः प्रकाश, पौधशाला नियोजन एवं प्रबंधन का एक मुख्य अवयव है। पौधशाला में पूर्ण छाया, आंशिक छाया तथा पूर्ण प्रकाश वाले स्थानों का होना आवश्यक है जिससे कि विभिन्न पौधों जिनकी प्रकाश हेतु आवश्यकता अलग-अलग हो, को रखा जा सके। सामान्यतः, ज्यादातर पौधों के लिए विशेषकर गर्मी के मौसम में आंशिक छायादार स्थान उपयुक्त होता है। गर्मी के मौसम में छाया चाहने वाले पौधों को जालीघर (नेटहाऊस) में रखना चाहिए। मानसून या सर्दी के मौसम में ज्यादा छाया से पौधों को क्षति ना पहुंचे, इसके लिए वृक्षों की काट-छांट करके या कृत्रिम प्रकाश देकर स्वस्थ रखते हैं। बीज से पैदा होने वाले पौधों की क्यारियां खुले स्थान पर होनी चाहिए, जहां पूरा प्रकाश पहुंच सके तथा वृक्षों की शाखाओं से गिरने वाले पत्ते इत्यादि से होने वाली क्षति से बचा जा सके।

जलः पौधशाला के चुनाव के समय इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि जल उपलब्धता का स्थायी स्रोत, पौधशाला क्षेत्र में या इसके आसपास हो। पानी में लवणों की मात्रा कम होनी चाहिए। गर्मियों में पौधों को प्रतिदिन पानी की

आवश्यकता होती है। इसके लिए प्रचुर मात्रा में पानी का प्रबंध होना आवश्यक है। यह समुचित मात्रा में नलके लगाकर या पौधशाला क्षेत्र में जल स्रोत (कुंआ/तालाब) बनाकर सुनिश्चित किया जा सकता है।

जल-निकासः सफल पौधशाला के लिए समुचित जल-निकास की व्यवस्था होनी चाहिए। जमीन की सतह पर या सतह के नीचे नियमित दूरी पर निकास नालियां बनाकर जल निकास की व्यवस्था करते हैं। जल निकास फालतू पानी को निकालने के अतिरिक्त मिट्टी में लवणों का स्तर नियंत्रित करने में भी सहायक होता है।

रास्ते एवं पगडंडियां

पौधशाला में कार्य करने हेतु व सामान की ढुलाई के लिए समुचित संख्या में रास्ते होने चाहिए। ये रास्ते कच्चे-पक्के हो सकते हैं।

क्यारियों का निर्माण

सामान्यतः क्यारियाँ जमीन की सतह से ऊंची बनाई जाती हैं। क्यारियों के किनारों पर ईटों की दीवार बनाने से मिट्टी का कटाव नहीं होता है। क्यारियों की चौड़ाई एक मी. तथा लंबाई आवश्यकतानुसार रखते हैं। क्यारियों की देखभाल तथा विभिन्न कार्य करने के लिए दो क्यारियों के बीच 60 से.मी. खाली स्थान रखा जाता है। क्यारियों में मिश्रण भरने से पहले बालू रेत की परत (15 से.मी.) बिछाई जाती है, जो कि जलनिकास व वातन का कार्य करती है। क्यारियों को भरने के लिए मिश्रण 2 भाग मिट्टी, एक भाग बालू रेत व एक भाग कम्पोस्ट मिलाकर बनाया जाता है।

पुष्प पौधशाला के मुख्य भाग

इमारती/बिल्डिंग ढांचेः एक अच्छी पौधशाला में कार्यालय, बिक्री काऊंटर, पैकिंग घर, स्टोर घर, औजार रखने का घर, माली के रहने के लिए घर, इत्यादि का होना आवश्यक है। कार्यालय का होना बहुत महत्वपूर्ण है जहां पर सारे व्यापार का लेन-देन होता है। यह सुन्दर तथा साफ सुथरा होना चाहिए। कार्यालय को आकर्षक बनाने के लिए पौधशाला में प्रवर्धित उच्च कोटि के पौधों की किस्मों के चित्र एवं अलंकृत पौधे लगाने चाहिए।

मातृ पौधों का स्थानः किसी भी पौधशाला की सफलता उसमें प्रवर्धित पौधों की किस्म के चुनाव तथा उसके शुद्ध रुप में रख रखाव पर निर्भर करती है। किसी भी नई किस्म का बीज, पौध, कलम इत्यादि उस किस्म को विकसित करने वाले संस्थान या प्रसिद्ध पौधशाला से लेना चाहिए जहां इनका रखरखाव अलग क्षेत्र में किया जाता है।

गमले भरने का शेडः जरूरी कार्यों जैसे कि मिट्टी, खाद इत्यादि का भंडारण तथा गमले भरने व गमलों में पौधे लगाने के लिए थोड़ा उठा हुआ एवं पक्के फर्श का शेड बनाया जाता है। यह शेड तीन दिशाओं में खुला होता है। खुली दिशाओं में वर्षा से बचने के लिए एक मीटर ऊंची ईंट की दीवार बनाई जाती है।

प्रदर्शन घर तथा बिक्री काऊंटरः बिक्री को प्रोत्साहित करने के लिए सभी तरह के पौधों व अन्य पदार्थों के आकर्षक प्रदर्शन के लिए एक समुचित स्थान की व्यवस्था होनी चाहिए। वहां पर सभी पौधों से अच्छे नमूने हर समय उपलब्ध हों ताकि आगंतुक उन्हें देख कर निर्णय ले सकें।

प्रवर्धन ढांचे

ग्रीन हाउसः पौधों के प्रवर्धन के लिए कई प्रकार के हरित गृह (ग्रीन हाऊस) बनाए जाते हैं। सबसे साधारण प्रकार लीन-टू है। जिसमें कि दक्षिण या पूर्व की दीवार को प्रयोग किया जाता है। छोटे एवं कम खर्चीले ग्रीन हाऊस लकड़ी या बाँस के ढांचे से बनाए जा सकते है। व्यावसायिक पौधघर सामान्यतः इवन स्पैन तरह की स्वतन्त्र इकाइयों को आपस में जोड़कर बनाया जाता है, जिससे कि जगह का सही उपयोग हो सके। ग्रीन हाऊस को ढकने के लिए ज्यादातर पॉलीथीन की चादर (4-6 मि.मी.) या फाइबर ग्लास (0.96 से.मी.) का प्रयोग किया जाता है।

हॉट बेडः हॉट बेड एक छोटा, कम ऊंचाई का ढांचा है जिसे बीज से पौध उगाने या मुलायम कलमों में जड़ों के

विकास के लिए प्रयोग करते हैं। हॉट बेड एक लकड़ी का सांचा होता है जिसमें कि मिश्रण के नीचे बिजली द्वारा, गर्म पानी, भाप द्वारा या सड़ती हुई खाद द्वारा गर्मी प्रदान की जाती है।

कोल्ड फ्रेमः कोल्ड फ्रेम ठीक हॉट बेड की तरह होती है लेकिन इसमें गर्मी करने के लिए कोई प्रयोजन नहीं होता। कोल्ड फ्रेम को छोटे नाजुक पौधों को बाहर के वातावरण के प्रति सहनशील बनाने के लिए प्रयोग करते हैं।

लैथ घरः लैथ घर छाया प्रदान करने तथा गर्मियों में पौधों को अधिक तापमान व प्रकाश की तीव्रता से बचाने के लिए काम में लाया जाता है। लैथ घर में पानी की आवश्यकता कम होती है इसलिए कभी-कभी बिक्री योग्य पौधों को भी सिर्फ रखने के लिए इसका प्रयोग करते हैं। लैथ घर को ढकने के लिए सारन या शेड़िग नेट का प्रयोग करते हैं।

प्रवर्धन माध्यम

प्रवर्धन माध्यम बीजों के अंकुरण व वानस्पतिक भाग में जड़ें विकसित करने के लिए उपयोग करते हैं। यह अकेला या विभिन्न पदार्थों (प्राकृतिक या कृत्रिम) का सम्मिश्रण हो सकता है। एक आदर्श प्रवर्धन माध्यम में पानी धारण क्षमता अच्छी तथा जल निकास उपयुक्त होना चाहिए। इसका पी.एच. मान 5.5-7 के बीच होना चाहिए। बीजों व कलमों को सही आधार प्रदान करने के लिए यह सघन होना चाहिए। माध्यम निर्जीवीकरण सहन करने वाला तथा अन्य बीजों, कीटों, फंफूद, सूत्रकृमि से मुक्त होना चाहिए तथा इसमें वायु संचालन अच्छा होना चाहिए। मुख्य रूप से उपयोग में आने वाले प्रवर्धन माध्यमों का विवरण निम्नलिखित प्रकार हैः

मिट्टीः मिट्टी के विभिन्न अवयव ठोस, द्रव्य व गैस अवस्था में होते हैं। ठोस अवयव में कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ होते हैं। ये पौधों को पोषण तत्व व आधार प्रदान करते हैं। पौधों की जड़ों व लाभप्रद सूक्ष्म जीवों के लिए गैस अवस्था ऑक्सीजन प्रदान करती है। मिट्टी में पोषक तत्व, पानी के घोल के रूप में पौधों को प्राप्त होते हैं। पौधों की संतोषप्रद वृद्धि के लिए ये तीनों अवयव सही अनुपात में होने चाहिए।

बालूः बालू कण 0.05-2.0 मि.मी. व्यास के होते हैं। क्वार्टज बालू जिसमें मुख्यतः सिलिका होता है, प्रवर्धन माध्यम के रुप में उपयोग में लाते हैं। प्रयोग करने से पहले निर्जर्मीकरण करना अच्छा रहता है।

पीटः पीट पानी के अंदर की व दलदलीय वनस्पतियों के आंशिक सड़न से बनता है। इसकी गुणवता सड़ने वाली वनस्पति के प्रकार, सड़न अवस्था व अम्लता से प्रभावित होती है।

स्फैगनम मॉसः यह स्फैगनम जातियों के पौधों के सूखे अवयव से बना होता है। इसमें अपने भार से 10 से 20 गुना पानी ग्रहण करने की क्षमता होती है। प्रयोग करने से पहले इसे हाथ से या यांत्रिक विधि से बारीक कर लिया जाता है। इसे गूटी बांधने में भी उपयोग किया जाता है।

वर्मिकुलाइटः रासायनिक रुप से यह मैगनीशियम-एलुमिनियम-आयरन सिलिकेट होता है। यह बहुत हल्का (90-150 किलो/घन मी.) होता है एवं पानी में अघुलनशील है। इसकी जल धारण क्षमता अच्छी होती है। हल्का होने के कारण यह कलमों को सहारा नहीं दे पाता। इसलिए इसको अन्य माध्यमों के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है। कैटायन विनिमय क्षमता अधिक होने के कारण यह पोषक तत्वों को लंबे समय तक उपलब्ध कराता है।

परलाइटः यह ज्वालामुखी लावा से बना स्लेटी सफेद रंग का सिलिकायुक्त पदार्थ होता है। इसकी कैटायन विनियम क्षमता कम होती है एवं इसमें खनिज पदार्थ नहीं पाए जाते हैं। यह काफी हल्का होता है।

प्यूमिसः यह ज्वालामुखी चट्टानों से बना स्लेटी सफेद उत्पाद होता है। इसकी वायु संचरण व जलनिकास क्षमता अच्छी होती है। बीज अंकुरण व कलम लगाने में इनका उपयोग किया जाता है।

लकड़ी की छीलनः इसमें हानिकारक पदार्थ, नमक नहीं पाए जाते हैं। इसके अधिक सड़ने पर जल निकास की समस्या आ जाती है। इसकों अन्य पदार्थो के साथ मिला कर प्रयोग में लाया जाता है।

कोकोपीटः नारियल के रेशों से बना यह माध्यम आजकल काफी प्रचलित है। इसमें वायु संचार अच्छा होता है तथा यह देर से अपघटित होता है। पौटेशियम विद्यमान होने के कारण अलग से पौटेशियम देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

गमलों का मिश्रण

मिट्टी की गुणवता के अनुसार मिट्टी एवं अन्य कार्बनिक पदार्थो को निम्नलिखित अनुपात में मिलाकर मिश्रण तैयार किया जाता है। भारी चिकनी मिट्टी में यह मिश्रण 2 भाग परलाइट या बालू, 1 भाग मिट्टी व 2 भाग कार्बनिक पदार्थ जैसे पीट, पत्ती की खाद या लकड़ी की छीलन को मिलाकर बनाते हैं। हल्की दोमट मिट्टी में तीनों अवयव बराबर अनुपात में रखते हैं। हल्की बलुई मिट्टी में बराबर अनुपात में कार्बनिक पदार्थ मिलाकर मिश्रण तैयार करते हैं।

प्रवर्धन माध्यम का निर्जर्मीकरण

हानिकारक कीटों, रोगों व खरपतवारों को नष्ट करने के लिए प्रवर्धन माध्यम को निर्जर्मीकरण किया जाता है। इसे गर्मी में मिट्टी को पॉलीथीन चादर से ढक कर या भाप पहुंचाकर जिससे कि तापमान आधा घंटे तक 80^0 सेल्सियस पहुंच जाता है। रासायनिक उपचार के लिए मुख्यतः फार्मेल्डीहाइड का प्रयोग करते हैं। यह अच्छा फफूंदनाशक है लेकिन कीट व सूत्रकृमियों को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं करता है। 3.8 लीटर फार्मेलिन (37 प्रतिशत) को 190 ली. पानी में मिलाकर 10 ली./वर्ग मी. की दर से उपयोग करके मिट्टी को 24 घंटे तक पॉलीथीन से ढक देते हैं। उपयोग के 2 सप्ताह बाद माध्यम को प्रयोग करते हैं। एक अन्य रसायन क्लोरोपिकरिन को 20-30 इंच की दूरी पर बने 8-15 इंच गहरे छिद्रों में 2-4 मि.ली. प्रति छिद्र की दर से प्रयोग कर मिट्टी को तीन दिनों तक वायुरोधी पॉलीथीन से ढक देते हैं। ये रसायन फफूंद, कीटों, सूत्रकृमियों के प्रति प्रभावकारी हैं।

पौधशाला का प्रबंधन

किसी तरह के पौधों को उगाना तो बहुत आसान है पर उनको एक अच्छी आकर्षक स्थिति में रखना बहुत ही कठिन काम है। इसलिए, एक अच्छी पौधवार के लिए किसी भी पौधशाला का प्रबंधन करना आवश्यक है।

बीजों की बुवाई तथा उनकी देखभाल

मुख्य रुप से खुले आसमान में, बीजों को बरसात के दिनों में लगाकर या वसन्त ऋतु में लगाकर, पौध तैयार की जाती है। बीजों को उनके आकार से 3-4 गुणा ज्यादा गहराई पर लगाया जाता है। बीज लगाने के बाद हमें कुछ बातों पर ध्यान देना चाहिए जैसे क्यारियों में अधिक मात्रा में नमी न हो, पौध ज्यादा प्रकाश में न रहें, जरुरत से ज्यादा पानी न दें एवं ज्यादा छाया भी नहीं होनी चाहिए। ज्यादा तापमान एवं प्रकाश में पौध को धीरे-धीरे बाहर निकालना चाहिए। ज्यादा मात्रा में पानी देने से जड़ों का गलना शुरू हो जाता है। अगर पौध को ज्यादा छाया में रखा जाए तो पौध की वृद्धि के साथ-साथ पानी की मात्रा भी बढ़नी चाहिए। 20-30 दिनों में पौध रोपण के लिए तैयार हो जाती है।

पौधशाला में कीट प्रबंधन

स्केलः इनकी रोकथाम रोगोर एवं मेटासिस्टॉकस (0.05%) का एक छिड़काव 15 दिन के अंतराल में करके की जा सकती है।

तेलाः इनकी रोकथाम में भी स्केल की तरह की जा सकती है।

मिली बगः इनकी रोकथाम के लिए इसके कीटों को इकट्ठा करके मार देना चाहिए। भूमि की रेकिंग जो कि दिसंबर तथा जनवरी में की जाती है, से प्यूपा को मार सकते हैं।

सफेद मक्खीः फॉस्फामिडॉन (0.02%) और अन्य कीटनाशकों का छिड़काव करके, इसकी रोकथाम की जा सकती है।

माइटः बैटेवल सल्फर (0.2%) का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करके, इसकी रोकथाम की जा सकती है।

पौधशाला के रोगों का प्रबंधन

पौध गलन : इस रोग से बचने के लिए बीजों को बोने से पहले थीरम (2 ग्राम प्रति 2 कि.ग्रा. बीज) नामक फफूंदीनाशक से उपचारित कर लेना चाहिए। पौधशाला में कैप्टॉन और बेबिस्टीन (0.2%) का घोल बना कर छिड़काव करने से इसके प्रभाव को रोका जा सकता है।

चूर्णिल आसिता : बेटेबल सल्फर (0.2%), 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। इससे सफेद चूर्णी फफूंद रोग की रोकथाम की जा सकती है।

पत्ती धब्बा: इसे बेविस्टिन (0.2%) और डाइथेन जैड 78 का छिड़काव करके इसकी रोकथाम की जा सकती है।

गेंदे के प्लग प्लांट्स

गेंदे की पौधशाला

गुलाब की पौधशाला

मनुष्य क्रोध को प्रेम से, पाप को सदाचार से, लोभ को दान से और झूठ को सत्य से जीत सकता है।

- गौतम बुद्ध

पुष्पीय बागवानी में विविधीकरण से करें आय दोगुनी

ऋतु जैन एवं बबीता सिंह
पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग
भा.कृ.अ.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

पुष्प जीवन के हर रंग में प्रयोग किए जाते है। चाहे कोई पूजा, अर्चना, त्योहार, सामाजिक कार्यक्रम हो, या कोई विशेष उत्सव हो, फूलों की हमेशा ही एक अहम भूमिका होती है। फूल विविध रंगों एवं प्रकार के होते है, कोई भी शुभ कार्य हो, उसका प्रारंभ फूलों से ही किया जाता है। प्राचीन समय में फूल सिर्फ सज्जा के लिए या मंदिर में अर्पित करने के लिए प्रयोग किए जाते थे परंतु आज के समय में पुष्पोत्पादन एक व्यवसाय के रूप में उभर कर आ रहा है। जीवन शैली का प्रारूप बदलने के कारण पुष्पों तथा उसके उत्पादों में भी बहुत प्रकार का बदलाव हुआ है जो फूल केवल शोभा, साज सज्जा या उपहार के रूप में प्रयोग किए जाते थे आज वे आय का एक बहुत बड़ा साधन बन गए हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण जोत हेतु भूमि की कमी हो रही है, जिसके कारण धान्य, दलहनी एवं तिलहन फसलों के द्वारा एक सीमांत किसान का जीविकोपार्जन कठिन होता जा रहा है। अतः ऐसे समय में फूलों की खेती बहुत कम भूमि पर करके अधिक लाभ उठाया जा सकता है, क्योंकि पुष्प उत्पादन कम भूमि में तथा कम समय में ज़्यादा आमदनी देता है। देश में जलवायु की विविधता होने के कारण अनेकों प्रकार के फूल भारत में उगाए जाते हैं तथा दूसरे देशों में निर्यात भी किए जाते हैं। फूलों से बने इत्रों का भी निर्यात बहुत सारे देशों को किया जा रहा है। पश्चिमी देशो में फूलों का उपयोग अनेक तरह के दिवस जैसे नववर्ष, क्रिसमस डे, मातृ दिवस, पितृ दिवस, मित्र दिवस, वलेंटाइन डे, शिक्षक दिवस आदि मनाने के लिए किया जाता है।

पुष्पों तथा अलंकृत पौधों में विविधता होने के कारण उनका व्यवसाय में भी विविधीकरण किया गया है। दोगुनी आय के लिए यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक किसान पुष्प उत्पादन करे लेकिन वह निम्नलिखित विविधीकरण के आयाम अपनाकर अपनी आय में काफी वृद्धि कर सकता हैः

डंडी वाले/ डंठलयुक्त/ कर्तित फूलों का उत्पादन

विश्वभर में कर्तित फूलों की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। ताज़े कर्तित फूलों का सबसे अधिक निर्यात नीदरलैंड, कोलंबिया, कीनिया, बेल्जियम आदि देशों में हो रहा है। डंडीवाले फूलों में प्रमुख है गुलाब, गुलदाउदी, कार्नेशन, ट्यूलिप, जरबेरा, आर्किड, ग्लेडियोलस, लिलियम इत्यादि। भारत में पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश आदि राज्यों में सर्वाधिक कर्तित फूलों का व्यावसायिक उत्पादन होता है।

डंठल रहित खुले फूलों का उत्पादन

डंठल रहित खुले फूलों में गेंदा, गुलाब, रजनीगंधा, चमेली, गुलदाउदी, एस्टर आदि मुख्य फसलें हैं। कर्तित फूलों की अपेक्षा डंठल रहित फूलों के उत्पादन में कम लागत आती है तथा इनका उत्पादन ऐसे क्षेत्रों में भी संभव है जहां किसानों के पास समुचित प्रबंध नहीं होते

हैं। खुले फूलों के उत्पादन में भारत दूसरे स्थान पर है। खुले फूलों का अधिकतम उत्पादन तमिलनाडु, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, मिजोरम, गुजरात, आंध्र प्रदेश एवं महाराष्ट्र आदि राज्यों में किया जा रहा है। खुले फूलों का प्रयोग मुख्यतः धार्मिक स्थलों, सामाजिक अवसरों पर किया जाता है। इसके साथ इन फूलों का बहुआयामी उपयोग है जैसे सुगंधित तेल बनाना, प्राकृतिक रंग प्राप्त करना, सौंदर्य प्रसाधन बनाना, औषधि बनाना इत्यादि।

सुगंधित तेल हेतु फूलों की खेती

विश्व के बहुत सारे देशों में सुगंधित तेल का उत्पादन किया जाता है, क्योंकि सुगंधित तेलों का प्रयोग इत्र, सौंदर्य प्रसाधन, सुगंधि चिकित्सा आदि में होता है। इसका निर्यात एवं आयात बहुत बड़ी मात्रा में होता है। विश्व में सुगंधित तेल के मुख्य उत्पादक देश ब्राजील, चीन, अमेरिका, यमन, भारत, मेक्सिको तथा इंडोनेशिया हैं। भारत में सुगंधित तेल वाले फूलों की खेती मुख्यत: उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र आदि राज्यों में की जाती है। सुगंधित तेल की खपत 7-9% की वार्षिक दर से बढ़ रही है जो कि इस बात का प्रमाण है कि आने वाले समय में सुगंधित तेलों की बहुत ज्यादा मांग बढ़ जाएगी जो कि किसानों के लिए अधिक आय का साधन बन जाएगी।

गुलाब, गेंदा, जूही, चमेली, चंपा, रजनीगंधा आदि फसलें सुगंधित तेल उत्पादन हेतु उगाई जाती हैं। विभिन्न सुगंधित तेलों का अनुमानित मूल्य (विदेशों में) इस प्रकार है:

सुगंधित तेल	मूल्य (रुपए प्रति किलोग्राम)
गुलाब	2,00,000/-
चमेली	2,00,000/-
रजनीगंधा	1,00,000/-
जिरेनियम	50,000/-
गैंदा	40,000/-

अति विशिष्ट पुष्प उत्पादन

मुख्य पुष्पीय फसलों के अतिरिक्त अन्य जातियों को इस समूह में रखा गया है। ये वो पुष्प हैं जो एक ही स्थान पर पैदा किए जा सकते हैं तथा बाजार में इनकी कीमत बहुत अधिक मिलती है। उदाहणार्थ लाईमोनियम, हेलिकोनिया, अलंकृत जिंजर, अलंकृत हल्दी, बर्ड ऑफ पैराडाइज, युस्टोमा इत्यादि।

पुष्पों के प्रवर्धन हेतु रोपण सामग्री का उत्पादन

पौधों के प्रवर्धन में उत्तम रोपण सामग्री की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अच्छी गुणवता वाले, कीट एवं रोग मुक्त, अच्छी किस्म के पौधों से ही अच्छी एवं अधिक पैदावार संभव है। अतः कर्तित पुष्प उत्पादन हेतु कंदों, घन कंदों, कर्तनों, चश्मा चढ़े कलमी पौधों, ऊतक संवर्धन विधि द्वारा तैयार किए गए पौधों, प्लग प्लांट्स

आदि रोपण सामग्री की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त खुले फूलों, गमले वाले पौधों, लान घास, कर्तित पल्लवों आदि के प्रवर्धन के लिए भी अच्छी रोपण सामग्री की आवश्यकता होती है। इसलिए सभी तरह की उत्तम रोपण सामग्री को वैज्ञानिक तरीके से तैयार करना एवं उसे बेचना एक बहुत बड़े व्यवसाय के रूप में विकसित हुआ है तथा आने वाले समय में भी इस तरह के व्यवसाय का भविष्य अति उज्ज्वल है।

पुष्पीय एवं अलंकारी पौधों की पौधशाला

मौसमी फूलों, बीज द्वारा प्रवर्धित होने वाली तथा कोमल फसलों के लिए पौध की आवश्यकता होती है। अतः पौधशाला का निर्माण एवं प्रबंधन एक प्रमुख व्यवसाय है जो किसान को अच्छी गुणवता वाले प्लग विधि द्वारा तैयार किए गए पौधों को उपलब्ध करवा सकता है। इसलिए वैज्ञानिक तरीके से रोग एवं कीट रहित स्वस्थ पौधों की पौधशाला का व्यवसाय किसानों के लिए आय का एक महत्वपूर्ण साधन बन सकता है।

कर्तित पर्णिय पौधों का उत्पादन

आजकल फूलों के साथ-साथ गुलदस्ते में तथा सजावट के लिए हरी पत्तियों का प्रयोग भी किया जाता है इन्हें कर्तित पर्ण कहते हैं। आजकल कर्तित पर्णो या पल्लवों की मांग बढ़ती जा रही है। कर्तित पल्लवों हेतु वृक्षों, झाड़ियों, लताओं, मौसमी फूलों, फर्न, पाम आदि का उपयोग किया जाता है। पहले यह पल्लव या पर्ण जंगलों से लाकर उपयोग किए जाते थे लेकिन मांग अधिक होने के कारण आजकल इनका वैज्ञानिक तरीके से उत्पादन होने लगा है। हरे पल्लवों के अतिरिक्त सदाबहार पौधे, जिनकी पत्तियां चितकबरी होती हैं उनका भी उपयोग किया जाता है। उदाहणार्थ थुजा, बॉटल ब्रुश, कामिनी, शतावरी, कोसमोस, कोलियस, फेन पाम, लेदर लीफ फर्न इत्यादि।

मौसमी फूलों का बीज उत्पादन

मौसमी फूलों जैसे गेंदा, गेलार्डीया, एस्टर, पेंजी, पिटूनिया, डॉग फ्लावर, नासटेरशियम, कैंडीटफ्ट, डेहलिया, सूरजमुखी, कलेंडूला, कॉसमॉस, कोचिया, पोर्चुलाका आदि फूलों का प्रचलन काफी बढ़ रहा है एवं इन फूलों के बीजों की बहुत मांग है। ये फूल मौसम के अनुसार लगाए जाते हैं तथा इनका फसलचक्र वार्षिक होता है। इसलिए इनकी मांग घरेलू एवं विदेशी बाज़ार में बहुत अधिक रहती है। हमारे देश में जलवायु में विविधिता होने के कारण एवं सस्ती मजदूरी के चलते मौसमी फूलों का बीजोत्पादन काफी आसान है। यहां पर उगाए गए बीज मुख्यतः यूरोपीय देशों में निर्यात किए जाते हैं। अतः किसान मौसमी फूलों के बीजोत्पादन से भी अपनी आमदनी बढ़ा सकता है।

संकर बीज उत्पादन

जिन पुष्पों का प्रवर्धन बीजों द्वारा किया जाता है उनमें संकर बीज तैयार करना बहुत लाभदायक है। मौसमी फूल मुख्यत: गैंदा, पिटुनिया, डॉग फ्लावर, पॉट मेरीगोल्ड, स्टॉक आदि में संकर बीज का उत्पादन किया जा सकता है। इन बीजों की देश-विदेश में बहुत अधिक मांग है तथा परागित बीजों की अपेक्षा इनका मूल्य भी अधिक मिलता है। ऐसे बीज अमेरिका, यूरोप, ऑस्ट्रेलिया, जापान आदि देशों को निर्यात किए जाते हैं।

ऊतक संवर्धित पौधों का उत्पादन

जिन फसलों में विषाणु रोगों की संभावना अधिक होती है, विभाजन की गति धीमी होती है या जिनका विभाजन आसानी से नहीं होता है, उन्हें ऊतक संवर्धन विधि द्वारा तैयार किया जाता है। किसान ऊतक संवर्धन

विधि द्वारा पौधे तैयार करने का प्रशिक्षण प्राप्त करके इस विधि से पौधे बनाकर अधिक आय कमा सकते हैं। आर्किड, जरबेरा, कारनेशन, एनथुरियम तथा कर्तित पल्लवों आदि के पौधे इस विधि द्वारा तैयार किए जाते हैं।

गमले वाले पौधों का उत्पादन

आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण एवं शहरीकरण के कारण भूमि की कमी होती जा रही है। इसलिए वर्तमान समय में गमले वाले पौधों की भूमिका बहुत बढ़ गई है। पौधों एवं हरियाली के प्रति रुचिकर लोग या तो पौधों को घरों में उगाते हैं या खरीदते हैं। इसके साथ-साथ जब महानगरों में बड़े पर्व, सामाजिक कार्यक्रम अथवा समारोह पर अधिक गमले वाले पौधों की आवश्यकता होती है तो गमले बड़ी-बड़ी पौधशालाओं से किराए पर लिए जाते हैं तथा समारोह की समाप्ति के पश्चात वापस कर दिए जाते हैं। कर्तित पुष्पों के बाद गमले वाले पौधों का विश्व बाजार में दूसरा स्थान है। गमले वाले पौधों में पत्तीनुमा एवं फूलों वाले पौधों का बहुत अधिक महत्व है। इसके अतिरिक्त कांटेदार (कैक्टस) एवं गूदेदार (सकुलेंट) पौधे भी गमले वाली श्रेणी में आते हैं। अतः गमले वाले पौधों को उगाकर, बेचकर अथवा उन्हें किराए पर देकर भी किसान बहुत लाभ कमा सकते हैं।

अंत: गृह सज्जा के लिए अलंकृत पौधों का उत्पादन

शहरीकरण एवं औद्योगीकरण के युग में खुली जगह कम रह गई है तथा सजावटी पौधों का प्रयोग अंत:सज्जा के लिए होने लगा है। इसके अतिरिक्त वायु प्रदूषण के चलते लोग घर में या छत पर बालकनी में या तो गमलों में या फिर लटकती हुई टोकरियों में सजावटी पौधे लगाने पर बाध्य हो चुके हैं। अतः वर्तमान समय में आंतरिक सज्जा हेतु गमले वाले पौधों की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। गमले वाले पौधे भवन के भीतर होने वाले प्रदूषण को भी नियंत्रित करते हैं तथा कार्य करने की क्षमता को बढ़ाते हैं। इसलिए बड़े-बड़े संगठनों में भी आंतरिक सज्जा एवं कर्मचारियों की कार्य क्षमता को बढ़ाने के लिए अलंकृत पौधों द्वारा आंतरिक सजावट पर बल दिया जाता है। आजकल सामूहिक कार्यालयों, व्यावसायिक स्थलों, होटलों, शॉपिंग सेंटर (मॉल) तथा घरों में अंत: गृह सज्जा के लिए तथा पत्तीनुमा पौधों की मांग बढ़ रही है जो कि किसान की आमदनी को बढ़ाने के लिए एक अच्छा आयाम है।

फूलों की संरक्षित खेती

अच्छी गुणवता हेतु या बेमौसमी पुष्पोत्पादन के लिए फूलों की संरक्षित खेती एक बहुत उपयोगी तकनीक है जिसमें फूलों को ग्रीन हाउस या हरित गृह में उगाया जाता है। संरक्षित खेती के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता भी नहीं होती है। केवल 500 या 1000 वर्ग मीटर में यदि संरक्षित खेती की जाए तो वह एक परिवार के जीवकोपार्जन के लिए पर्याप्त है। परंपरागत खेती की तुलना में संरक्षित खेती करने में फसल उगाने में खर्चा अधिक होता है परंतु फसलों की उत्पादकता एवं गुणवता भी बढ़ जाती है। हरितगृह में कम पानी की आवश्यकता होती है, खाद का समुचित उपयोग होता है, कीटों तथा रोगों का प्रकोप कम होता है, वर्षा के पानी से भी बचाव रहता है तथा खराब मौसम में भी फसलों के खराब होने का डर नहीं होता है। साथ ही साथ वातानुकूलित हरित गृह में पूरे वर्ष पुष्पीय पौधों एवं फसलों का उत्पादन किया जा सकता है। इसलिए मूल्यवान फसलों जैसे गुलाब, गुलदाउदी, कार्नेशन, लिलियम, जरबेरा, आर्किड, एंथुरियम आदि की संरक्षित खेती की जाती है। किसान संरक्षित खेती हेतु प्रशिक्षण लेकर स्वयं भी इस तकनीक से पुष्प पैदा कर अच्छी कमाई कर सकते हैं।

लॉन/टर्फ/घास उद्योग

खेल के मैदानों (क्रिकेट, फुटबॉल), गोल्फ कोर्स एवं विशेष पार्कों में टर्फ घास की बहुत अधिक मांग है तथा टर्फ घास का उद्योग अपनी चरम सीमा पर है। इसके अतिरिक्त सरकारी कार्यालयों, स्कूल, कॉलेज आदि में भी लॉन तैयार करने हेतु टर्फ घास का उपयोग होता है। भूदृश्य निर्माण में भी लॉन की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। औद्योगिक क्षेत्रों में भूमि एवं ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने तथा आस-पास हरियाली रखने के लिए टर्फ घास का एक बड़े स्तर पर प्रयोग किया जाता है। रातों रात किसी बंजर जमीन के टुकड़े को सुसज्जित एवं हरा भरा करने के लिए टर्फ घास के कालीन का उपयोग किया जाता है तथा यह टर्फ घास हम विदेशों से आयात करते हैं। अतः अच्छी गुणवता वाली टर्फ घास को उगाना भविष्य में एक बड़े व्यवसाय के रुप में देखा जा रहा है। यदि इस टर्फ घास को किसान एक व्यवसाय के रूप में शुरू करें तो यह एक मिलियन डॉलर उद्यम है जिसके द्वारा किसान दोगुनी से भी अधिक आय कमा सकता है।

स्थल सौंदर्यीकरण/भूदृश्य निर्माण हेतु पौधों का उत्पादन

स्थल सौंदर्यीकरण/भूदृश्य निर्माण आज के युग की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गई है। पर्यावरण संतुलन हेतु एवं आसपास की जगह को सुंदर बनाने के लिए सजावटी पौधों का प्रयोग होता है। कभी-कभी किसी स्थान का रातों रात सौंदर्यीकरण करना हो तो बहुत सारे अलंकृत पौधे एवं टर्फ का उपयोग होता है। इसलिए भूदृश्य निर्माण में प्रयोग होने वाले सजावटी वृक्षों, झाड़ियों, लताओं, कंदीय पुष्पों, लॉन घास, पुष्पीय पौध, एवं गमले वाले पौधों को तैयार करके अधिकाधिक लाभ कमाया जा सकता है।

सूखे फूलों का उत्पादन

फूलों एवं सजावटी पौधों को उगाकर तो किसान लाभ कमा ही सकता है परंतु जब बाज़ार में ताज़े फूलों की मांग या उनका दाम कम हो तो फूलों को सुखाया जा सकता है तथा इन सूखे फूलों के विभिन्न उत्पाद बना कर देश विदेश में बेचे जा सकते हैं। फूलों को विभिन्न तरीकों से सुखाया जा सकता है। सुखाए गए फूलों की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि 6-12 महीनों तक इन फूलों या उत्पादों का भंडारण सूखे, ठंडे एवं प्रकाश रहित स्थानों पर कर सकते हैं। फूलों के अतिरिक्त झाड़ियों, वृक्षों की शाखाएं, जंगली घास, देशी जातियों के फल-फूल इत्यादि को भी सुखा कर मूल्यवर्धित उत्पाद बनाए जा सकते हैं। जैसे सूखे फूलों के पुष्प विन्यास, पॉट प्यूरी, बधाई पत्र, पेपर वेट, दीवार भित्ति इत्यादि बनाए जा सकते हैं।

मूल्यवर्धित उत्पादों का निर्माण

आज के युग में फूलों की खेती सिर्फ खेती तक ही सीमित नहीं रह गई है परंतु उसमें बहुत नवोन्मेष हो गए हैं। जीवन शैली में परिवर्तन ने इन नए आयामों को जन्म दिया है जिसमें मूल्यवर्धन एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पुष्पों द्वारा अधिक आय प्राप्त करने हेतु उनमें मूल्य वर्धन करना एक बहुत अच्छा विकल्प है। फूलों के अनेक प्रकार के मूल्य वर्धित उत्पाद जैसे माला, गजरा, वेणी, गुलदस्ता, पुष्प विन्यास, इत्र, सुगंधित तेल, पुष्प आभूषण, पुष्पीय उपहार, गुलकंद, गुलाब जल, फूलों की पंखुड़ियों की चाय (चमेली, गुलाब, गुदलाउदी आदि) सौंदर्य प्रसाधन, औषधीय उत्पाद, पंखुड़ी अंतः स्थापित हस्तशिल्प कागज, शरबत, प्राकृतिक रंग आदि बनाए जा सकते हैं। इन उत्पादों के निर्माण से किसान/कारोबारी की आय में कई गुना बढ़ोतरी होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

सुगंध चिकित्सा हेतु पुष्पोत्पादन

किसी कवि ने बहुत सही कहा है कि-

राजा हो या रंक हो, देते इक-सी गंध।
फूल कभी माने नहीं, ऊंच नीच के बंध।

आदिकाल से मनुष्य विभिन्न तरह के फूलों से निकलने वाली खुशबू का प्रयोग कर रहा है। सदियों से राजा-महाराजा, ऋषि, मुनि खुशबूदार फूलों का उपयोग प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रुप से करते आए हैं जैसे कि गुलाब के फूल को सूंघने, फूलों की पंखुड़ियों को स्नान करने वाले जल में मिलाने, सुगंधित फूलों के तेल से मालिश करने आदि के रूप में करते रहे हैं। फूलों की सुगंध में इतनी

शक्ति होती है कि वह मनुष्य के दिल, दिमाग तन व मन को शांति प्रदान करता है तथा रोगों से मुक्ति दिलाता है। वर्तमान समय में शहरों एवं महानगरों में बहुत से ऐसे केंद्र खुल गए हैं जो कि सुगंधित फूलों, फूलों के अर्क अथवा सुगंधित तेलों से विभिन्न रोगों जैसे सिरदर्द, खांसी, नजला, जुखाम, दमा, बदन दर्द आदि रोगों की चिकित्सा करते हैं। इसलिए सुगंधित फूलों जैसे गुलाब, जूही, चमेली, लैवेंडर, रोज़मेरी, चेमोमायल आदि की खेती से किसान काफी लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

अतः उपरोक्त वर्णित पुष्पीय बागवानी में विविधीकरण किसानों की आय बढ़ाने के लिए बहुत अच्छे विकल्प हैं। उचित वैज्ञानिक प्रशिक्षण प्राप्त करके किसान एवं बेरोजगार युवा, ग्रामीण व शहरी महिलाएं एक अच्छा लघु या वृहत उद्यम स्थापित कर सकते हैं तथा साथ ही साथ बहुत सारे सहायक उद्यम भी स्थापित कर सकते हैं जो लोगो को खुशहाल बनाने में अवश्य ही सहायक होंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

पुष्प की सुगंध वायु के विपरीत कभी नहीं जाती लेकिन मानव के सदगुण की महक सब ओर फैल जाती है।

- गौतम बुद्ध

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

प्रशस्ति-पत्र

राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार

वर्ष 2016-17 के दौरान सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग में उल्लेखनीय योगदान के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली को बड़े संस्थानों की श्रेणी में द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई 2018
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

विविधा....

जैव रसायन विज्ञान संभाग - एक परिचय

किशवर अली एवं शैली प्रवीण

जैव रसायन विज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

संसार में दो प्रकार के जीवधारी पाए जाते हैं। प्रथम वे जो अपना भोजन सूर्य के प्रकाश में स्वयं तैयार कर लेते हैं जैसे पेड़-पौधे और दूसरे वे जो अपने भोजन के लिए प्रथम वर्ग के जीवधारियों पर निर्भर रहते हैं इसी श्रेणी में मनुष्य भी आता है। पेड़-पौधों पर मनुष्य की इसी निर्भरता ने उसे खेती करने पर मजबूर किया और बढ़ती जनसंख्या के कारण उत्पादन में वृद्धि करने के लिए ही, पेड़-पौधों के जीवन को समझने के लिए मानव को प्रेरित किया। इसके लिए कृषि में बहुत से विषयों का समावेश किया गया जिससे कृषि अनुसंधान में आवश्यक सहायता प्राप्त हो सके। जैसे-जैसे मानव का ज्ञान बढ़ता गया वह अपने लिए आवश्यक तत्वों को प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयास करता गया। पेड़-पौधों के अंदर होने वाली विभिन्न प्रक्रियाएं, इन प्रक्रियाओं के पथ, पौधे के किस भाग से हमें क्या तत्व प्राप्त होता है? किस पथ में कौन-कौन से एंजाइम कार्य करते हैं और किस एंजाइम के लिए किस कोफेक्टर की आवश्यकता होती है? ऐसे ही तमाम सवालों के जवाब जिस विज्ञान की शाखा से हमें मिले हैं उस विज्ञान का नाम है जैव रसायन विज्ञान। जैव रसायन विज्ञान ने पेड़-पौधों के विषय में जो समझ मानव को दी है उसी के फलस्वरूप वह कृषि में अद्भुत सफलता प्राप्त कर रहा है।

फसल अनुसंधान में जैव रासायनिक अध्ययन के महत्व को स्वीकार करते हुए, जैव रसायन विज्ञान संभाग (डिवीजन ऑफ बायोकैमिस्ट्री) 1966 में एक संभाग के रुप में अस्तित्व में आया था, जिसमें आणविक जीवविज्ञान, जैव रसायन और पोषण संबंधी अनुसंधान पर अधिक जोर दिया गया। यह संभाग मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान से उत्पन्न हुआ है। इसकी स्थापना के बाद से, संभाग ने सर्वोत्तम शोध, शिक्षण और प्रशिक्षण सुविधाओं का अधिग्रहण किया है, और 1995 से आईसीएआर द्वारा एनएआरएस में जैव रसायन विज्ञान में उन्नत फैकल्टी ट्रेनिंग (सीएएफटी) के केंद्र के रूप में मान्यता प्राप्त होने का गौरव प्राप्त है।1995 से प्रति वर्ष संभाग निरंतर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के कृषि वैज्ञानिक तथा शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है।

संभाग के कार्य क्षेत्र

- कृषि में वर्तमान समस्याओं से संबंधित मौलिक और व्यावहारिक जैव रासायनिक, आणविक, जैविक और पोषण संबंधी अनुसंधान करना।
- अनाज और दालों के पौष्टिक मूल्य का मूल्यांकन करना।
- बेहतर जीनोटाइप के विकास में योगदान करना।
- अनाज और दालों में उपस्थित जहरीले या एंटी पोषण संबंधी कारकों की पहचान, निष्कासन और

निष्क्रियता। जैसे- खेसारी दाल में बीओएए, सोयाबीन के ट्राप्सिन अवरोधक, मूंगफली के आफ्लाटोक्सिन्स।

- खाद्य संरक्षण और प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी और फल, फसलों और सब्जियों और उनकी पौष्टिक गुणवता का मूल्यांकन करना।
- रोग और कीट प्रतिरोध की जैव रसायन
- सूखा प्रतिरोध की जैव रसायन
- संतुलित आहार का गठन
- कुशल मानव संसाधन विकसित करने के लिए शिक्षण और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन करना।
- राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और आईसीएआर संस्थानों के कृषि वैज्ञानिकों को प्लांट बायोकैमिस्ट्री और आणविक जीवविज्ञान के क्षेत्र में उन्नत तकनीकों में प्रशिक्षण प्रदान करना।
- जैव रसायन विज्ञान में शिक्षण के लिए शिक्षण सहायक उपकरण विकसित करना।

संभाग की उपलब्धिया:

पोषण संबंधी अनुसंधान

तेलों की गुणवता में सुधार: वसा हमारे भोजन का एक आवश्यक अवयव है जिसका पौधों में भंडारण होता है। तैलीय फसलों के बीजों में 70-80 प्रतिशत वसा अम्ल होते हैं। तेलों की गुणवता में सुधार हेतु सरसों (ब्रेसिका जानसिआ) में तेल तथा लिपिड संश्लेषण में लिप्त जीनों का पृथक्करण एवं गुणों का निर्धारण किया गया। सोयाबीन के तेलीय गुणवता में सुधार के लिए उत्तरदायी जीन फेड 2-1 का पृथक्करण एवं चरितांकन किया गया।

सोयाबीन की गुणवता में सुधार:

- सोयाबीन और इससे बने हुए उत्पाद का स्वाद और सुगंध ख़राब होने का एक मुख्य कारण है उसमें पाए जाने वाला पॉलीअनसैचुरेटेड फैटी एसिड (पूफा)। इसकी उपस्थिति से स्वाद और सुगंध ख़राब करने वाला पदार्थ उत्पन्न होता है। यद्यपि सोयाबीन में बहुत कम पूफा होता है फिर भी बहुत अधिक स्वाद और सुगंध खराब होती है। सोयाबीन में ख़राब स्वाद और सुगंध में सुधार हेतु कार्य का निष्पादन किया।
- सोयाबीन के बीज कोट से रंग एंथोसाइनिन को निकाला गया जो रंग के साथ-साथ पौष्टिक-औषधीय गुण भी रखता है। इसका प्रयोग खाद्य सामग्री में अत्यंत लाभदायक होगा।
- सोयाबीन जीनोटाइप में विटामिन ई की मात्रा का अध्ययन किया गया। यह विटामिन सोयाबीन के भंडारण के समय को बढ़ाता है। भंडारण के समय सोयाबीन में उपस्थित तेल ख़राब होने लगता है जिससे अधिक समय तक रखने पर उसमें दुर्गंध आने लगती है। विटामिन ई तेलों को ख़राब होने से रोकता है। 150 सोयाबीन जीनोटाइप विटामिन ई की मात्रा के लिए स्क्रीन किये गए।

उच्च पाचन प्रतिरोधी स्टार्च : चावल हमारे दिन प्रतिदिन के आहार से गायब हो रहा है क्योंकि इसकी उच्च कार्बाहोलिक प्रकृति (80% कार्बोहाइड्रेट) है जो टाइप-।। मधुमेह के लिए एक संभावित कारण है। इस प्रकार हमें उच्च पाचन प्रतिरोधी स्टार्च के साथ नई किस्मों की आवश्यकता है और इसलिए ऐसी किस्मों को स्क्रीन करने और उन्हें लोकप्रिय बनाने के लिए एक पहल की गई है। पारंपरिक रंगद्रव्य किस्मों जैसे नज्वरा, चखाओ इत्यादि का अध्ययन स्टार्च हाइड्रोलिज़ेशन क्षमता के लिए किया गया है, जिससे उन्हें मधुमेह प्रबंधन के लिए बेहतर रुप में प्रयोग किया जा सके।

पारंपरिक रंगीन चावल की किस्में

न्यूनतम एंटी-पोषक तत्व फाइटेट मात्रा वाले ट्रांसजेनिक सोयाबीन का विकास : फाइटेट बहुत से पौधों के ऊतकों, विशेष रूप से ब्रान और बीज में फॉस्फोरस का मुख्य भंडारण रूप है किंतु यह मानव और गैर-रोमिनेंट पशुओं में आयरन, जस्ता, मैग्नीशियम और कैल्शियम की जैव उपलब्धता को कम करने वाले एजेंट के रूप में कार्य करता है। अतः फाइटिक एसिड एंटी-पोषण कारक है इसका पाचन भी संभव नहीं है इसलिए यह उक्त पशुओं के लिए अनुपयोगी होता है। अधिकांशतः पशुओं जैसे सूअर, मुर्गी, मछली आदि को मक्का, दालें, सोयाबीन खिलाये जाते हैं इनमें फाइटेट की मात्रा अधिक होती है किंतु इसका पाचन संभव न होने के कारण उनके द्वारा उपयोग में नहीं लाया जा सकता है। यह उनके मल के साथ बाहर निकल जाता है। मल फॉस्फोरस की प्रचुर मात्रा होने के कारण युट्रोफिकेशन जैसी पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है। सोयाबीन में फाइटेट 3-4 प्रतिशत होता है। आरएनएआई प्रौद्योगिकी और एक्टोपिक उच्च अभिव्यक्ति का उपयोग कर कम फाइटेट मात्रा (40 प्रतिशत) वाला ट्रांसजेनिक सोयाबीन विकसित किया गया। इसमें आयरन 19 प्रतिशत, जस्ता 10 प्रतिशत तथा कैल्शियम 12 प्रतिशत की मात्रा भी अधिक है।

जैविक और अजैविक तनाव सहिष्णु संबंधी अनुसंधान

धान में सूखा सहिष्णु अनुलेखन कारक की पहचान: चावल के उत्पादन में सूखा मुख्य बाधक है। जैव प्रौद्योगिकी की मदद से धान में न्यूनतम जल दबाव से संबंधित नावेल अनुलेखन (ट्रांसक्रिप्शन) कारक के जीन का अरबिडोप्सिस तथा धान में कम जल दबाव में कार्यात्मक सत्यापन किया गया। यह अनुलेखन कारक चावल में सूखा के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक होगा।

गेहूं में उच्च ताप तनाव संबंधी अनुसंधान: बदलते पर्यावरण में उच्च ताप, फसल उत्पादन में बहुत ही हानिकारक सिद्ध हो रहा है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए लगभग 30 से भी ज़्यादा हीट शॉक प्रोटीन को कोड करने वाले जीन को पृथक कर जीन बैंक में पंजीकृत किया गया। थर्मोस्टेबल रुबिस्को एक्टीवेज प्रोटीन का विकास किया गया। तथा नेक्स्ट जनरेशन सिक्वेंसिंग की गई। उच्च ताप तनाव के तहत गेहूं एंडोस्पर्म में नॉवेल स्टार्च सिंथेस जीन की पहचान की गई। मक्का और ज्वार के जीनोम अनुक्रम के आधार पर, गेहूं में दस नॉवेल माइक्रो आरएनए की पहचान उच्च ताप तनाव के तहत की गई और सत्यापित की गई। उच्च ताप तनाव के तहत गेहूं की किस्मों के विपरीत जैव रासायनिक मार्करों से संबंधित सेल ऑक्सीडेटिव तनाव का विश्लेषण किया गया।

जैव-उत्प्रेरक उपचार के माध्यम से धान में सूखा तनाव को कम करने के लिए शोध कार्य: जैव-उत्प्रेरकों के साथ बीज उपचार एक प्रभावी तकनीक है, जो सूखा के प्रति दबाव को सहनशील बनाने में काफी लाभदायक सिद्ध हुई है। धान के अलग अलग आनुवंशिक रूपों में जैव-उत्प्रेरकों का प्रयोग कर सूखा और बाढ़ से पीड़ित क्षेत्रों में सूखा सहिष्णुता में सुधार के द्वारा चावल की उपज में वृद्धि की संभावनाओं का अध्ययन किया गया।

मूल अनुसंधान :

- कोशिका की रक्षात्मक प्रतिक्रियाओं को संशोधित करके वायरस के प्रति प्रतिरोधकता वाले ट्रांसजेनिक टमाटर का विकास किया गया व निजी क्षेत्र को लाइसेंस प्रदान किया गया।
- रिजोबियम में नाइट्रोजन और अमोनिकरण पथ की खोज की गयी।
- प्रकाश श्वसन (फोटोरेस्पिरेसन) एक अनावश्यक प्रकिया समझी जाती थी जिसमें ऊर्जा का क्षय होता है किंतु इसमें खोज कर पाया गया कि प्रकाश-श्वसन की प्रक्रिया में एमिनो अम्लों का संश्लेषण होता है इस प्रकार प्रकाश-श्वसन की उपयोगिता सिद्ध की गयी।

खेसारी की नवीन प्रजाति रतन का विकास: खेसारी में एक लंबे समय से उपस्थित बीओएए अथवा ओडेप नामक आविष को कम करने की कोशिश की जा रही थी किंतु सफलता का श्रेय जैव रसायन संभाग को जाता है। यहां

पर खेसारी की नवीन कम आविष और अधिक उपज वाली केसरी दाल (लथाइरस सैटाईवस) प्रजाति रतन का विकास किया गया। इस प्रजाति को भारत के पूर्वोत्तरी मैदानी भाग तथा मध्य क्षेत्र के लिए जारी किया गया तथा केसरी दाल के मोती नाम के सोमाक्लोन का विकास किया गया जिसकी कम आविष, अधिक उपज, और बीजों एवं फूलों का रंग सफ़ेद है। ओडीऐपी को नष्ट करने वाले जीन का भी पृथक्करण एवं गुण निर्धारण किया गया जो भविष्य में अनुसंधान में सहायक होगा।

रतन प्रजाति के पौधे, फलियां और बीज

जैव रसायन विज्ञान संभाग में उन्नत फैकल्टी ट्रेनिंग

पोषक तत्वों से भरपूर बाजरा-एक विकल्प

सुनेहा गोस्वामी[1], नविता बंसल[1], जन्नत[1], रंजीत रंजन कुमार[1], समर पाल सिंह[2], सी. तारा सत्यवती[3], शैली प्रवीण[1]

[1]जैव रसायन संभाग, भा.कृ.अनु.सं. नई दिल्ली 110012
[2]आनुवंशिकी संभाग, भा.कृ.अनु.सं. नई दिल्ली 110012
[3]भा.कृ.अ.प.- अखिल भारतीय बाजरा समन्वित परियोजना, जोधपुर, राजस्थान

आजकल की भागती दौड़ती जिंदगी एवं आधुनिक जीवन शैली के कारण हम अपनी सेहत के प्रति लापरवाह होते जा रहे हैं। भारत में चावल और गेहूं मुख्य रूप से हमारे दैनिक आहार हैं। प्राय: हर अनाज कार्बोहाइड्रेट्स का मुख्य स्रोत होता है जो हमें ऊर्जा प्रदान करता है। भारतीय घरों में मुख्य तौर पर गेहूं की रोटी ही बनाई जाती है परंतु सिर्फ गेहूं की रोटी पौष्टिकता की कसौटी पर खरी नहीं उतरती। यदि गेहूं के साथ अन्य अनाज जैसे बाजरा, चना, सोयाबीन, जौ, मक्का को भी सही अनुपात में मिला कर गेहूं के साथ पिसवाया जाए तो उस आटे से बनी रोटी स्वादिष्ट होने के साथ साथ पोषक तत्वों से भी भरपूर होगी और स्वास्थ्य के लिए वरदान साबित होगी। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के अनाज तथा दालों से मिलकर बने आटे को 'मल्टीग्रेन आटा' कहा जाता है और आजकल ये बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं या इसे स्वयं घर पर भी तैयार किया जा सकता है। इसे घर में तैयार करने के लिए सभी प्रकार के अनाजों को उचित मात्रा में गेहूं के साथ मिला कर पिसवा सकते हैं। रोटी में भिन्नता लाने के लिए गेहूं और अन्य सभी अनाज और दाल को अलग-अलग पिसवा के रख सकते हैं तथा रोटी बनाने के लिए आटा तैयार करते वक्त गेहूं के आटे में अन्य सभी प्रकार के आटे को थोड़ा-थोड़ा मिलाकर गूंद सकते हैं। भारत में चावल और गेहूं के बाद 'मिलेट वर्गीय' फसलों का देश के खाद्य एवं पोषण सबंधी सुरक्षा प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान है। बाजरा उत्पादन में भारत प्रथम स्थान पर है। लगभग 9-10 मिलियन हेक्टेयर के क्षेत्रफल में बाजरे की खेती होती है तथा 8-9.5 मिलियन टन उत्पादन होता है। भारत में मुख्यत: राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश तथा हरियाणा राज्यों में बाजरे की खेती की जाती है।

बाजरा न केवल पोषक तत्वों का भंडार है बल्कि यह जलवायु लोचनशीलता वाली फसल भी है। अर्थात जलवायु के प्रतिकूल होने जैसे सूखा पड़ने, जलवायु तापमान अधिक होने, मिटटी की उर्वराशक्ति कम होने इत्यादि विपरीत परिस्थितियों में भी बाजरा किसान को अच्छी फसल प्रदान करता है। जहां अन्य फसलों का उत्पादन नहीं हो पाता। बाजरे को खेती के लिए अन्य फसलों की तुलना में काफी कम मात्रा में खनिज, उर्वरक, कीटनाशक और पानी की आवश्यकता होती है अर्थात बाजरा बहुत ही सीमित संसाधनों का उपयोग कर के किसान को एक उत्तम फसल प्रदान करता है। गरीब और सीमांत श्रेणी के किसानों के लिए बाजरे की खेती एक अच्छा विकल्प है जो उन्हें कम लागत में अच्छा लाभ प्रदान करा सकता है। या यूं कहें कि बाजरे की खेती जहां हमें संतुलित पोषण प्रदान करती है वहीं प्रकृति के सीमित संसाधनों का उपयोग कर किसानों को अधिक आर्थिक लाभ भी प्रदान करती है। बाजरा प्रकृति द्वारा दिया गया एक वरदान है। तालिका-1 में बाजरा के पोषक तत्वों को गेहूं तथा चावल के पोषण से तुलना कर दिखाया गया है। बाजरा मुख्यतः अफ्रीका एवं भारत में उगाया जाता है। बाजरा एक बहुउपयोगी फसल है जिसको मुख्य रूप से अनाज तथा पशुओं के लिए चारे के रूप में उपयोग किया जाता है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मक्का, ज्वार, गेहूं, जौ, तथा ज्वार के बाद बाजरा छठे स्थान पर सबसे महत्वपूर्ण है। जबकि भारत में बाजरे का उत्पादन गेहूं तथा चावल के बाद तीसरे स्थान पर है। मिलेट वर्गीय फसलों में बाजरा सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण फसल है।

पोषक तत्वों से भरपूर बाजरा

बाजरे में पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें कार्बोहइड्रेट्स अच्छी मात्रा में पाया जाता है जो कि

ऊर्जा प्रदान करता है। इसमें प्रोटीन भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। बाजरे में 5-8% तक वसा होती है जिसका 74% असंतृप्त वसा होती है जो कि ओमेगा-3 वसीय अम्ल से भरपूर होता है तथा स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद भी होता है। यही नहीं, बाजरे में सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे लोहा, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जस्ता, पौटेशियम इत्यादि भी अच्छी मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें रेशा (फाइबर) भी प्रचुर मात्रा में होता है जो हमारे दैनिक भोजन का अति महत्वपूर्ण घटक है। बाजरे में विटामिन जैसे कैरोटीन, विटामिन बी-6, फोलिक अम्ल, नियासिन इत्यादि भी अच्छी मात्रा में पाए जाते हैं। अत: नियमित रूप से बाजरे को अपने भोजन का हिस्सा बनाने से भारत को कुपोषण मुक्त बनाया जा सकता है।

बाजरे के औषधीय गुण

बाजरे में पोषकीय गुणवता के साथ-साथ औषधीय गुण भी पाए जाते हैं। बाजरा स्वास्थ्य के लिए एक उत्तम श्रेणी का खाद्य है। डॉ. संतोष जैन (पूर्व निदेशक होम इक्नोमिक्स इंस्टिट्यूट, दिल्ली विश्वविद्यालय) की एक रिपोर्ट के अनुसार, बाजरा एक ऐसा अनाज है जिसमें अम्ल नहीं बनता साथ ही यह आसानी से पच भी जाता है। बाजरे में रेशे पर्याप्त मात्रा में पाए जाते है। नियमित रूप से बाजरे के सेवन से कब्ज, मोटापा, और पित्त की पथरी (गॉलस्टोन) जैसी बीमारियों में बहुत लाभ मिलता है।

बाजरा एक ग्लूटेन मुक्त तथा कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स (जी आई) वाला आहार है। नियमित रूप से बाजरे के सेवन से निहित ग्लूकोज धीरे धीरे निकलता है जो कि मधुमेह से पीड़ित लोगों तथा ग्लूटेन एलर्जी से पीड़ित लोगों के लिए एक वरदान है। बाजरा में एलर्जी विरोधी गुण पाया जाता है जो इसे गर्भवती महिलाओं तथा लैक्टेटिंग माताओं के लिए भी अत्यंत लाभकारी बनाता है। बाजरे में मैग्नीशियम की प्रचुरता उच्च रक्तचाप तथा हृदय संबंधी बीमारियों में लाभ प्रदान करता है। बाजरे में मौजूद फॉस्फोरस हड्डियों को मजबूती प्रदान करता है।

बाजरे के पोषक तत्वों तथा औषधीय गुणों में श्रेष्ठता होने के कारण, भारत सरकार ने बाजरे को न्युट्रीय मिल्लेट्स (न्युट्रीय सीरियल्स) से अलंकृत किया है। साथ ही बाजरा के गुणों को जनसाधारण तक पहुंचाने तथा उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार तथा कृषि मंत्रालय ने 2018 को 'नेशनल ईयर ऑफ मिलेट्स' घोषित किया है। भारत में बहुत से अनुसंधान केंद्र जैसे आईसीएआर- आल इंडिया कोऑर्डिनेटेड प्रोजेक्ट ऑन बाजरा - जोधपुर, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान - नई दिल्ली, इक्रीसेट - हैदराबाद इत्यादि बाजरे की उन्नत किस्मों को विकसित करने तथा इसकी उपयोगिता को और सुदृढ़ बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं।

बाजरे का उपयोग

बाजरे का उपयोग रोटी, दलिया, कुकीज, बिस्कुट, नूडल्स, केक आदि व्यंजन बनाने में किया जाता है। केवल बाजरे के आटे से रोटी बनाई जा सकती है या अन्य अनाज (जैसे गेहूं, मक्का) दलहन (जैसे चना, सोयाबीन) आदि के साथ मिला कर भी रोटी बनाई जा सकती है जो अच्छे स्वाद तथा पॉष्टिक होने के साथ भोजन में विविधता भी प्रदान करती है। साथ ही स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभकारी है।

बाजरे को दूध में मिला कर खीर, लस्सी या रबड़ी जैसे व्यंजन बनाए जा सकते हैं जो स्वादिष्ट होने के साथ-साथ संतुलित आहार भी प्रदान करता है। सर्दियों के मौसम में पोषक तत्वों से परिपूर्ण बाजरा, शरीर को ऊर्जा तथा गर्मी प्रदान करता है।

बाजरे के आटे को गेहूं तथा सोयाबीन के आटे के साथ निश्चित अनुपात जैसे 5 किलोग्राम गेहूं, 1/2 किलोग्राम बाजरा तथा 1/2 किलोग्राम सोयाबीन मिला कर पिसवा लें और इसका सेवन करें। ऊपर लिखे मिश्रित आटे से बनाई गई रोटियों में प्रोटीन, विटामिन, लौह, रेशा, कैल्शियम इत्यादि पोषक तत्व भरपूर मात्रा में उपलब्ध होंगे जो की स्वादिष्ट तथा पौष्टिक होने के साथ साथ स्वास्थ्य के लिए भी बहुत लाभदायक होंगे। आज यदि विश्व स्तर पर देखा जाए तो मुख्य रूप से दो समस्याएं सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं:

(1) ग्लोबल वार्मिंग (बढ़ता जलवायु तापमान)

(2) जनसंख्या वृद्धि

बढ़ते जलवायु के तापमान से गेहूं और चावल का उत्पादन सबसे ज्यादा प्रभावित हो रहा है जो कि अधिकतम जनसंख्या का मुख्य आहार है। विभिन्न आंकड़े बताते हैं कि प्रति 1° सेल्सियस तापमान के बढ़ने से गेहूं का उत्पादन 6% तथा धान का उत्पादन 2-3% तक कम होता जा रहा है। यदि बढ़ते हुए जलवायु तापमान को नियंत्रित नहीं किया गया तो आने वाले 20-30 सालों में जो सबसे बड़ी समस्या सामने आएगी वह है भोजन की उपलब्धता। सिर्फ चावल और गेहूं से संपूर्ण जनसंख्या को भोजन उपलब्ध नहीं कराया जा सकेगा। अत: हमें समय रहते दूसरे विकल्प के बारे में अभी से सोचना होगा। जैसा कि हम जानते हैं बाजरा एक जलवायु लोचनशील फसल है तथा अधिक तापमान में भी बाजरा की फसल अच्छी उत्पादकता प्रदान करती है। साथ ही बाजरा पोषक तत्वों में गेहूं, चावल, मक्का, आदि से श्रेष्ठ है। इन्हीं गुणों के कारण हमारे सामने बाजरा एक अच्छा विकल्प है जो हमें पोषक सुरक्षा के साथ-साथ भोजन सुरक्षा भी प्रदान कर सकता है और यह सही समय है जब हम बाजरे की खेती तथा इसकी उपयोगिता को ज्यादा महत्व दें साथ ही इसे अपने दैनिक आहार प्रणाली में सम्मिलित करें।

तालिका-1: बाजरे का गेहूं तथा चावल के सन्दर्भ में तुलनात्मक पोषकमान

पोषक तत्व	घटक (प्रति 100 ग्राम)	गेहूं	चावल	बाजरा
वृहत् पोषक तत्व	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	71.2	78.2	67.5
	प्रोटीन (ग्राम)	11.8	6.8	11.6
	वसा (ग्राम)	1.5	0.5	5.0
सूक्ष्म पोषक तत्व				
खनिज पदार्थ	कैल्शियम (मि.ग्रा.)	41.0	10.0	42.0
	फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	306.0	160.0	296.0
	लोहा (आयरन) (मि.ग्रा.)	5.3	0.7	8.0
	जस्ता (जिंक) (मि.ग्रा.)	2.7	1.4	3.1
	सोडियम (मि.ग्रा.)	17.1	-	10.9
	मैग्नीशियम (मि.ग्रा.)	138.0	90.0	137.0
विटामिन	विटामिन A (मि.ग्रा.)	64.0	0.0	132.0
	नियासिन (मि.ग्रा.)	5.5	1.9	2.3
	फोलिक अम्ल (मि.ग्रा.)	36.6	8.0	45.5

मौसम की विविधता का फसलों पर प्रभाव

अनन्ता वशिष्ठ एवं प्र. कृष्णन

कृषि भौतिकी संभाग
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

कृषि उत्पादन की सफलता सामान्य मानसून एवं अनुकूल मौसम पर निर्भर करती है। वैश्विक गर्मी के कारण जलवायु में जो बदलाव आया है उसका असर कृषि पर भी पड़ा है। वैश्विक गर्मी, मूलतः तो उस बढ़ते औसत गर्मी के स्तर को कहते हैं जिससे पृथ्वी पर रहने वाले जीवधारी प्रभावित होते हैं। बढ़ती गर्मी का कारण, मूलतः ग्रीन हाऊस गैसों के वातावरण में उत्सर्जन है। धरती के पर्यावरण की गर्मी को बढ़ाने में ग्रीन हाऊस गैसों में से, कार्बन डाइऑक्साइड का योगदान लगभग 49 प्रतिशत, मीथेन का 18 प्रतिशत, नाइट्रस ऑक्साइड का 6 प्रतिशत तथा अन्य गैसों (ओजोन, कार्बन मोनोऑक्साइड आदि) का कुल मिलाकर 13 प्रतिशत का योगदान होता है। इन गैसों में कार्बन डाईऑक्साइड की तुलना में क्लोरो फ्लोरोकार्बन तथा मीथेन गैसें काफी अधिक मात्रा में गर्मी को बढ़ाने का कार्य करती हैं।

कृषि मुख्यतः वर्षा पर ही निर्भर करती है। अपर्याप्त वर्षा के कारण जमीन शुष्क हो जाती है। इसके फलस्वरूप पेड़-पौधों को आवश्यक मात्रा में नमी न मिलने के कारण वे क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तथा सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। फसल की अवस्थानुसार समय पर वर्षा न होने के कारण फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। वर्षा के अतिरिक्त फसल का विकास अन्य कारणों पर भी निर्भर करता है। उनमें वायु एवं जमीन का तापमान, आर्द्रता, बादलों की संख्या, प्रकाशीय तथा बादलीय घंटे, हवा की गति तथा हवा की दिशा, वाष्पोत्सर्जन विशेष रूप से शामिल हैं। अधिक फसल उत्पादन हेतु कृषकों को फसल की बुवाई से लेकर कटाई के समय तक मौसम संबंधी जानकारी होना बहुत आवश्यक है।

पिछले एक दशक में देश ने विभिन्न प्रकार के जलवायु परिवर्तन देखे हैं। जब देश के कुछ भाग भयंकर बाढ़ की चपेट में थे एवं ठीक उसी समय, देश के अन्य भाग सूखे की मार झेल रहे थे। भारत में तीव्र एवं लगातार चरम तापमान की घटनाएं जलवायु परिवर्तन के संकेत को प्रदर्शित करती हैं। फसलों पर भी जलवायु परिवर्तन का गहरा प्रभाव पड़ा है। देश की 65 से 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य से संबंधित गतिविधियों में संलिप्त है। कृषि अभी भी यहां की 60 प्रतिशत से ज्यादा लोगों की जीविका का साधन है। भारतीय कृषि का 65% भाग वर्षा पर निर्भर करता है। वर्षा में विविधता, फसल उपज की 50 प्रतिशत विविधता को दर्शाता है। किसी भी प्रकार के कृषि कार्य मौसम के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। किसी भी फसल की उपज तथा गुणवता उसको मिले उपयुक्त मौसम पर निर्भर करती है। यदि किसी भी फसल के बीज के अंकुरण के समय उपयुक्त तापमान तथा नमी न मिले तो वह अंकुरित नहीं होता है। इसी प्रकार फल तथा फूल आने के लिए भी उपयुक्त वातावरण की जरुरत पड़ती है। पिछले एक दशक में देश ने विभिन्न प्रकार के मौसमीय परिवर्तन देखे हैं। वर्षा की आवृति में कमी आ रही है लेकिन इसकी तीव्रता में बढ़ोतरी हो रही है जिस कारण कहीं बाढ़ तो कहीं सूखे की स्थिति आ रही है। जलवायु परिवर्तन से न केवल भारी संख्या में लोग मौत का शिकार हो रहे हैं बल्कि इससे उनकी आजीविका पर भी गंभीर प्रभाव पड़ रहा है। फसलों पर भी जलवायु परिवर्तन का गहरा प्रभाव पड़ा है। मौसम में परिवर्तन के कारण पिछले कई वर्षों में अनाज उत्पादन में भी परिवर्तन हुआ है।

वैश्विक गर्मी के भौतिक प्रमाण

- वातावरण के तापमान और कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर में वृद्धि।

- वर्षा की आवृति में कमी तथा इसकी तीव्रता में बढ़ोतरी।
- समुद्र के जल स्तर में वृद्धि।
- मानसून के बदलते स्वरूप में बढ़ोतरी।
- प्राकृतिक आपदा की बढ़ती घटनाएं।
- ठंड की अवधि में कमी तथा स्थानांतरण।
- गर्मी की अवधि में बढ़ोतरी।
- बसंत ऋतु की अवधि में कमी।

वैश्विक गर्मी के जैविक प्रमाण

- आम के पेड़ों में जल्दी बौर आना।
- अंटार्कटिक में घास उगना।
- फसल पद्धति में परिवर्तन।
- उपोष्ण जलवायु संबंधी फसलों का उच्च अक्षांश की ओर बढ़ना।

वैश्विक गर्मी के कारण

- ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन।
- वनों की कटाई।
- जनसंख्या वृद्धि।
- कारखानों तथा वाहनों से उत्पन्न प्रदूषण।

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव

गेहूं एवं धान भारत की प्रमुख खाद्यान्न फसलें हैं। अन्य फसलों की तुलना में ये फसलें वातावरण में बढ़ती गर्मी के प्रति कुछ ज्यादा ही संवेदनशील हैं। गर्मी के प्रति धान के पौधों की सहिष्णुता एवं पारिस्थितिक दशाओं के प्रति अनुकूलता, गेहूं के पौधों की तुलना में कुछ बेहतर होती है। यदि गर्मी में वृद्धि हुई तो गेहूं के कुल उत्पादन में कमी हो सकती है।

ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में बढ़ोतरी होने के कारण वातावरण के तापमान और कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर में वृद्धि हो रही है। ठंड की अवधि में कमी और गर्मी की अवधि में बढ़ोतरी हो रही है जिससे जैव विविधता को काफी क्षति हो रही है। वर्षा में कमी आ रही है जिससे पानी की उपलब्धता में कमी आ रही है। जलवायु घटनाओं तथा मानसून के बदलते स्वरूप में बढ़ोतरी आने के कारण कहीं बाढ़ तो कहीं सूखे की स्थिति आ रही है। फसल वृद्धि की अवधि में कमी आने से फसल की पैदावार और बायोमास में कमी आ रही है। कृषि उत्पादन की सफलता सामान्य मानसून एवं अनुकूल मौसम पर निर्भर करती है। वैश्विक गर्मी के कारण जलवायु में जो बदलाव आया है उसका असर कृषि पर पड़ा है। तापमान में सामान्य वृद्धि की वजह से गेहूं तथा सरसों की फसल का उत्पादन कम हो सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण कुछ नए कीड़े, पादप रोग तथा खरपतवारों की भी अधिकता देखी जा रही है।

मौसम की विविधता से पैदावार पर प्रभाव

मौसम की विविधता का कृषि कार्यों से काफी गहरा संबंध होता है। जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों की पैदावार में कमी पाई गई है साथ ही फसल की गुणवता पर भी प्रभाव पड़ा है। भारत में उगाई जाने वाली फसलों के उत्पादन पर मौसम विविधता का काफी असर पड़ रहा है, क्योंकि फसल को अंकुरण से लेकर पकने तक एक उपयुक्त मौसम की जरुरत पड़ती है, जो कम से कम एक निश्चित अवधि तक होना चाहिए। लेकिन यदि अंकुरण के समय उपयुक्त तापमान नहीं मिला तो अंकुरण ठीक से नहीं होगा। फसल में दाना बनने के दौरान तापमान में अचानक वृद्धि होने से अनाज जल्दी पकने लगता है। अतः दाना बनने की अवधि में कमी आ जाती है जिससे उत्पाद में कमी आती है तथा उत्पाद की गुणवता भी प्रभावित होती है।

किसी भी फसल की जैविक और भौतिक प्रक्रिया पर तापमान का बहुत असर पड़ता है। उदाहरण के तौर पर सरसों को सर्दियों में बोया जाता है। यदि फली तथा बीज बनने के दौरान तापमान 2-3 डिग्री सेल्सियस अधिक हो जाता है तो फसल की उपज में काफी कमी आती है। बुवाई का समय फसल में वनस्पति और प्रजनन अवधि की लंबाई को संशोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मौसम परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए बुवाई की तारीखों में संशोधन एक प्रभावी विकल्प

हो सकता है जिससे फसल के विकास को अनुकूल किया जा सकता है।

मौसम का फसल पर असर जानने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के अनुसंधान फार्म में एक अध्ययन किया गया। इसके लिए सरसों की किस्मों को भिन्न-भिन्न समय पर बोया गया। इसमें अगेती, पछेती तथा समय पर सरसों की बुवाई की गई। बढ़ोतरी के सभी सूचकांक नापे गए, चेपा तथा अन्य कीटों और रोगों का असर भी देखा गया तथा फसल के भिन्न चरणों को रिकॉर्ड किया गया।

अध्ययन से यह पाया गया कि पछेती फसल में बढ़ोतरी के सूचकांक (पत्ती क्षेत्रफल सूचकांक, बायोमास, हरित तत्व सूचकांक) कम पाए गए, जिससे पछेती फसलों की पैदावार में कमी पाई गई। चेपा का आक्रमण भी सभी किस्मों में पछेती बोई गई फसल पर ज्यादा था। इसका कारण पछेती फसल की पैदावार के लिए जो वातावरण मिला वह चेपा के लिए भी अनुकूल था, साथ ही फली तथा बीज बनते समय पछेती फसल के लिए 2-3 डिग्री सेल्सियस तापमान अधिक पाया गया, जो बीज बनने के लिए उपयुक्त नहीं था। इसीलिए पछेती फसल की उपज में 15 से 60 प्रतिशत की कमी पाई गई।

पछेती बोई गई फसल पर चेपा का आक्रमण

अन्य अध्ययनों में भी यह पाया गया कि यदि सरसों की बुवाई में देरी की गई तो उसकी उपज में महत्वपूर्ण कमी आती है। फसल की उपज बढ़ाने में मौसम की काफी बड़ी भूमिका होती है। इसीलिए पिछले कई वर्षों के मौसम के घटकों का अध्ययन करके किसी स्थान विशेष के लिए हम किसी फसल की उपयुक्त किस्म की बुवाई का उपयुक्त समय निर्धारित कर सकते हैं, जिससे हम अधिक पैदावार प्राप्त कर सकते हैं।

मौसम जानकारी की फसल उत्पादन में उपयोगिता

मौसम संबंधी जानकारी कृषि पैदावार की गुणवता तथा मात्रा दोनों को बढ़ाने तथा पैदावार मूल्य लागत घटाने में सहायक होती है। यदि हमारे पास जलवायु संबंधी आंकड़े उपलब्ध हैं तो हम इन आकड़ों से अनुपयुक्त मौसम की गणना करके संबंधित जोखिम का ऑकलन कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त जलवायु संबंधी ऑकडों से यह भी संभव है कि हम खराब मौसम की परिस्थितियों को पहचान कर अपने आप को कृषि में कम से कम नुकसान होने के लिए तैयार करें। सही समय पर मौसम की जानकारी को कृषि उत्पादन के लिए जरूरत में लें सकते है। जब मौसम अति अनुकूल होता है, तब विभिन्न प्रकार के कृषि कार्य जैसे बुवाई, सिंचाई, जुताई, खेतों में उर्वरक डालना, कीडों तथा रोगों पर रोक लगाई जा सकती है, जिससे पैदावार में बढ़ोतरी होती है, साथ ही उत्पादन मूल्य घटता है। उदाहरण के तौर पर यदि हमें गेहूं की फसल को काटना है तो हमें उस समय के मौसम की जानकारी होनी चाहिए। यदि हमने कटाई ऐसे समय में कर दी जब मौसम में काफी नमी है तो काटी गई गेहूं जल्दी खराब हो जायेगी। इसलिए सही समय पर मौसम की जानकारी देना फसल उत्पादन के लिए बहुत जरूरी है।

फसल की उपज जलवायु, भौतिक, मनोवैज्ञानिक, और जैविक कारकों की एकीकृत सहकारिता का परिणाम है। इनमें मौसम की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। यह फसल पर सीधे प्रभाव डालती है। परोक्ष रूप से यह कीड़े, रोगों, कवक, मिट्टी की नमी, प्रबंधन तथा सस्य क्रियाओं (कृषि कार्य कलापों) पर भी असर डालती है।

मौसम के अप्रत्यक्ष प्रभाव (रोगों व कीटों) के कारण कुल खाद्यान्न उत्पादन में 10% से ज्यादा क्षति होती है। एक अध्ययन में यह पाया गया कि उर्वरक का उपयोग यदि प्रतिकूल मौसम में किया जाता है तो इससे 65% रासायनिक उर्वरकों, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस आदि

की क्षति हो जाती है। बाढ़, सूखा, गर्म तथा शीत लहरें, पाला, ओला, बवंडर आदि सभी की खाद्यान्न उत्पादन कम करने में अहम भूमिका है। मौसम के वर्तमान और पिछले मौसम की स्थिति का मूल्यांकन करके भविष्य में संभावित मौसम के बारे में पहले ही बता देने को मौसम पूर्वानुमान कहते हैं। मौसम के पूर्वानुमान को ध्यान में रखते हुए कृषि कार्य करना, कृषि की पैदावार बढ़ाने एवं किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने में सहायक होता है। मौसम का पूर्वानुमान वातावरण अध्ययन में एक बहुत उपयोगी परिणाम है। यह भविष्य में किसानों, योजनाकारों, नीति निर्माताओं तथा कृषि वैज्ञानिकों के लिए प्रतिकूल मौसम में फसल रणनीतियों के लिए अग्रिम विचार बनाने में बहुत सहयोगी है।

जलवायु परिवर्तन को कम करने के उपाय

जलवायु में हो रहे परिर्वतनों को कम करने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिए:

- जीवाश्म ईंधन के उपयोग में कमी करनी चाहिए
- प्राकृतिक ऊर्जा के स्रोतों को अपनाना चाहिए, जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि।
- पेड़ों को बचाना चाहिए तथा साथ ही अधिक वृक्षारोपण करना चाहिए।
- फ़सल चक्र को प्रभावी रूप से अपनाया जाना चाहिए।
- पर्यावरण समस्या के बारे में स्कूलों में जागरूकता बढ़ाने के कार्य करने चाहिए।
- पर्यावरण को नुकसान होने से बचाने के बारे में स्कूलों, कॉलेजों, शिक्षा संस्थानों एवं सामाजिक स्थानों में जागरूकता के कार्यक्रम करने चाहिए।

जलवायु परिवर्तन एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय समस्या है। यदि हम सब मिलकर इस समस्या से निजात नहीं पाएंगे तो आने वाली पीढ़ियां हमें धिक्कारेंगी। इसीलिए हमें इस मामले में एक सक्रिय एवं महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। हमें बढ़ते हुए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करना चाहिए तभी हम जलवायु परिवर्तन के खतरों से बच सकते हैं।

फल के आने से वृक्ष झुक जाते हैं, वर्षा के समय बादल झुक जाते हैं, संपत्ति के समय सज्जन भी नम्र होते हैं। परोपकारियों का स्वभाव ही ऐसा है।

- तुलसीदास

मरुस्थलीय क्षेत्रों की शान है खेजड़ी

उषा मीना, सुनीता यादव, रमेश चंद हरित, संदीप कुमार एवं लाल चंद मालव

पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु समुत्थानशील कृषि केंद्र
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

खेजड़ी का पेड़ भारत व विश्व के अन्य अर्द्ध शुष्क या शुष्क क्षेत्रों में पाया जाता है। भारत में "खेजड़ी" का पेड़ मुख्य रूप से राजस्थान में पाया जाता है और इसे "कल्पतरु" या "सूखे क्षेत्र का राजा" के नाम से भी जाना जाता है। इसका प्रत्येक भाग बहुत उपयोगी होता है। इसका पेड़ छोटे से मध्यम आकार का होता हे और यह बहुत अधिक तापमान (48° सेल्सियस से अधिक) और (100 मिलिमीटर) से कम वर्षा पर भी जीवित रह सकता है। यह पौधा सदैव हरा-भरा या स्फुटित होता रहता है। इस पौधे में गर्मियों से पहले ही नई पत्तियां निकलने लगती हैं। छोटे आकार व पीले या सफ़ेद क्रीम रंग की नई पत्तियां निकलने के बाद इसके फूल मार्च से अप्रैल में आते हैं। इसके बाद फल पुष्प-फलियां बड़ी जल्दी बनती हैं। परंतु इसके बाद इनका आकार पूरा होने में लगभग दो महीने का समय लगता है।

खेजड़ी से जुड़ी धार्मिक/पौराणिक बातें

वैदिक काल के दौरान, खेजड़ी की लकड़ी को हवन करने के लिए बहुत ही पवित्र व उपयोगी माना जाता था। हिन्दू ग्रंथों- रामायण एवं गीता में इसका महत्वपूर्ण वर्णन किया गया है। भगवान श्री राम ने भी लंका विजय से पहले खेजड़ी की पूजा की थी और कहा था कि खेजड़ी पूजनीय पेड़ है। यह शक्ति की देवी का घोतक माना गया है। दशहरे के दिन खेजड़ी के पेड़ की पूजा की जाती है और रावण दहन के बाद इसकी पत्तियों को सूत कर घर लाने की परंपरा आज भी है। पांडवों ने भी इस पेड़ की पूजा की थी और अज्ञातवास के दौरान इस पेड़ के नीचे अपने हथियार छिपाए थे। मुख्यतः विवाह के अवसर पर महिलाओं के द्वारा खेजड़ी की विस्तृत पूजा की जाती है। इसके अतिरिक्त, शादियों के दौरान वृक्ष की शाखाएं भी अच्छे भाग्य आकर्षण के रूप में उपयोग की जाती हैं।

बिशनोई समाज और खेजड़ी के बीच संबंध

बिशनोई समाज (इस समाज के लोग पर्यावरण सरंक्षण के लिए प्रसिद्ध हैं) के लोगों द्वारा खेजड़ी की पूजा सबसे अधिक की जाती है। इसके पीछे एतिहासिक कहानी है-1485 ईस्वी में खेजड़ी के पौधे को इस समाज के नेता गुरु जमभेश्वर या जमभोजी के नाम के साथ जोड़ा गया। वे लोग इसकी उपयोगिता समझ गए और उन्होंने भविष्य में किसी भी हरे पेड़ को नहीं काटने की शपथ ली। बिशनोई समाज के लोग पूरी निष्ठा के साथ सभी हरे पेड़ों को बचाते हैं। इसमें भी विशेष तौर से खेजड़ी को बचाते हैं। वर्ष 1730 ईस्वी की इसके साथ अमृता देवी की एक प्रसिद्ध एवं आश्चर्यजनक कहानी जुड़ी है। 1787 में जोधपुर के महाराजा ने एक राजमहल बनाने की योजना बनाई और जरुरत के अनुसार जलाने वाली लकड़ी से चूना बनाया। उन्होंने बड़ी संख्या में सेना को भेज कर खेजड़ी के पेड़ कटवाए। अमृता देवी (बिशनोई माताजी), जो पूरी ईमानदारी से जमभोजी को पढ़ती थी, उन्होंने पूरी सेना का सामना किया और कहा कि किसी भी पेड़ को काटने से पहले उन्हें काटना होगा। हथियार रहित होकर भी उन्होंने पेड़ों को बचाया, यह कह कर अपने पास के खेजड़ी के पेड़ को पकड़ लिया। सेना के जवानों पर दबाव बनाया कि कुल्हाड़ी से उनकी गर्दन काटें। पेड़ों के काटने से होने वाले नुकसान के प्रति प्रोत्साहित कर लोगों को जागृत किया। गांव वाले आए और सब ने महाराज की सेना का मुक़ाबला किया। इस हत्याकांड के अंत में, 363 बिशनोइयों ने अपनी जान देकर हरे पेड़ों को बचाने का समझोता किया। स्थिति के मद्देनजर एवं गांववासियों के समर्पण के सामने झुककर, उसी दिन महाराजा ने हरे पेड़ों को बचाने के लिए कानून का एक प्रस्ताव पास कर दिया। इसलिए ये सब लोग 280 साल पहले 363 बिशनोइयों से शुरु हुए "चिपको

आंदोलन" की प्रशंसा है। 1730 ईस्वी में अमृता देवी के अनुसार खेजड़ी के पेड़ को नहीं काटने का बिशनोई समाज ने फैसला कर लिया। बिशनोई समाज के लोगों ने इस पेड़ को पवित्र बना दिया। 5 जून 1998 को विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर भारत सरकार के डाक विभाग द्वारा खेजड़ी के पेड़ पर डाक टिकट जारी किया था। हालांकि, 2015 में, सेंट्रल एरिड जोन रिसर्च इंस्टीट्यूट ने एक रिपोर्ट छापी जिसमें कहा गया कि राजस्थान के 12 सूखा जिलों में प्रति हेक्टेयर खेजड़ी के पेड़ों की संख्या 35 प्रतिशत से कम हो गई है।

खेजड़ी एवं इसके उत्पादन का मूल्यांकन आकलन

शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्र के वातावरण को बनाए रखने में खेजड़ी के पेड़ की प्रमुख भूमिका रहती है। यह शुष्क क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक विकास का प्रतीक माना गया है। खेजड़ी शुष्क क्षेत्र के कृषि-वानिकी के लिए बहुत अनुकूल होता है, क्योंकि इसमें सतही पत्तियां होती हैं। यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण के कारण मृदा की गुणवता में सुधार करके पौधों को विभिन्न पोषकतत्व उपलब्ध कराता है। इसकी पत्तियां मृदा के कार्बनिक पदार्थ में भी सुधार करती हैं। मुसला जड़ पद्धति होने के कारण इसकी जड़ 100 फीट से अधिक गहरी चली जाती है। इस कारण इसकी अन्य फसलों के साथ कोई प्रतिद्वंद्विता नहीं होती। खेजड़ी के पेड़ रेतीले मरुस्थल में रेतीले टीले बनाने में सहायता करते हैं। यह आंधी आने से भी रोकता है। रेतीले तूफान से भी फसल को बचाने में सहायता करता है। इसलिए शुष्क क्षेत्र में यह पौधा किसानों के खेतों में घर बनाने व लोगों, पशुओं एवं जंगली जातियों को गर्मियों से बचाने के लिए छप्पर बनाने के काम आता है।

खेजड़ी की लकड़ीः इसकी लकड़ी इमारती और चारकोल वाली जलाने वाली लकड़ी होती है। इसकी टहनियों में कांटे होने के कारण बकरियों से बचाने हेतु बाढ़ बनाने के काम आती है।

खेजड़ी गोंद: अप्रैल से जून के महीने में खेजड़ी की छाल से एक भूरे रंग का चमकदार गोंद बनता है। यह सूखा, कड़ा, थोड़ा कसैले-तीखे स्वाद का होता है। बलवर्धक, कोढ़, दस्त, ब्रोंकाइटिस, अस्थमा, बवासीर और नसों की मालिस की दवाई आदि में उपयोग किया जाता है।

खेजड़ी की छाल: इस का उपयोग सर्दी जुकाम एवं अस्थमा के उपचार के लिए किया जाता है। इसकी छाल सांप व बिच्छू के काटने के उपचार में भी काम आती है। खेजड़ी की छाल को डायरिया, दस्त, बवासीर, पेट के कीड़े व त्वचा के रोगों के उपचार के लिए भी उपयोग में लाते हैं।

खेजड़ी के फूल: पौंडेड, चीनी के साथ मिलाकर और गर्भावस्था में सुरक्षा के लिए भी उपयोगी माने जाते हैं।

खेजड़ी की पत्ती: भारत में इसका उपयोग पशुओं के चारे के रूप में भी किया जाता है। इसका उपयोग नसों में होने वाली खराबी के लिए भी किया जाता है। इसकी पत्तियों का धुआँ आखों के लिए अच्छा होता है।

खेजड़ी की फली: इसके हरे फल या फलियों को राजस्थान में 'संगर' व 'संगरियां' कहा जाता है। पंजाब में इन्हें कसैलेपन के रुप में जाना जाता है। सूखी हरी फलियों का स्वादिष्ट सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है परंतु यह बहुत महंगी होती है, लगभग (1500-1800 रुपए प्रति किलो)। राजस्थानी परिवार कच्ची व हरी फलियों का उपयोग दवाई एवं आचार बनाने में करते हैं। राजस्थान में सूखी फलियों को खो-खा के नाम से खाते हैं। सूखी फलियों को पशुओं के चारे के रूप में भी उपयोग करते हैं। पश्चिमी राजस्थान के मरुस्थल में चिंकारा व काले हिरण इसकी फली एवं हरी पत्तियां खाकर ही जीवित रहते हैं।

खेजड़ी से मृदा स्वास्थ्य में सुधार

शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्र के पारिस्तिथिकी तंत्र में बहुत सीमित संसाधन होने के कारण खेजड़ी पेड़ 'मरु भूमि की उर्वरता' को बनाए रखता है। खेजड़ी विभिन्न तरीकों से मृदा की उर्वरता बढ़ाता है जैसे कि: 1. जैविक नाइट्रोजन से मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाना, 2. यह मृदा में अन्य पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाता है, 3. इस पेड़ की जड़ें मृदा में गहरी होने के कारण बहुत नीचे से पोषक तत्व ग्रहण करती हैं, 4. इसकी जड़ों के द्वारा सतही नमी बरकरार रहती है, मृदा की नमी व इसकी छाया के कारण सूक्ष्म तत्वों की क्रियाशीलता में भी सुधार होता है एवं 5. पशुओं एवं पक्षियों द्वारा इसकी पत्तियां

खाने के दौरान उनके मल-मूत्र से मृदा में पोषक तत्वों की बढ़ोतरी होती है।

आज हम खेजड़ी के इस वैज्ञानिक, आर्थिक पक्ष को भूल चुके हैं। प्रति हेक्टेयर खेजड़ी के पेड़ों की संख्या में गिरावट का मूल कारण इसकी अत्यधिक शाखाओं का काटा जाना है, जो खेतों के मालिक इसके फल, फली और पत्तियों, के द्वारा वाणिज्य लाभ के लिए हर साल करते हैं। शाखाओं की अंधाधुंध कटाई से पेड़ों का क्षय तेजी से हो रहा है। अतः इतने महत्वपूर्ण पेड़ का संरक्षण हमारा मूलभूत कर्तव्य है।

प्रकृति, समय और धैर्य ये तीन हर दर्द की दवा हैं।

- अज्ञात

फसलों की सुरक्षा हेतु छिड़काव के प्रभावी यंत्र

राम चरण मथुरिया एवं रोबिन गोगोई

पादप रोग विज्ञान संभाग

भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

आधुनिक एवं वैज्ञानिक युग में अधिक पैदावार लेने के लिए फसल सुरक्षा अति-आवश्यक है। प्राय: कीट, बीमारियों एवं खरपतवारों का सभी फसलों पर प्रकोप होता है। कभी-कभी ये बीमारियां महामारी का रूप धारण कर लेती हैं जिससे पूरी फसल नष्ट भी हो जाती है। इसके अतिरिक्त पौधों की वृद्धि को खरपतवार से भी नुकसान होता है। कीट, बीमारियों एवं खरपतवार की रोकथाम के लिए विभिन्न प्रकार की रासायनिक दवाइयों का प्रयोग किया जाता है। कम समय में कम लागत तथा रासायनिक घोल का उचित प्रयोग करने के लिए दवाइयां एवं पौध संरक्षण यंत्र की आवश्यकता होती है, जिन्हें स्प्रेयर तथा कस्टर के नाम से जानते हैं। स्प्रे करने वाले पौधा संरक्षक यंत्रों को तीन भागों में बांटते हैं:

1. हाई वाल्यूम स्प्रे (400 ली./हे. से ज्यादा)
2. लो वाल्यूम स्प्रे (5 से 400 ली./हे.)
3. अल्ट्रा लो वाल्यूम स्प्रे (5 ली./हे. से कम)

सामान्यः फसलों में कीड़े-मकोड़े एवं बीमारी नियंत्रित करने के लिए स्प्रेयर से सूक्ष्म ड्रॉप स्प्रे की आवश्यकता पड़ती है तथा खरपतवार नियंत्रित करने के लिए बड़े ड्रॉप स्प्रे की आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न प्रकार के स्प्रेयर की कार्यक्षमता भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। इनकी उपयोगिता अनेक कारकों जैसे- स्प्रे करने का प्रकार, खेत का आकार, फसल का प्रकार इत्यादि पर निर्भर करती है। यहां पर कुछ प्रमुख स्प्रेयरों का वर्णन किया जा रहा हैं, जो दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं मध्य प्रदेश राज्यों के लिए उपयोगी हैं।

नैपसैक स्प्रेयर

यह पीतल, प्लास्टिक या सफेद चादर का बना होता है। यंत्र चालक अपने बाएं हाथ से लीवर को चलाता है, तथा दाएं हाथ से फुआर की जाती है। दवा छिड़कते समय हवा का दबाव बनाने के लिए लगातार पंप लीवर को चलाना पड़ता है। इसकी टंकी के अंदर या बाहर एक पंप लगा होता है जो पंप घोल को टंकी से खींचता है और निकास नली में लगे स्प्रेलैस के नोजल द्वारा बाहर फेंकता है। इसे पीठ पर लाद कर चलाया जाता है। 7.5 किलोग्राम वाले इस यंत्र की कार्यक्षमता 0.4 हे./दिन है। इसके लिए 90 लीटर पानी की आवश्यकता पड़ती है। यह 10-18 लीटर की टंकी में उपलब्ध हैं और यह 4-5 कि.ग्रा./वर्ग से.मी. दाब उत्पन्न करता है।

उपयोग: अनाज की फसलों, सब्जियों तथा मध्यम प्रक्षेत्र के पेड़ पौधों तथा कतार में लगे पौधों पर दवा छिड़कने के लिए इस यंत्र का प्रयोग किया जाता हैं।

नैपसैक स्प्रेयर (स्रोत : गूगल)

हस्त (हैंड) स्प्रेयर (स्रोत : गूगल)

रॉकिंग स्प्रेयर

यह लकड़ी के स्टैंड पर आधारित लीवर चालित यंत्र है जो अधिक दाब उत्पन्न करने वाला स्प्रेयर होता है। इसकी सक्शन नली के आगे लगभग दो मीटर लंबी छलनी लगी होती है और इसकी निकास नली 8 मी. लंबी होती है। इस स्प्रेयर में कोई टंकी नहीं होती है और दवा छिड़कते समय घोल को टंकी में डाल दिया जाता है। पंप

को हैंडल से चलाने पर प्रेशर चैम्बर में दाब उत्पन्न होता है और घोल निकास नली से लगे स्प्रे लैंस द्वारा बाहर नोजल से छोटे-छोटे कणों के रूप में पौधे पर गिरता है। इस स्प्रेयर के प्रेशर चेम्बर में 14-18 कि.ग्रा./वर्ग से.मी. दाब उत्पन्न कर सकते हैं। इसकी कार्यक्षमता 0.6-0.8 है./दिन है।

रॉकिंग स्प्रेयर (स्रोत : गूगल)

उपयोग : इसका प्रयोग खेतों के अतिरिक्त बागानों में, विशेषकर ऊंचे पेड़ पौधे जैसे नारियल, गन्ना, सुपारी इत्यादि पर दवा छिड़कने में किया जाता है।

फुट (पेडल) स्प्रेयर

इसका पंप लोहे के बने स्टैण्ड में लगा होता है और पंप सिलैंडर को पांव से चला कर दाब उत्पन्न किया जाता है। इस स्प्रेयर का प्रयोग पैर द्वारा करते हैं। इसके भी सक्शन नली में छलनी लगी होती है जिसे घोल की टंकी में डाल दिया जाता है। इसकी कार्य क्षमता 0-8-1-0 हे./दिन है। इसका प्रयोग सरलता से 4-0 मी. लंबे पेड़-पौधे पर कर सकते हैं तथा इसमें हाइजेट स्प्रेगन एवं बम्बुलैस लगाकर 6 मी. लंबे पेड़-पौधे पर छिड़काव किया जा सकता है। इसमें आवश्यकतानुसार एक या दो निकास नली लगायी जा सकती है।

उपयोग : इस स्प्रेयर का प्रयोग बगीचों, फुलवाड़ियों एवं खेतों में दवा छिड़कने में कर सकते हैं।

पॉवर स्प्रेयर

यह यंत्र कम समय में बड़े खेतों में अधिक प्रभावशाली तरीके से दवा का छिड़काव करता है। इस यंत्र से कम खर्चे में तथा उचित दवा को अधिक क्षेत्र में स्प्रे (फुंआर) करके बड़े क्षेत्र में बीमारी को नियंत्रित कर सकते हैं। कार्य प्रणाली के अनुसार इन यंत्रों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है।

1. हाईड्रॉलिक स्प्रेयर

हाईड्रॉलिक टाइप स्प्रेयर इंजन या मोटर से चलता है। इसमें मुख्यत: पिस्टन (1-3) प्रेशर गेज, प्रेशर रेगुलेटर एयर चेम्बर, सक्शन पाइप, स्टेनर, निकास नली, लांस, नोजल इत्यादि भाग होते हैं। इस स्प्रेयर में टैंक का साइज़ 160 लीटर से 2000 लीटर तक हो सकता है तथा 40-50 कि.ग्रा./वर्ग से.मी. दाब उत्पन्न किया जा सकता है। इसमें आवश्यकतानुसार 4-6 निकास नली लगायी जा सकती है, जिसकी 460 मि.मी. लंबाई, 210 मि.मी. चौड़ाई तथा 540 मि.मी. ऊंचाई, 9-11 (कि.ग्रा.) भार और निकास द्वार पर हवा की गति 65-75 (मी./सेकेंड) होती है।

2. सेंट्रीफूज पॉवर स्प्रेयर

इस यंत्र के द्वारा बहुत बारीक़ धुंध (50-1000 क्यू ऍम) उत्पन्न होती है। अतः इसे मिस्ट स्प्रेयर (धुंध स्प्रेयर) भी कहते है। इसके मध्य में लगा हुआ पंखा या मिस्ट ब्लोवर दवा को उच्च दाब से बारीक़ बूंदों को फसल पर छिड़काव करता है। इसके प्रयोग से समय की बचत होती है तथा छिड़काव में खर्च भी कम आता है।

हल्के वजन के स्वचालित बूम स्प्रेयर

इस मशीन में एक हल्के पावर टिलर इकाई और एक छिड़काव इकाई होती है। यह मशीन 5 अश्वशक्ति डीजल इंजन द्वारा संचालित है और हैंडल से ऑपरेटर द्वारा नियंत्रित किया जाता है तथा स्प्रे पंप और दो संकीर्ण वायवीय पहियों को चेन और स्प्रोकेट्स के माध्यम से इंजन से बिजली मिलती है।

उपयोग: गेहूं, सब्जी एवं अन्य फसलों पर रासायनिक के लिए स्वचालित बूम स्प्रेयर का उपयोग किया जाता है।

पावर टिलर चालित बाग स्प्रेयर

पावर टिलर में क्लच पुली और (वी) बेल्ट के माध्यम से ऊर्जा संचालित होती है। टैंक के लिए एक बायपास

लाइन के साथ एक रेग्युलेटर वाल्व भी अतिरिक्त दबाव व निर्वहन दर को नियंत्रित करने के लिए डिलीवरी लाइन में प्रदान की जाती है। बूम स्प्रेयर संलग्नक (50 & 25 मि.मी.) दो एल्यूमीनियम खोखले वर्गों से बने होते हैं जिसकी लंबाई 4 मी. होती है। इसमें 16 नलिका होती हैं जिनके बीच की दूरी 450 मि.मी. होती हैं। 25 और 40 मि.मी. आकार का एक रेसिप्रोकेटिंग पंप एक स्टैंड की सहायता से पावर टिलर पर आरोहित होता है। एक 25 मि.मी. व्यास का अल्कथेने सक्शन नली पावर टिलर के ट्रेलर में रखे टैंक से रासायनिक घोल को पंप के इनलेट तक पहुंचाता है। पंप के आउटलेट से डिलीवरी लाइन दो मार्गीय कॉक की सहायता से दो भागों में विभाजित हो जाती है, जो एल्युमीनियम के प्रत्येक वर्गो में जाता हैं। नलिका के साथ स्प्रे बूम दो आदमियों के द्वारा बेल्ट को शरीर में बांधकर आसानी से रसायन का छिड़काव फसल के पत्ते पर किया जाता है।

उपयोग : पावर टिलर स्प्रेयर बागवानी फसलों जैसे अनार, नारंगी, मीठा नींबू और अंगूर की विभिन्न प्रकार की बीमारियों के ऑपरेशन के छिड़काव के लिए उपयुक्त पावर टिलर है।

ट्रैक्टर द्वारा चालित (आरोहित) बूम स्प्रेयर

हाइड्रोलिक ऊर्जा द्वारा कार्य करने वाले एवं ट्रैक्टर द्वारा चालित इस स्प्रेयर मशीन में एक फाइबर ग्लास या प्लास्टिक का टैंक, स्ट्रेनर के साथ पंप असेम्बली का सक्शन पाइप, प्रेशर गेज, प्रेशर रेग्युलेटर, एयर चेम्बर, डिलिवरी पाइप और नोजल सहित स्प्रे बूम लगे होते हैं। स्प्रेयर ट्रैक्टर के 3 प्वाइंट लिंकेज पर आरोहित होता है। स्प्रेयर के पंप को चलाने के लिए ट्रैक्टर की पी.टी.ओ. शक्ति का उपयोग किया जाता है। स्प्रे बूम मुख्यत: दो प्रकार, ग्राउंड स्प्रे बूम तथा ओवरहेड स्प्रे बूम में वर्गीकृत किया गया है। ओवरहेड स्प्रे बूम क्षेत्र में लगी लंबी फसलों पर छिड़काव के लिए तैयार किया गया है। इस क्षेत्र में पौधा रोपण इस प्रकार से किया जाता है कि बिना रोपित की गई 2-5 मीटर के करीब चौड़ाई की पट्टी ट्रैक्टर चलाने के लिए उपलब्ध होती है। इस प्रकार रोपित की गई पट्टी 18-20 मीटर चौड़ी हो सकती है तथा प्रत्येक पट्टी के बाद एक अ-रोपित पट्टी ट्रैक्टर चलाने के लिए छोड़ी जानी आवश्यक है। ग्राउंड स्प्रे बूम के उपयोग हेतु ट्रैक्टर की ट्रैक चौड़ाई को ध्यान में रखकर फसल को पंक्तियों में रोपित करना आवश्यक है। फसल की आवश्यकतानुसार एवं पंप के निर्मातानुसार इसमें 20 की संख्या तक नोजल का प्रयोग किया जाता है इसलिए इसमें उच्च दाब एवं उच्च निर्वाहन पंप का उपयोग किया जाता है। जिसकी पूर्ण लंबाई 6340 (मि.मी.), चौड़ाई 1290 (मि.मी.), ऊंचाई 1570 (मि.मी.), टैंक क्षमता 400 लीटर, भार 150 - 200 कि.ग्रा., क्षेत्र क्षमता 8 (हे./दिन) (13 नोजल के साथ) तथा ट्रैक्टर की शक्ति 25-35 हार्स पावर की होती है।

ट्रैक्टर द्वारा चालित (आरोहित) बूम स्प्रेयर (स्रोत : गूगल)

उपयोग : कृषि फसलों, कृषि बागवानी एवं उद्यान जैसे फूल, फसलों, अंगूर के बागों और गन्ना, मक्का, कपास, ज्वार, बाजरा आदि में छिड़काव के लिए प्रयोग किया जाता है।

कृषि रसायनिकों के छिड़काव से संबंधित सावधानियां

कवकनाशी, कीटनाशी, खरपतवारनाशी, आधुनिक कृषि विज्ञान की परम आवश्यकता है लेकिन वे जहरीले एवं हानिकारक होते हैं। यद्यपि ये रसायन कृषि सुरक्षा के लिए वरदान सिद्ध हो रहे हैं, उनके असावधानी व अज्ञानतापूर्वक प्रयोग, मनुष्य के शरीर पर कुप्रभाव डालते हैं तथा प्राणघातक भी सिद्ध हो सकते हैं। जैव रसायनों को निर्धारित मात्रा से अधिक या गलत तरीकों से असावधानी से प्रयोग करने पर कई हानिकारक परिणाम हो सकते हैं। जैव रसायन न केवल मनुष्यों बल्कि पशु, पक्षियों के लिए भी अति हानिकारक होते हैं। अतः इन

रसायनों का प्रयोग करते समय सावधानी रखना उतना ही आवश्यक है, जितना की फसल सुरक्षा, अधिक पैदावार एवं अच्छी गुणवता वाली फसल लेकर अधिक लाभ उठाना। अतः रसायनों के छिड़काव के समय अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता होती है साथ ही उचित प्रकार के छिड़काव यंत्रों का प्रयोग भी सुगमता से किया जा सकता है तथा रसायनों की कम मात्रा भी अधिक प्रभावी होती है।

छिड़काव यंत्रों के उपयोग में सावधानियां

छिड़काव करते समय छिड़काव यंत्र के उचित प्रयोग एवं सावधानी के अभाव में मनुष्य के स्वास्थ्य पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। छिड़काव यंत्रों के चयन, रखरखाव तथा सावधानियां अत्यंत आवश्यक हैं। छिड़काव से पहले, छिड़काव के दौरान व छिड़काव के बाद कई प्रकार की सावधानी बरतनी चाहिए :-

छिड़काव की दिशा

फसल पर कृषि रसायनिकों के प्रयोग से पहले हवा की दिशा की जानकारी अति आवश्यक है क्योंकि वायु के विपरीत दिशा में छिड़काव करने पर रसायन छिड़काव करने वाले व्यक्ति के शरीर पर गिरेगा। अतः जिस दिशा से हवा आ रही है उसी छोर से छिड़काव शुरू करना चाहिए।

छिड़काव के समय मौसम संबंधी सावधानियां

मौसम का अनकूल होना फसलों पर रसायनों के पूर्ण प्रभाव के लिए अत्यंत आवश्यक है अन्यथा छिड़का हुआ रसायन व्यर्थ ही चला जाएगा। छिड़काव के समय निम्न प्रकार का मौसम अनुकूल माना जाता है।

- तेज हवा के समय कभी भी छिड़काव नहीं करना चाहिए क्योंकि तेज हवा के कारण रसायन की बारीक़ बूदें उड़ कर दूसरी जगह चली जाती हैं।
- सायंकाल का समय छिड़काव के लिए सर्वोत्तम होता है क्योंकि इस समय वातावरण का तापमान, धूप और हवा की गति कम होती है।
- सर्दियों में सुबह के समय अधिक ओस रहती है ऐसे समय में भी छिड़काव नहीं करना चाहिए इससे रसायन ओस की बूंदों के साथ मिलकर जमीन पर गिर जायेगा।
- किसानों को चाहिए कि वे डिब्बे पर लिखे निर्देशों को ध्यान पूर्वक पढ़े व समझें तथा डिब्बे पर बने परलेलोग्राम (ऊपर से नीचे बने त्रिभुज) से जहर की तीव्रता का पता चलता है। ऊपर के त्रिभुज में जहर की तीव्रता को शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाता है जबकि निचले त्रिभुज में चार रंग भरे होते है जिनमें लाल रंग अत्यधिक, पीला रंग अधिक, नीला रंग मध्यम एवं हरा रंग कम जहरीला होने की सूचना देता है।
- रसायन नाशी के उपयोग से पहले डिब्बे पर लिखी अवधि की जाँच करें व अंतिम तिथि के बाद रसायन का उपयोग कभी न करें।
- निर्देशित मात्रा से अधिक मात्रा में रसायन के उपयोग से फसल को नुकसान पहुंचता है। अतः हमेशा निर्देशित मात्रा का ही उपयोग करें।
- घोल सदैव खुली जगह पर बड़े व साफ बर्तन में बनाएं तथा ध्यान रहे कि शरीर का कोई भी कटा हुआ भाग घोल/रसायन को स्पर्श नहीं करना चाहिए।
- पूरे खेत में छिड़काव समान रूप से करें तथा टंकी में उचित दबाब बनाने के लिए तीन चौथाई भाग तक ही भरें।
- रसायन नाशी का छिड़काव करते समय हाथों पर प्लास्टिक या रबर के दस्ताने, पैरों में बूट, पूरी आस्तीन की शर्ट व पेंट, सर पर टोपी, आखों पर चश्मा, मुंह पर मास्क तथा एप्रेन पहनना चाहिए।
- रसायन नाशी के खाली डिब्बे को खेत में उचित गहराई पर गाड़ देना चाहिए तथा घर पर वापिस कदापि न लाएं।
- छिड़काव पूर्ण होने पर हाथों को साबुन से अच्छी तरह से साफ करना चाहिए ।
- कवकनाशी, कीटनाशी, खरपतवारनाशी रसायनों के उपयोग हेतु अलग-अलग स्प्रेयर का प्रयोग करना चाहिए तथा छिड़काव के बाद खेत में बोर्ड लगा देना चाहिए जिससे पता रहे कि रसायन नाशी का प्रयोग हुआ है।

कृषि पर्यटन (एग्री टूरिज्म) में रोजगार की संभावनाएं

ओ.पी. सिंह[1], रणबीर सिंह[2] एवं रेनू सिंह[3]

कृषि प्रसार संभाग[1], जल प्रौद्योगिकी केंद्र[2] एवं सेस्करा संभाग[3]
भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110012

हमारे देश में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 121 करोड़ थी। जिसमें 31.1 प्रतिशत शहरों में और 68.8 प्रतिशत लोग गांवों में निवास करते थे और उनकी रोजी-रोटी का साधन खेतीबाड़ी था। भारत की कुल जनसंख्या में 83.3 करोड़ यानि लगभग 68.8 प्रतिशत जनसंख्या भारत के लगभग 640.8 गांवों में निवास करती है (2011 की जनगणना)। भारत का कृषि क्षेत्र बहुत व्यापक हैं, जिसमें 10 करोड़ से अधिक किसान परिवार निवास करते हैं। कृषि में ही सबसे अधिक रोजगार उत्पन्न करने की क्षमता है। देश की जीडीपी में लगभग 17 प्रतिशत हिस्सेदारी केवल कृषि से होती है। एक रिपोर्ट के अनुसार, देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली लगभग 65-70 प्रतिशत जनसंख्या आज भी जीविकोपार्जन के लिए कृषि पर सीधे तौर से निर्भर है तथा लगभग 58 प्रतिशत लोगों को इससे रोजगार मिलता है। हालांकि, भारत में कृषि हमेशा मुख्य उद्यम रही है और भविष्य में भी रहेगी। भारत एशिया महाद्वीप का एक ऐसा कृषि प्रधान देश है जिसमें कृषि अधिकतर भारतीय ग्रामीणों की आजीविका का साधन होने के साथ-साथ उद्यमिता और रोजगार के अवसर भी उपलब्ध करा रही है। भारत के गांवों में आज भी कृषि और संबंधित उद्योग ही आजीविका और रोजगार का मुख्य आधार है। इसी के चलते भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़, कृषि क्षेत्र में 'पर्यटन' एक संभावना के रूप में उभरा है। वर्ष 2017 को विकास के लिए सतत् पर्यटन के अंतरराष्ट्रीय वर्ष के रूप में मनाया गया है।

महाराष्ट्र में कृषि पर्यटन

अधिकतर कृषि कार्य मौसमी होते हैं, वास्तव में ग्रामीणों के पास खाली समय का लंबा अंतराल होता है, जिसका वे अपनी ओर से प्रयोग कर सकते हैं। कुछ ग्रामीण युवा अपने को कृषि पर्यटन और अनुषंगी गतिविधियों में संलग्न करके आय के वैकल्पिक स्रोत खोज सकते हैं। एक बार लोगों को यह पता चलने के बाद कि कृषि पर्यटन कैसे उनके जीवन में बदलाव ला सकता है और आय के अतिरिक्त अवसर पैदा कर सकता है, कृषि पर्यटन से ग्रामवासियों के दृष्टिकोण में बदलाव लाया जा सकता है और इस प्रक्रिया में उन्हें पर्यटकों का स्वागत करने के लिए अधिक अनुकूल बनाया जा सकता है। इच्छुक व्यक्तियों और परिवारों की कृषि पर्यटन गतिविधियों में भागीदारी से ग्रामीण भारत की अनेक समस्याएं हल की जा सकती हैं। कृषि पर्यटन की शुरुआत यूरोप के इटली में पहली बार हुई, जहां इसे कृषि पर्यटन का नाम दिया गया। इसकी शुरुआत 1980 में हुई। वर्तमान समय में पूरे विश्व में कृषि पर्यटन लोकप्रिय हो चुका है और किसान समुदाय के लिए अतिरिक्त आय का साधन बन गया है और इससे ग्रामीण क्षेत्रों में खेती तथा पशुपालन आदि से हटकर कुछ करने के अवसर मिलते हैं।

क्या है कृषि पर्यटन ?

पर्यटनों की खेती-किसानी से जुड़ी गतिविधियों की प्राचीन विरासत (हेरिटेज) को मनोरंजक विधियों से प्रस्तुत करना ही कृषि पर्यटन है। जिसका उद्देश्य कृषि उद्योग और फसलें उगाने के लिए किसान कैसे काम करते हैं, इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करना है।

कृषि पर्यटन की अवधारणा

वर्तमान में पर्यटन विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में वद्धि के इंजन के रुप में मान्यता प्राप्त है। कई देशों ने अपनी पर्यटन क्षमता को विकसित करके, अर्थवयस्था क्षमता को बदलकर रख दिया है। पर्यटन में बड़े पैमाने पर रोजगार और कुशल व अकुशल क्षेत्रों के अतिरिक्त आय स्रोत उत्पन्न करने की बड़ी क्षमता है। आज पर्यटन के क्षेत्र में कृषि पर्यटन उभर कर सामने आया है। इससे लोगों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ मिल रहा है। कृषि पर्यटन, पर्यटन और कृषि दोनों से संबंधित एक अभिनव कृषि गतिविधि है, जिसमें किसानों के लिए रोजगार के अवसरों के अतिरिक्त आय के स्रोत बनाने की एक बड़ी क्षमता है। महाराष्ट्र, भारत में प्रमुख कृषि पर्यटक केंद्रों में से एक है जहां कृषि पर्यटन को विकसित करने की बड़ी संभावनाएं है। कृषि पर्यटन, पर्यटन की एक नई शाखा है। एक कृषि पर्यटन खेत आधारित व्यवसाय है जो जनता के लिए खुला है। ये विशेष कृषि पर्यटन में आमतौर पर उत्पादों को देखने, खरीदने, उपहार देने की पेशकश होती है और जनता के लिए खुले होते हैं। कृषि पर्यटन, कृषि या ग्रामीण क्षेत्रों को कृषि कार्यों के उत्पादों के साथ जोड़ती है।

कृषि पर्यटन का स्थान

कृषि पर्यटन हेतु केंद्र का स्थान आसान होना चाहिए और एक अच्छी प्राकृतिक पृष्ठभूमि वाला होना चाहिए। किसानों को ग्रामीण क्षेत्रों में अपने केंद्र का विकास करना चाहिए जो कि आपके खेत में शहरी पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए एक अच्छी प्राकृतिक पृष्ठभूमि है। कृषि पर्यटक, केंद्र के साथ-साथ कुछ ऐतिहासिक और प्राकृतिक पर्यटन स्थलों का आनंद लेना चाहते हैं। इसलिए केंद्र, इन पर्यटन स्थलों के पास विकसित किया जाना चाहिए। यह, पर्यटक एवं किसान दोनों के लिए लाभदायक है। कृषि पर्यटन, टिकाऊ पर्यटन विकास और ग्रामीण क्षेत्रों में बहुगतिविधि की विधि है जिसके माध्यम से आगंतुक को कृषि क्षेत्र, कृषि व्यवसाय, स्थानीय उत्पाद, पारंपरिक भोजन और ग्रामीण लोगों के दैनिक जीवन से अवगत होने का अवसर मिलता है। अच्छी तरह से सांस्कृतिक तत्वों और परंपराओं के रूप में इसके अतिरिक्त यह आगंतुकों को प्रकृति एवं ग्रामीण गतिविधियों के पास लाती है, जिससे वे मनोरंजन आदि में भाग ले सकते हैं।

कृषि पर्यटन केंद्र कौन शुरू कर सकता है

व्यक्तिगत किसान कृषि पर्यटन शुरू कर सकते हैं जिनके पास कम से कम दो हेक्टेयर भूमि, खेत, घर, जल संसाधन हों और पर्यटकों का मनोरंजन करने में रुचि रखते हैं। व्यक्तिगत किसान, कृषि सरकारी संस्थाओं के अतिरिक्त गैर सरकारी संगठनों, कृषि विश्वविद्यालय और कृषि महाविद्यालय अपने पर्यटन केंद्रों को शुरू कर सकते हैं। यहां तक कि ग्रामपंचायती अपने परिचालन क्षेत्रों में ऐसे केंद्रों को ग्रामीणों और किसानों की सहायता से शुरु कर सकते हैं।

भारत में कृषि पर्यटन की आवश्यकता

प्राचीनकाल से ही भारत में लोग शैक्षिक एवं धार्मिक उद्देश्यों से देश भ्रमण के लिए निकलते थे, जिसे देशाटन का नाम दिया जाता था। लेकिन यह अब पर्यटन का रूप ले चुका है। भारतीय प्राचीन शास्त्रों में स्पष्ट रूप से मानव के विकास, सुख और शांति तथा संतुष्टि एवं ज्ञान के लिए पर्यटन को अति आवश्यक माना गया है। हमारे देश के ऋषि-मुनियों ने भी पर्यटन को बहुत महत्व दिया है। वर्तमान में शहरों की तीव्रगति से बढ़ती जनसंख्या एवं वाहनों के कारण शहरी एवं विदेशीय व्यक्ति शहरी नीरसता, थकान, व्यवसायिक दबाव, प्रदूषण, वाहनों की भीड़ से ऊब कर प्रकृति के सौंदर्य को निहारना चाहते हैं। संयोग से कृषि पर्यटन एक उत्कृष्ट विकल्प प्रदान करता है। अनेक शहरी बच्चे यह समझते हैं कि चावल, सब्जियां व दूध आदि उत्पाद भी सॉफ्ट ड्रिंक्स, आइसक्रीम आदि और अन्य व्यक्तिगत प्रयोग की चीजों की तरह फैक्ट्रियों में बनते हैं। कृषि पर्यटन में बुवाई के मौसम से लेकर फसल कटाई तक मौसमवार विभिन्न खेती पद्धतियां, पशुपालन, दूध दोहना, अनाज भंडारण, कृषि उपकरण, प्राकृतिक जीव-जंतुओं और वनस्पति सहित हरे-भरे खेत, जल धाराएं और नदियां, गांवों के तालाब और झीलें, भू-परिदृश्य, समृद्ध लोकगीत, सामाजिक बंधन और संबंध, सामुदायिक रूप से त्योहार मनाना और गांव के सामाजिक/धार्मिक कार्यक्रम ये सब मिल कर कृषि पर्यटन को

रोमांचक बना सकते हैं। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी द्वारा किसानों की आमदनी को स्वतंत्रता के 75 वर्षों बाद वर्ष 2022 तक दोगुना करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसके लिए खेती व उससे जुड़े उद्यमों पर जहां अधिक जोर दिया जा रहा है, वहीं अब कृषि पर्यटन को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। कृषि पर्यटन क्षेत्र के विकास से दोहरा लाभ हो सकता है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार, गरीबी उन्मूलन और सतत् मानव संसाधन विकास को बल मिल सकता है।

भारत में कृषि पर्यटन की शुरुआत

भारत में कृषि पर्यटन की शुरुआत वर्ष 2004 में औपचारिक रूप से हुई थी। महाराष्ट्र के बारामती पर्यटन केंद्र में लोगों का आना-जाना बहुत बढ़ गया था। केंद्र सरकार ने इसे कृषि पर्यटन के तौर पर विकसित किया। महाराष्ट्र के ही चंद्रपुर में कुछ युवाओं ने प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की अपील पर इसी क्षेत्र में स्टार्टअप से इसकी शुरुआत की है। एग्रो टूरिज्म डेवलपमेंट कार्पोरेशन ऑफ इंडिया ने महाराष्ट्र में 2014 तक 218 किसानों और उनके फार्म को इसकी स्वीकृति प्रदान की थी। कृषि पर्यटन को अपनाने वाला दूसरा राज्य है हरियाणा जहां सरकार ने अपने यहां कई स्थानों पर किसानों को कृषि पर्यटन की अनुमति दी है। हरियाणा के प्रतापगढ़ गांव को पूरी तरह से कृषि पर्यटन के लिए अधिकृत जा चुका है। यहां पर्यटकों को रहने, खान-पान आदि की पूरी व्यवस्था के अतिरिक्त हाथ और चूल्हे की आग में सेंकी हुई मोटी रोटी और चटनी खाने को मिल सकती है तथा ग्रामीण

पंजाब में विदेशी पर्यटकों द्वारा हल का प्रचालन

पर्यटन स्थल के तौर पर विकसित फार्म हाउस

रहन-सहन, जीवनशैली, संस्कृति व सामाजिक सरोकार जैसी सुविधा उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त भी पर्यटकों को खेतों की जुताई, बीजों की बुवाई, पेड़ लगाना, फूल और फलों के पेड़ों को अपने सामने देखा जा सकता है। कुम्हार की चाक पर मिट्टी के चिकने बर्तन और सुंदर चीजें आकार लेते भी देखा जा सकता है तथा पर्यटक स्वयं भी बनाकर देख सकते हैं।

कृषि पर्यटन के लिए दिल्ली के नजदीक फरीदाबाद, गुडगांव, रोहतक, हिसार और करनाल आदि में किसानों ने मिलकर खेत खलिहानों और फार्म हाउसों को पर्यटन स्थल के तौर पर विकसित किया है। इन फार्म हाउसों में आपको गांव की जिंदगी को देखने और उसमें सम्मिलित होने का मौका मिल सकता है। यहां आप वातानुकूलित घर जैसेः ठंडे और हवादार, मिट्टी से बने कच्चे घरों में रह सकते हैं। घर से कुछ दूर चाक पर कुम्हार की उंगलियों के इशारे पर आकार लेते मिट्टी के बर्तन देख सकते हैं। चाहें तो पेड़ से तोड़ कर कोई पका फल खा सकते हैं या तो खुद दूध भी दुह सकते हैं। ट्युबवेल की हौज में कूद-कूद कर नहाओ या शोर मचाकर खेत में घूमती मुर्गियों के पीछे दौड़ो। कच्ची पगडंडियों पर साइकिल चलाओ या फिर ऊंट व घोड़ो की सवारी करो। दिनभर थक कर मस्ती करने के बाद अंजली से मटके का जल पीकर थकान दूर करो और चूल्हे के पास बैठ कर गुड़ और छाछ के साथ गरमागरम मक्का की रोटी, उड़द की दाल और सरसों के साग के जायके का आनंद लो। शाम को खाट पर बैठ कर आप गांव के लोकगीत, नृत्य या फिर कठपुतली के खेल का लुत्फ भी उठा सकते हैं। इन फार्म हाउसों में छुट्टी बिताने के लिए फ्रांस, इटली,

जापान, अमेरिका, हांगकांग, न्यूजीलैंड और इंगलैंड आदि देशों से हर साल बड़ी संख्या में सैलानी आते हैं। यहां की सुंदरता को देखकर विदेशी चकित रह जाते हैं कि बिना किसी आधुनिक सुख सुविधा के भी जीवन कितनी सुदंरता से जिया जा सकता है। खेतों में लहलाती फसल, गोबर, मिट्टी से लिपी दीवारें, घास-फूंस की छत और चिड़ियों के शोर के बीच चूल्हे की आंच में फूलती रोटी का मजा उठाने के लिए कृषि पर्यटन को साकार किया है। शहरी जिंदगी से ऊब कर गांवों में सुकून के दो पल बिताने वालों की कृषि पर्यटन की ओर रुचि भी तेजी से बढ़ रही है। पंजाब में अमृतसर से दो घंटे की दूरी पर विकसित एक केंद्र ग्रामीण पर्यटकों को ट्रैक्टर की सवारी से लेकर, हल चलाने और गाय का दूध दुहने तक का अनुभव करने के अवसर मिलते हैं।

हरियाणा में फार्म पर्यटन योजना

हरियाणा के पर्यटन विभाग ने अपने क्षेत्र की भूमि से जल निकालने के साथ-साथ सैलानियों को लुभा कर विदेशी मुद्रा प्राप्त करने की विधि को ढूंढ निकाला है और यह विधि है, कृषि पर्यटन (कृषि पर्यटन)। यहां पर औषधीय पौधों, जैविक खेती, पशु पालन, मधुमक्खी पालन और फूलों की खेती आदि पर जोर दिया गया है। कृषि पर्यटन की परिकल्पना को साकार करने के लिए उन्होंने लोगों को उनका बचपन याद दिलाने की कोशिश की है।

विदेशी सैलानी फार्मों का भ्रमण करते हुए

कृषि पर्यटन के उदाहरणार्थ

कल्की मिस्टिक

यहां आप गाय का दूध दुह सकते हैं। ट्रैक्टर और बैलगाड़ी की सवारी का मजा ले सकते हैं। कठपुतली शो और लोक नृत्य में कलाकारों के साथ थिरक सकते हैं। यहां आप योग और ध्यान की शिक्षा भी ले सकते हैं।

बैलगाड़ी में विदेशी पर्यटक

सुरजीवन

सुरजीवन की सैर के लिए दिल्ली से 20 कि.मी. दूर जयपुर राजमार्ग पर क्लासिक गोल्फ रिसोर्ट के नजदीक जाना होगा।

कृषि पर्यटन के लिए सरकार की पहल

यूनाइटेड नेशनल डेवलपमेंट प्रोजेक्ट के साथ मिलकर भारत सरकार ऐसी कई योजनाएं चला रही है, जिनका उद्देश्य कृषि पर्यटन को बढ़ावा देना है। इस योजना पर

देश के विभिन्न राज्यों में लगभग 150 स्थानों पर काम चल रहा है। इसके अतिरिक्त सरकार ने लगभग 35 स्थानों को इस कार्य के लिए और चुना है। सैलानियों को इस ओर आकर्षित करने के लिए सरकार ने "रूरल ईको हॉलीडे" स्कीम भी शुरू की है।

कृषि पर्यटन के आधारभूत सिद्धांत

कृषि पर्यटकों द्वारा आधारभूत सुनिश्चित सिद्धांतों का पालन किया जाना चाहिएः-

कृषि पर्यटकों के आगंतुकों की पसंद को ध्यान में रखते हुए मुख्य रूप से पशु, पक्षियों, खेतों और प्रकृति आदि को सुन्दर रूप से प्रदर्शन हेतु रख सकते हैं। कृषि पोशाक, त्योहारों और ग्रामीण खेलों से कृषि पर्यटन में जंगल के बीच पर्याप्त रुचि को ध्यान में रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त आगंतुकों के लिए कृषि संचालन हेतु बैलगाड़ी रखना चाहिए। घुड़सवारी, ऊंट की सवारी, भैंसे की सवारी, खाना पकाने और ग्रामीण खेलों से संबंधित गतिविधियों की सुविधाएं रखने से पर्यटक इनमें भाग लेकर आनंद ले सकते हैं। आगंतुकों की पसंद हेतु ग्रामीण शिल्प, ड्रेस सामग्री, कृषि के स्वच्छ ताजे उत्पाद, प्रसंस्कृत पदार्थ, स्मरण हेतु स्मृति चिन्ह आदि को भी रखना चाहिए।

कृषि पर्यटन के संचालन हेतु आवश्यकताएं

- विपणन और उनके व्यापार को बढ़ावा देने हेतु सहायता की आवश्यकता है।
- कृषि पर्यटन के विस्तार हेतु पूंजी की आवश्यकता।
- योग्य कर्मचारियों का होना आवश्यक है।
- बीमा के विषय की जानकारी आवश्यक है।

कृषि पर्यटन का कार्यक्षेत्र

कृषि व्यवसाय और जीवन शैली के बारे में जिज्ञासा, शहरी जनसंख्या की मूलरूप से जड़ों में है। गांव हमेशा से भोजन, पेड़-पौधों, पशुओं, लकड़ी, हस्तशिल्प, भाषा, संस्कृति, परंपरा, कपड़े और जीवन शैली आदि के स्रोत रहे हैं। कृषि पर्यटन भी किसानों, गांवों और कृषि के आसपास घूमता है, और शहरी जनसंख्या की जिज्ञासा को पूरा करने की क्षमता रखता है। कृषि पर्यटन विविधता में समृद्ध ग्रामीण जीवन की पुनः व्याख्या करने के लिए अवसर प्रदान करता है। कृषि पर्यटन द्वारा उन्मुख मनोरंजक गतिविधियों की मांगों को पूरा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कृषि पर्यटन ग्रामीण खेलों, त्योहारों, भोजन, पोशाक और प्रकृति पर्यटकों के लिए मनोरंजन की विविधता प्रदान करता है।

कृषि पर्यटन सूचना

कृषि पर्यटन में यात्रा की जानकारी में स्थानीय सम्मेलन और आगंतुक विवरण सूची सम्मिलित हो ताकि आगंतुक अपनी अग्रिम अवकाश की योजना बना सकें। स्कूल यात्राएं और परिवार के लिए मजेदार, रोमांचक और यादगार भ्रमण प्रदान करने हेतु उत्तेजक मनोरंजन, शिक्षा और पर्यटन को एक साथ मिलाती है। कृषि और पर्यटन एक साथ मिलकर किसानों को अपने कार्यों में विविधता लाने और विस्तारित करने के लिए अनूठे अवसर प्रदान करते हैं।

कृषि पर्यटन में मनोरंजन

कृषि पर्यटन, किसान, गांव और कृषि संयोजन की एक अद्भुत स्थिति पैदा करता है, जो विशेष रुप से शहरी क्षेत्रों के पर्यटकों को असीमित संतुष्टि प्रदान करता है। शहरी बच्चों को यह पता ही नहीं है कि दूध कहां से आता है और न ही चने की झाड़ के बारे में पता है। इसके अतिरिक्त मुर्गी का अंड़ा फैक्ट्री में बनता है या मुर्गी देती है, इसके बारे में भी बच्चों को पता नहीं हैं। फलों के बाग में फलों को विभिन्न रूपों में देखने और हाथ से तोड़ने का रोमांच भी बच्चों के साथ शहरी माता-पिता को भी होता है। पशुओं से दूध निकालने, उससे पनीर व अन्य उत्पाद बनाने की प्रक्रिया से भी पर्यटक आकर्षित होते हैं।

कृषि पर्यटन से लाभ

कृत्रिम विकास के संभावित लाभ किसानों, ग्रामीण समुदायों और पर्यटन संचालकों तक फैले हुए हैं, जैसेः

किसानों को लाभः कृषि पर्यटन किसानों के लिए संभावित विधि है, जैसेः

- कृषि कार्यों का विस्तार।
- नई और अभिनव विधियों से खेत आधारित उत्पादों का उपयोग करना।
- कृषि राजस्व प्रवाह में सुधार।
- नए उपभोक्ता बाजार के लिए विकास।
- स्थानीय कृषि उत्पादों के बारे में जागरूकता बढ़ाना।
- कृषि भूमि के महत्व को बनाए रखना।
- परिवारों के सदस्यों को सीधे अतिरिक्त खेत राजस्व का लेन-देन करना।
- खेत में रहने की स्थिति, काम के क्षेत्र और खेत मनोरंजन के अवसरों में सुधार।
- प्रबंधकीय कौशल और उद्यमशीलता की भावना विकसित करना।
- खेत व्यवसायों के लिए दीर्घकालिक स्थिरता में वृद्धि।

ग्रामीण समुदायों को लाभ

- पर्यटकों से स्थानीय व्यवसायों और सेवाओं के लिए अतिरिक्त राजस्व पैदा करना।
- निवासियों और आगंतुकों के लिए सामुदायिक सुविधाओं को नवीनीकृत अथवा पुनर्जीवित करना।
- पर्यटकों और निवासियों के लिए ग्रामीण परिदृश्य और प्राकृतिक वातावरण की सुरक्षा में वृद्धि।
- स्थानीय परंपराओं, कला और शिल्प को संरक्षित और पुनर्जीवित करने में सहायता करना।
- अंतर-क्षेत्रीय, अंतर-सांस्कृतिक संचार और समझ को बढ़ावा देना।
- जनता के बीच कृषि विषयों और मूल्यों की बढ़ती जागरूकता।
- स्थानीय कृषि उत्पादों और सेवाओं के चालू उपयोग को बढ़ावा देना।
- नौकरी और आय सृजन के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विविधता और मजबूत करने में सहायक।
- अन्य व्यवसायों और छोटे उद्योगों को आकर्षित करने के लिए एक अधिक ऊर्जावान कारोबारी वातावरण प्रदान करना।

पर्यटन संचालकों को लाभ

- आकर्षक ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती पर्यटन प्रवाह।
- आगंतुकों के लिए उपलब्ध पर्यटन उत्पादों और सेवाओं के मिश्रण को विविधता प्रदान करना।
- पारंपरिक रूप से बेमौसम व्यवसाय अवधि के दौरान आय में वृद्धि।
- स्थानीय व्यापारों को और अधिक गैर स्थानीय मुद्रा लाने हेतु।

कृषि पर्यटन से अतिरिक्त आमदनी

कृषि पर्यटन से छोटे किसानों और गांव के लोगों को प्रवेश शुल्क चार्ज करने से आय के अनेक अवसर उपलब्ध हैं, क्योंकि किसान पर्यटकों को भ्रमण के अतिरिक्त खाना एवं आवास भी उपलब्ध कराते हैं।

कृषि पर्यटन, छुट्टी की एक शैली है जो आमतौर पर खेत पर होती है या घरेलू या विदेश में बहुत से लोग अपने भोजन का उत्पादन कैसे करते हैं या किसी विदेशी

कृषि पर्यटन का चिन्ह

जनसंख्या के कारण भोजन पैदा करने में अधिक रुचि रखते हैं। भारत में कृषि पर्यटन खेतों पर ही किया जाता है ताकि किसी व्यक्ति को मक्का, नारियल, गन्ना और अनन्नास जैसे स्थानीय रूप से विकसित खाद्य पदार्थों की कटाई एवं प्रसंस्करण को देखने की अनुमति मिल सके। कृषि पर्यटन व्यापार से अधिक, कृषि भारत की संस्कृति है इसलिए, उपलब्ध कृषि को अतिरिक्त आय पैदा करने वाली गतिविधियों से जोड़ना होगा। इस दिशा में गंभीर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। कृषि पर्यटन को वास्तविक ग्रामीण जीवन का अनुभव करना है, स्थानीय वास्तविक भोजन का स्वाद लेना और विभिन्न खेती कार्यों से परिचित होना है। भारत सरकार एवं राज्य सरकारों के वर्तमान प्रयासों से ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि पर्यटन के साथ-साथ विकास प्रक्रिया को भी गति मिलेगी, साथ ही आय के एक नवीन स्रोत के सृजन से जीवन-स्तर बेहतर बनेगा। इसका एक अन्य लाभ यह होगा कि ग्रामीणों को रोजगार की खोज में शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन नहीं करना पड़ेगा बल्कि वह अपने ही गांव में रहकर जीविकोपार्जन कर सकेंगे।

त्योहार साल की गति के पड़ाव हैं, जहां भिन्न-भिन्न मनोरंजन हैं, भिन्न-भिन्न आनंद हैं, भिन्न-भिन्न क्रीडास्थल हैं

- बरुआ

सफलता की कहानी
इंदल सिंह कुशवाहा

आलेख : नफीस अहमद, प्रतिभा जोशी एवं पी.पी. मौर्य

किसान का नाम - इंदल सिंह कुशवाहा

उम्र - 32 वर्ष

शिक्षा - पांचवी पास

पता - गांव राजपुर ब्लॉक खैर जिला अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)

वैवाहिक स्थिति - विवाहित

परिवार में सदस्यों की संख्या - 5 (पुरुष 4 महिला 1)

भूमि - 3 एकड़ किराए पर

इंदल सिंह कुशवाहा एक कुशल सब्जी उत्पादक किसान है। सन 2014-15 में जब पूसा संस्थान द्वारा इस गांव को आदर्श ग्राम के कार्यक्रम के लिए चयनित किया गया तब इंदल सिंह अपने पिता के साथ खेती के कार्य में सहयोग करते थे। धान, गेहूं, सरसों के साथ-साथ कुछ सब्जियों, जैसे बैंगन, टमाटर की खेती मुख्य रुप से करते थे। पूसा संस्थान के वैज्ञानिकों एवं सहयोगियों के संपर्क में आने के बाद इन्होंने नई उन्नत किस्में एवं तकनीकियों की जानकारी प्राप्त की तथा निर्णय लिया - कि "मैं अपने पिता से अलग होकर स्वतंत्र रूप से सब्जी फसलों की खेती करुंगा।" पहले पिता के साथ रहकर लगभग 2 एकड़ की खेती से धान, गेहूं एवं सरसों से वर्ष में बमुश्किल ₹60,000 से ₹70,000 तक आय होती थी और संयुक्त परिवार के 12 सदस्यों का गुजारा मुश्किल से ही हो पाता था।

सन 2015-16 में इंदल सिंह ने 1 एकड़ खेती किराए (दर प्रतिवर्ष ₹25 हजार रुपए प्रति एकड़) पर लेकर उसमें सब्जियों यथा बैंगन, टमाटर की खेती आरंभ की जिसमें बैंगन की पूसा उत्तम एवं महीको कंपनी की नवकरण किस्में लगाई, तथा टमाटर की किस्म पूसा रोहिणी लगाई। इससे कुल आय लगभग 1.50 लाख रुपए एवं शुद्ध आय लगभग ₹ 90 हजार रुपए हुई। इससे उत्साहित होकर सन 2016-17 में इन्होंने 2 एकड़ भूमि किराए पर लेकर सब्जी की खेती की जिससे पूरे वर्ष में कुल आय ₹ 3.50 लाख रुपए प्राप्त हुए तथा शुद्ध आय ₹ 2.10 लाख रुपए प्राप्त हुए। इसके पश्चात वर्ष 2017-18 में 3 एकड़ जमीन किराए (दर ₹30 हजार रु. प्रति एकड़ प्रति वर्ष) पर लिया तथा इसमें बैंगन की किस्म पूसा उत्तम, एवं महिको कंपनी की किस्म नवकरण 2 एकड़ में लगाई, जिससे कुल उत्पादन 525 क्विंटल प्राप्त हुआ, तथा कुल आय 7,87,500 रुपए प्राप्त हुई तथा शुद्ध आय 5,37,500 रुपए प्राप्त हुआ। शेष एक एकड़ जमीन में टमाटर, पत्ता-गोभी तथा मिर्च की खेती की जिससे शुद्ध आय लगभग 1.85 लाख रुपए हुई। इस प्रकार 3 एकड़ जमीन में उन्होंने सब्जी की खेती से एक वर्ष में शुद्ध आय 7,22,500 रुपए प्राप्त की।

कृषि में विविधीकरण एवं उच्च मूल्य वाली फसलों को अपनाने के परिणामस्वरूप इंदल सिंह कुशवाह के जीवन स्तर में पहले की अपेक्षा काफी सुधार हुआ और अब ये किसान अपने बच्चों को अच्छे प्राइवेट स्कूलों में पढ़ा रहा है। साथ ही इंदल सिंह कुशवाहा की सफलता को देखकर गांव के दूसरे किसान भी धान, गेहूं, सरसों की खेती को छोड़कर सब्जी की खेती करने के लिए अग्रसर हो रहे हैं जिससे कि उनको खेती से अधिक आमदनी प्राप्त हो रही है।

सफलता की कहानी
लौकी की किस्म पूसा संतुष्टि से संतुष्ट हुआ समय सिंह

निशी शर्मा, नंदकिशोर एवं किशन सिंह

नाम - समय सिंह

पता - गांव खजूरका, ब्लॉक-पृथला, जिला-पलवल (हरियाणा)

उम्र - 42 साल

शिक्षा - दसवीं

वैवाहित स्थिति - विवाहित

परिवार के सदस्यों की संख्या - 4

श्री समय सिंह, पुत्र श्री केहर सिंह ग्राम खजूरका, जिला पलवल, हरियाणा का निवासी है। इनके पास अपनी कुल जमीन 3 एकड़ है तथा 15 एकड़ जमीन पट्टे पर लेकर परंपरागत ढंग से खेती करते हैं। सन 2014-15 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने इनके गांव को समेकित कृषि द्वारा मॉडल गांव के रुप में विकसित करने के लिए अंगीकृत किया। गांव में कृषि से संबंधित विभिन्न तकनीकों के प्रयोग को बढ़ावा देने के साथ विभिन्न विषयों पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। मिट्टी की जांच, फसल सुरक्षा, कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी, तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखने के उपाय के बारे में जानकारी दी गई। संस्थान के वैज्ञानिकों ने राज्य सरकार के अधिकारियों एवं किसानों के साथ साझा बैठकें कीं जिसके फलस्वरूप जिले के कृषि अधिकारियों के सहयोग से इन्होंने अपने खेत पर ड्रिप सिंचाई तथा फव्वारा सिस्टम लगाया तथा मचान पर बेल वाली फसलों की खेती शुरू की। उपरोक्त सुविधाओं को लगाने हेतु हमें कृषि विभाग से अनुदान भी मिला।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के तकनीकी सहयोग से इन्होंने फरवरी से आधा एकड़ क्षेत्रफल पर खीरे की खेती शुरू की जिसकी कुल लागत रुपए 15 हजार रुपए आई। इस फसल से मुझे 55 हजार रुपए का शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ। इस फसल के साथ मिश्रित खेती के रुप में अप्रैल में घीया किस्म पूसा संतुष्टि लगाई और इसकी बेलों को चढ़ाने के लिए मचान की व्यवस्था की। घीया की खेती तथा मचान की लागत पर लगभग 25 हजार रुपए खर्च हुए और इस फसल से मुझे ₹ 1.50 लाख का शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ। इस प्रकार इन्होंने फरवरी से सितंबर 2018 तक (7 माह में) मात्र आधे एकड़ भूमि से 2.05 लाख रुपए का शुद्ध लाभ प्राप्त कर लिया। इसके बाद उसी भूमि में इन्होंने गाजर की प्राइवेट कंपनी की प्रजाति अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में लगा दी, जिससे अच्छी फसल होने की उम्मीद है। इनकी सफलता को देखकर गांव के अन्य किसान भी उन्नत तकनीकी अपनाकर खेती करना चाह रहे हैं। उम्मीद है कि इससे प्रेरणा लेकर गांवों के अन्य किसान भी बेहतर मुनाफा कमाएंगे।

बाधाएं व्यक्ति की परीक्षा होती हैं। उनसे उत्साह बढ़ना चाहिए, मंद नहीं पड़ना चाहिए।

- यशपाल

In search of talent
ASRB
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
(उत्तरी दिल्ली)
प्रमाण पत्र
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा वर्ष 2017-18 के दौरान प्रकाशित उत्कृष्ट गृह पत्रिका
'पूसा सुरभि' को प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किया जाता है।
दिनांक: 22 जून, 2018
स्थान: नई दिल्ली
अध्यक्ष, नराकास (उत्तरी दिल्ली)
एवं कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल
सदस्य-सचिव
नराकास (उत्तरी दिल्ली)

गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार
वर्ष 2016-17
ICAR
प्रथम पुरस्कार
"पूसा सुरभि" पत्रिका
भाकृअनुप - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
पूसा, नई दिल्ली
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि भवन, नई दिल्ली

राजभाषा खंड...

एक कदम स्वास्थ्य की ओर-संतुलित आहार एवं योगाभ्यास

जन्नत, सुरेश कुमार, वेदा कृष्णन, शैली प्रवीण

जैव रसायन संभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार स्वास्थ्य शब्द का अर्थ न केवल बीमारियों का न होना ही नहीं बल्कि शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक, आध्यात्मिक और सामाजिक दृष्टि से सही होने की स्थिति है !

शारीरिक स्वास्थ्य : शारीरिक स्वास्थ्य शरीर की स्थिति को दर्शाता है ! जब शरीर के सभी आंतरिक व बाहरी अंग, ऊतक ,कोशिकाएं संपूर्ण एवं सही रूप से कार्य करें, इसमें शरीर की संरचना ,विकास कार्यप्रणाली एवं शरीर का रख-रखाव भी सम्मिलित है !

मानसिक स्वास्थ्य - मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ हमारे भावनात्मक , मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक व्यवहार से है, हमारे विचार कैसे हैं, हम दूसरों से कैसा बर्ताव करते हैं, मन का संतुलन आदि इसके अंतगर्त आता है !

शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए दो मुख्य तत्व हैं :-

संतुलित आहार एवं शारीरिक अभ्यास

संतुलित आहार (बैलेंस्ड डाइट) से तात्पर्य है, एक ऐसा आहार जो आपके शरीर को सभी जरूरी पौष्टिक तत्व जैसे कि प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, और वसा प्रदान करता है. इनमे विटामिन और खनिज जैसे तत्व भी सम्मिलित है ! संतुलित पोषण प्राप्त करने के लिए नियमित रूप से तजा फल, सब्जिया मेवे, अनाज व दालों का सेवन करना चाहिए

पोषक तत्व	प्रकार एवं प्रतिदिन आवश्यकता	प्रमुख स्रोत
कार्बोहाइड्रेट	ऊर्जा प्रदान करना, 330gm	साबुत अनाज, दूध, दही, फल, मक्का, आलू आदि
वसा	ऊर्जा प्रदान करना, 75gm	सूखे मेवे, मछली, मक्खन, घी
प्रोटीन	शरीर का निर्माण, 100gm	अनाज, दालें, दूध, दही, मांस, मछली,
विटामिन एवं खनिज	सुरक्षात्मक भोजन, 300mg, 5-10gm	हरी पत्तेदार सब्जियां, फल, अंडे, दूध व दूध से बने पदार्थ
पानी	2-4 लीटर	

स्वयं करें अपने स्वास्थ्य की जांच

क्या आप स्वस्थ हैं	क्या आप अस्वस्थ हैं
- सुखद एवं गहरी नींद	- अच्छी गहरी नींद न आना
- सुबह उठ कर उत्साही एवं शक्तिशाली महसूस करना	- नियमित एवं अर्ध ठोस मल का आना

-नियमित समय पर भूख का लगना	-सुबह उठाने पर थकान महसूस करना
-दिनभर सक्रियता से कार्य करना	-अनियमित, अत्यंत ठोस या तरलीय मल का आना
-पेट का छाती के स्तर से अंदर रहना	-नियमित भूख न लगना
- मधुरता से बात करना	-दिन भर थकान महसूस करना
-चेहरे पर मुस्कान, साफ आंखे एवं सुविचार	-पेट का छाती के स्तर से बहार आना -चिड़चिड़ापन रहना, एवं कार्य में एकाग्रता न रहना -तैलीय, चटपटे भोजन की इच्छा एवं कहने के बाद भरीपन लगना -शारीरिक दुर्गन्ध

योग

योग शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के यूज शब्द से हुई है जिसका अर्थ है जोड़ना अर्थात आत्मा को परमात्मा से जोड़ना, योग भारतीय ज्ञान की पांच हजार वर्ष पुरानी शैली, महर्षि पंतजलि को योग के पिता के रूप में माना जाता है, महर्षि पतंजलि द्वारा रचित पंतजलि योग दर्शन पूरी तरह योग के विभिन्न सूत्रों के लिए समर्पित है। कुछ लोग योग को केवल शारीरिक व्यायाम को ही समझते हैं और शरीर को तोड़ते, मरोड़ते, खींचते हैं और श्वसन के जटिल तरीके अपनाते हैं परंतु वास्तव में मनुष्य के मन आत्मा व शरीर का एकाग्रता से मिलन योग है योग पिछले कुछ दशकों से विभिन्न बीमारियों के उपचार के लिए अनुसंधान का विषय भी रहा है योग को किसी भी विकार, रोग आदि के उपचार के लिए औषधियों का पूरक भी माना जा सकता है

योग के मुख्य 3 तत्व हैं, जो किसी भी विकार के उपचार के लिए लाभदायक हैं

आसान : शरीर को विभिन्न अवस्थाओं में स्थापित करना

प्राणायाम : अपने श्वसन की गति को नियंत्रित करना

ध्यान : भौतिक या मानसिक बिंदु पर ध्यान केंद्रित करना

योगाभ्यास के चिकित्सीय परिणाम

किसी भी विकार में नियमित योगाभ्यास से मनुष्य अपने शरीर पर ध्यान केंद्रित करने में समर्थ होता है एवं शरीर का संतुलन अनुकंपी तंत्रिका तंत्र से परानुकंपी तंत्रिका तंत्र की ओर जाता है परिणामस्वरूप शवसन की गति धीमी पड़ जाती है एवं शांतिदायक भावना का आभास होता है। रक्तचाप (ब्लैड प्रैशर), कोलेस्ट्रॉल का स्तर भी कम हो जाता है। शरीर के महत्वपूर्ण अंगों व आंतों की ओर रक्त का प्रवाह होता है, इसके साथ ही शारीरिक स्तर पर योग से हड्डियों एवं जोड़ों के आस-पास मांसपेशिया हल्की व लचीली हो जाती है एवं रक्त का प्रवाह बढ़ने से जोड़ों का दर्द भी कम हो जाता है, नियमित अभ्यास से जमा हुई चर्बी को दूर कर वजन भी कम किया जा सकता है।

मानसिक स्तर पर योग तनाव उत्पन्न करने वाले उद्दीपन को मस्तिष्क में जाने से रोक देता है। जिससे मनुष्य के आत्मविश्वास में बढ़ोतरी होती है। चिड़चिड़ापन दूर होता है व जीवन में नए अवसरों की खोज करता है।

नियमित योगाभ्यास करने से मनुष्य के रक्त में सिरोटोनिन नमक हार्मोन की मात्रा बढ़ जाती यह हार्मोन मोनोअमाइन ऑक्साइड एंजाइम को कम कर देता है। यह एंजाइम आगे उदासीनता के भाव के लिए जिम्मेदार उद्दीपन देने वाले न्यूरो ट्रांसमीटर को नष्ट कर देता है। जिससे उदासीनता कम हो जाती है व घृणा, बदले की भावना, गुस्सा, भय आदि भावनाएं दूर हो जाती हैं।

जीवन शैली से जुड़े कुछ सामान्य विकार/ रोग व उनसे जुड़े उपचार

वर्तमान जीवन शैली में कुछ गलत हो रहा है, क्योंकि पहले समय में बीमारियों को वृद्ध अवस्था से जोड़ा जाता था परंतु अब इस सत्य नहीं, आज कोई भी बीमारी किसी भी आयु वर्ग में देखी जा सकती है, वर्तमान जीवन शैली में कुछ करक जैसे की जंक फ़ूड, शारीरिक गतिविधियों में कमी, कम में तनाव, धूम्रपान, एल्कोहॉल का सेवन

आदि युवा एवं बच्चे दोनों को प्रभावित करते हैं, इन्हीं कारणों की वजह से शरीर में उत्पन्न कुछ विकार, भयानक बीमारी का रुप धारण कर लेती हैं जैसे कि हृदय रोग, मधुमेय, मोटापा, फेफड़ों के रोग आदि एवं परिणाम हैं जीवन भर दवाइयों का से सेवन या असमय मृत्यु वर्तमान में यह बीमारियां विश्वभर में चिंता का विषय बन गयी हैं विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 2005 में कुल हुई मृत्यु का 61% इन बीमारियों के कारण था एवं 2030 तक यह आकड़े 70% तक बढ़ने का अनुमान है परंतु कुछ सरल एव सामान्य नियम अपना कर इन बीमारियों से बचा जा सकता है जैसे:-

- शरीर में जमा विषैले पदार्थो को बाहर करना (डिटॉक्सीफिकेशन)
- प्राकृतिक एवं सामान्य भोजन
- जीवन शैली में सुधार
- मानसिक तनाव को दूर करें
- शारीरिक गतिविधि

भारत में वर्ष 1990 से 2016 तक बीमारियों के कारण हुई मृत्यु दर

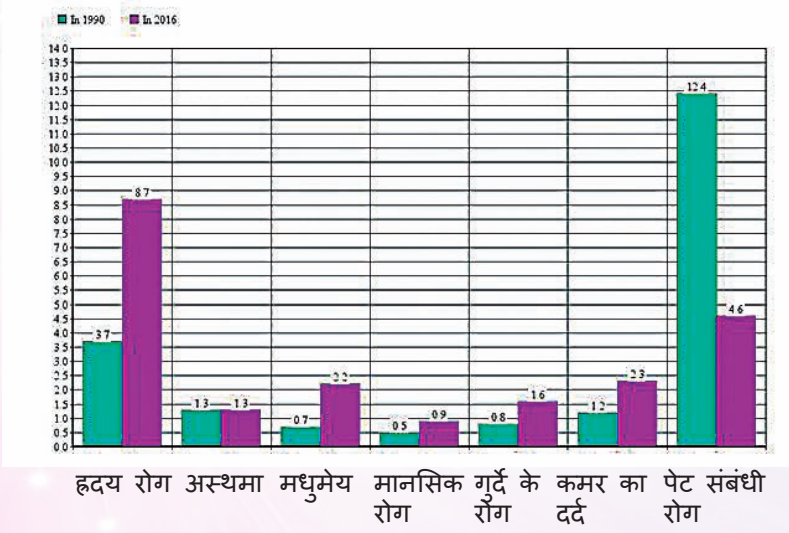

शारीरिक व्यायाम/योगाभ्यास

रोग / विकार	लक्षण/कारण	सामान्य उपचार	योगाभ्यास
गैस, एसिडिटी, कब्ज	पेट में जलन, चक्कर आना, खट्टी डकार, उलटी एवं चक्कर आना, नियमित मल न आना, बहुत ठोस मल का आना, कम मात्रा में मल आना, शरीर को भारीपन सा लगना, जीभ का सफ़ेद रहना	1. चबा-चबा कर खाना खाएं 2. नियमित नारियल पानी का सेवन करें 3. आंवला पाउडर व हल्दी पाउडर शहद के साथ सेवन करें 4. छाछ का सेवन करें 5. चोकरयुक्त आटे की रोटी खाएं 6. खाने के बाद मूत्र त्याग करें 7. खाने के बाद वज्रासन में बैठें एवं इलायची का सेवन करें	पश्चिमोतानासन, सुप्त पवन मुक्तासन, हलासन, वज्रासन हस्तोतानासन, कटिचक्रासन, कमर के बल लेट कर साइकलिंग करें

		8. सप्ताह में एक दिन का उपवास करे 9-10 किशमिश रात को पानी में भिगोकर सुबह सेवन करें 9. रात को त्रिफला पाउडर का सेवन करें 10. जूस को नजरअंदाज कर ताजा फल एवं सब्जियों का सेवन करें	
आँखों की कमजोरी	असंतुलित आहार, खाने के तुरंत बाद सोना, देर रात तक जागते रहना, सुबह लेट उठना, विटामिन A की कमी, अत्यधिक टी.वी., मोबाइल फोन का प्रयोग	फल एवं सब्जियों का सेवन, अंकुरित दालों का सेवन, दूध, दही, खुजूर, किशमिश का सेवन, अंजीर रात को पानी में भिगोकर सुबह सेवन करें, गाजर व आंवले का रस, 5 बादाम की गिरी 5 मिनट तक चबाकर खाएं, सुबह उठकर मुँह में पानी भरकर आँखों में ठंडे पानी से 20-20 बार छींटे मारे, सरसों के तेल से तलवों की मसाज करें, ब्रश करते समय जीभ भी साफ़ करें, सोने से पहले आँखों की मसाज करें	त्राटक करें (दोनों हाथे को अपनी बाजुओं में कंधो के स्तर तक सीधा करें, बिना गर्दन हिलाएं आँखों से बारी बारी अंगूठों की और देखें), भस्त्रिका प्राणायाम करें, आँखों को किसी एक बिंदु पर 5 मिनट एकाग्रित करें तत्पश्चात दोनों हाथों की हथेलियों को आपस में रगड़ें, जब ऊष्मा उत्पन्न हो जाए तो हथेलियों को आँखों पर रखकर आँखों को आराम दें
कमर दर्द	गलत ढंग से बैठना, लेटना, या चलना, ऊंची एड़ी की चप्पल पहनना, मोटापा, आराम व व्यायाम की कमी, बहुत कोमल बिस्तर पर सोना, अधिक भर उठाना	तला, चटपटा, तैलीय, चीनीयुक्त भोजन, चाय व काफी का सेवन न करें, कैल्शियम, विटामिन C, विटामिन D युक्त भोजन करें। 2-4 लीटर पानी पिये कठोर बिस्तर पर आराम करें व कमर की मसाज करें, सदैव कमर सीधी कर के बैठें	
मोटापा	यह कोई बीमारी नहीं परंतु अन्य बीमारियों को न्योता है जैसे मधुमेय, उच्च रक्त चाप, निम्न रक्तचाप, हृदय रोग, गठिया बाय, थाइरॉइड आदि	धीरे- धीरे ऐसे भोजन का सेवन कम कर दें जो मोटापे का कारण है, सलाद का अधिक सेवन करें, चीनी या नमकयुक्त भोजन का सेवन कम करदें, सेंधा नमक वा गुड़ का प्रयोग करें, चोकरयुक्त आते की रोटी का सेवन करें, खूब चबा-चबा कर खाना खाएं, खाने के 45 मिनट तक पानी न पिएं, सुबह की सैर करें एवं लंबी गहरी सांस लें,	सूर्य नमस्कार, (रोजाना 10 बार करें), गर्मियों में चंद्र नमस्कार करे (10 बार), पश्चिमोत्तानासन, सुप्त पवनमुक्तासन, भुजंगासन, कटी चक्रासन, वज्रासन आदि

भोजन से संबंधित कुछ तथ्य एवं विकार :

1. भोजन करने से पूर्व हाथों को साबुन से धोलें एवं मोबाइल फोन, टी.वी., कम्प्यूटर आदि बंद कर एकाग्रता से भोजन करें।
2. खाने से पहले एक ग्लास पानी पिएं।
3. जितनी भूख हो उससे थोड़ा कम खाएं।
4. खाने के 45 मिनट तक पानी ना पिएं।

नियम -1: चाय काफी से दिन की शुरुआत न करें, सुबह उठकर क्षमतानुसार पानी पिएं, उसके 10-15 मिनट पश्चात सुविधानुसार किसी भी मौसमी फल का सेवन करें या रात को पानी में भिगोये हुए बादाम व किशमिश का सेवन करें।

नियम -2: कम खाएं परंतु हर दो घंटे बाद खाएं।

तीन मुख्य भोजन तो सभी करते हैं नाश्ता, दोपहर का भोजन, रात का भोजन, कोशिश करें कि इसके मध्यम समय में भी कुछ खालें व इन 3 मुख्य भोजन की मात्रा कम करदें, ऐसा करने से शरीर की पाचन क्रिया सक्रिय रहेगी एवं लगातार पोषक तत्व रक्त में बने रहेंगे।

नियम -3: शारीरिक गतिविधि अधिक -भोजन की मात्रा अधिक

शारीरिक गतिविधि निम्न - भोजन की मात्रा निम्न चतुराई से अपने शरीर की पहचान करें, यदि शारीरिक गतिविधि ज्यादा है तो ज्यादा ऊर्जा की आवश्यकता है, ऐसे में ज्यादा भोजन की मात्रालें, यदि शारीरिक गतिविधि कम हैं तो कम ऊर्जा की आवश्यकता है, ऐसे में भोजन की मात्रा कम रखें।

नियम -4: रात का भोजन सोने से दो- तीन घंटे पहले खाले जिससे की सोने के समय तक भोजन आसानी से पच जाये एवं सुखद नींद व शरीर भोजन से प्राप्त पोषक तत्वों को मरम्मत आदि में प्रयोग कर सके।

अप्रबन्धित भोजन शैली

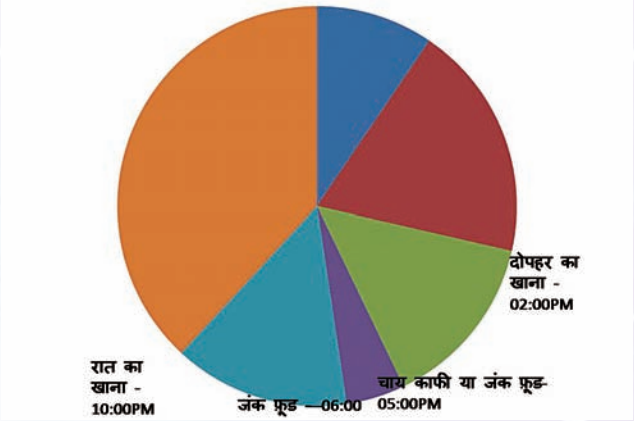

मध्यम भोजन- नारियल पानी+मलाई, लस्सी, छाछ + जीरा, भुना चना, दही, दूध, खीरा, अंकुरित दालें, ऑमलेट, पोहा, उपमा, इडली, सैंडविच, ब्रेड+मक्खन आदि तीन मुख्य भोजन के मध्यम में लिया जा सकता है

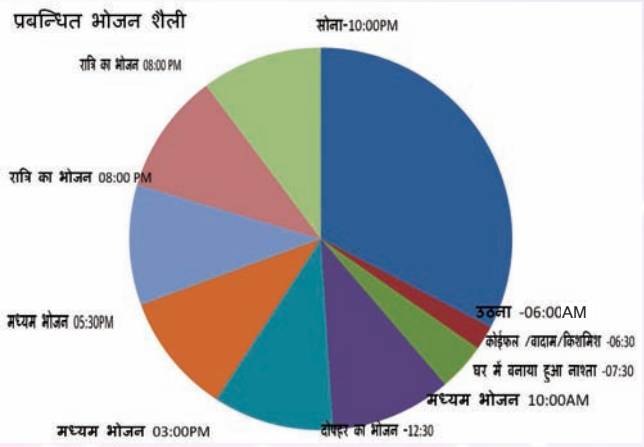

जो पुरुषार्थ नहीं करते उन्हें धन, मित्र, ऐश्वर्य, सुख, स्वास्थ्य, शांति और संतोष प्राप्त नहीं होते।

- वेदव्यास

सप्ताह के दिनों के नामकरण एवं निश्चित क्रम का आधार

राम कुमार शर्मा

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

समय को मापने के लिए विभिन्न इकाइयों का प्रयोग किया जाता है। इन इकाइयों में दिवस एवं सप्ताह की अपनी-अपनी भूमिका है। सात दिनों की अवधि के माप को सप्ताह कहते हैं। प्रत्येक सप्ताह में सात दिन, जिन्हें रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार, शनिवार के नाम से जानते हैं एक निश्चित क्रमानुसार आते हैं। प्रत्येक वार का नाम उस वार के अधिपति ग्रह के नाम पर रखा गया है। रविवार का अधिपति ग्रह सूर्य, सोमवार का अधिपति ग्रह चंद्र, मंगलवार का अधिपति ग्रह मंगल, बुधवार का अधिपति ग्रह बुध, बृहस्पतिवार का अधिपति ग्रह गुरु या बृहस्पति, शुक्रवार का अधिपति ग्रह शुक्र एवं शनिवार का अधिपति ग्रह शनि है।

हमारे ऋषि मुनियों ने ठोस वैज्ञानिक आधार पर इन दिवसों के अधिपति ग्रह एवं निश्चित क्रम निर्धारित किए हैं। भारतीय ज्योतिष में सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक की अवधि को अहोरात्र या अहोरात्रि या एक दिन कहा जाता है। अहोरात्र शब्द से ही होरा शब्द लिया गया है। एक अहोरात्र की अवधि को समान रूप से 24 भागों में बांटा गया है। जिन्हें हम होरा कहते है। दूसरे शब्दों में एक होरा की अवधि एक घंटे के समान होती है। होरा की गणना से ही वारों की गणना प्रारंभ हुई। वारों का नाम उसी दिन की प्रथम होरा अर्थात सूर्योदय से एक घंटे के समय के स्वामी ग्रह के नाम पर रखा गया है।

सौर मंडल का केंद्रीय तारा सूर्य है इसके प्रकाश के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सृष्टि के आरंभ के दिन चैत्र मास की प्रतिपदा को प्रातः समस्त ग्रह मेष राशि के प्रारंभिक भाग अश्वनी नक्षत्र में थे। उसी दिन को आधार बनाकर भारतीय ज्योतिष-विदों ने सौर मंडल का केंद्र होने के कारण सूर्य को प्रथम होरा का स्वामी माना। अतः प्रथम दिन का नाम सूर्य या रवि होरा के नाम पर रविवार रखा गया। होरा का निर्माण ग्रहों के आधार पर होता है। मुख्यतः सात ग्रह हैं। आकाश के ग्रहों की स्थिति उपर से नीचे शनि, गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र तथा चंद्रमा है चूंकि एक अहोरात्र में 24 होरा होती है। अतः प्रथम होरा से लगातार 25वीं होरा अगले दिन की पहली होरा होगी यदि सूर्य से 25वीं होरा की गणना करें (घड़ी की उल्टी दिशा में) तो उसका स्वामी चंद्रमा होगा। इस कारण से अगले दिन का नाम सोमवार रखा गया। अतः अब चंद्रमा से 25वीं होरा की गणना करें तो 25वीं होरा का स्वामी मंगल ग्रह है इस कारण सोमवार से अगले दिन का नाम मंगल रखा गया। इसी प्रकार गणना करने से बुधवार, बृहस्तिवार, शुक्रवार, शनिवार, रविवार आदि आएगें। यह नामकरण सर्वत्र प्रचलित है। इसलिए यह वार एक निश्चित क्रम में आते हैं तथा इनका क्रम नहीं बदलता।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2017-18

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान अपनी स्थापना के बाद से ही देश के कृषि अनुसंधानों में अग्रणी रहा है। देश को खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने वाली हरित क्रान्ति का जनक भी यही संस्थान है। नित नये अनुसंधानों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास का जनक यह संस्थान प्रतिदिन प्रगति के नए आयाम छू रहा है। कृषि क्षेत्र के साथ-साथ राजभाषा के प्रचार-प्रसार हेतु किये गए प्रयासों की दृष्टि से भी संस्थान निरंतर प्रगतिशील है। उपलब्धियों की दृष्टि से वर्ष 2017-18 संस्थान के लिए गौरवपूर्ण रहा। संस्थान को राष्ट्रीय स्तर के दो पुरस्कार, राजर्षि टंडन पुरस्कार तथा गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसी प्रकार नराकास उत्तरी दिल्ली की तरफ से भी संस्थान को हिंदी के प्रगामी प्रयोग के लिए प्रथम तथा संस्थान की राजभाषा पत्रिका को उत्कृष्ट प्रकाशन के लिए पुरस्कार से नवाजा गया। संस्थान में राजभाषा की प्रगति हेतु किये जा रहे इन्हीं प्रयास व उपलब्धियों का वर्णन निम्नवत है-

- संस्थान का प्रकाशन कार्य सुचारु रूप से निरंतर प्रगति पर है। संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट हिंदी में भी प्रकाशित की जा रही है। संस्थान द्वारा पूसा सुरभि (वार्षिक), पूसा समाचार (तिमाही), प्रसार दूत (द्विमासिक) तथा सामयिकी (मासिक) जैसे नियमित प्रकाशनों के अतिरिक्त अनेक तदर्थ प्रकाशन, पैम्फेलेट तथा प्रसार बुलेटिन जारी किए जाते हैं।
- हिंदी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) की अध्यक्षता में हिंदी प्रकाशन समिति गठित है जो प्रकाशन इकाई द्वारा हिंदी में तकनीकी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए विषयों का चयन और इन्हें तैयार करने के लिए वैज्ञानिकों की पहचान करने तथा वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गई पाण्डुलिपियों में शामिल किए जाने वाले पहलुओं पर सुझाव देने के अतिरिक्त उनका पुनरीक्षण भी करती है।
- संस्थान में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की स्थिति की निगरानी (मॉनीटरिंग) के लिए राजभाषा निरीक्षण समिति गठित है इस निरीक्षण समिति द्वारा संस्थाान के संभागों/अनुभागों/इकाई का निरीक्षण किया गया तथा संबंधित संभाग/अनुभाग/इकाई को निरीक्षण रिपोर्टें भेजी गईं। इसके अतिरिक्त कुछ संभागों के औचक निरीक्षण भी किये गए। इन निरीक्षणों से संबंधित संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों पर हिंदी की वास्तविक प्रगति में वांछित गति प्राप्त हुई।
- संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन को वांछित गति प्रदान करने और अधिकारियों/कर्मचारियों में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरूकता का सृजन करने के लिए हिंदी चेतना मास के दौरान कुल दस प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिनमें प्रमुख थीं : वाद-विवाद, निबंध लेखन, कावय-पाठ, टिप्पण एवं मसौदा लेखन, कम्प्यूटर पर हिंदी टंकण, आशु-भाषण, प्रश्न-मंच, अनुवाद, श्रुतलेख तथा कुशल सहायी कर्मचारियों और दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए सामान्य ज्ञान-प्रतियोगिता भी आयोजित की गई। उक्त प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।
- संस्थान के सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों/वैज्ञानिकों के लिए विभिन्न विषयों पर वर्षभर में चार कार्यशालाएं आयोजित की गईं जिनसे अनेक अधिकारी/कर्मचारी लाभान्वित हुए।
- प्रत्येक वर्ष की भांति संस्थान के मेला ग्राउंड में 'कृषि उन्नति मेला' आयोजित किया गया। जिसका उद्घाटन भारत के माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के कर कमलों द्वारा हुआ।

इस अवसर पर मुख्य पंडाल के सभी चित्रों के शीर्षक, ग्राफ, हिस्टोग्राम आदि हिंदी में प्रदर्शित किए गए। मल्टी मीडिया के माध्यम से कृषि संबंधी जानकारी आकर्षक ढंग से प्रस्तुत की गई तथा किसानों, छात्रों व अन्य आगंतुकों को कृषि साहित्य हिंदी में उपलब्ध कराया गया।

- संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। जिसके तहत यहां एम.एससी. और पीएच.डी. की उपाधियां प्रदान की जाती हैं। संस्थान के सभी पीएच.डी. छात्रों को अपनी थीसिस का सारांश हिंदी में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। साथ ही संस्थान द्वारा आयोजित की जाने वाली पीएच. डी. प्रवेश परीक्षा में अभ्यर्थियों को द्विभाषी माध्यम उपलब्ध कराया जा रहा है। इसी प्रकार संस्थान द्वारा बड़ी संख्या में किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं व उद्यमियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इन सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभागियों को पाठ्य सामग्री भी हिंदी में उपलब्ध कराई जाती है तथा प्रशिक्षण का माध्यम भी हिंदी ही होता है।
- संस्थान में हिंदी में पुस्तक लेखन को बढ़ावा देने के लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक लेखन के लिए 'डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार' द्विवार्षिक प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार योजना में 10,000/- रुपए नकद प्रदान किए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में वैज्ञानिक लेख लिखने पर एक पुरस्कार योजना चल रही है जिसमें 7000/-, 5000/- तथा 3000/- रुपये नकद पुरस्कार स्वरूप दिए जाते हैं। इसी क्रम में हिंदी में व्याख्यान देने को बढ़ावा देने के लिए इस संस्थान के प्रवक्ताओं द्वारा हिंदी में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक/तकनीकी व्याख्यान देने के लिए पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के नाम से एक नकद पुरस्कार योजना चलाई जा रही है। इस योजना में प्रत्येक वर्ष इसके पुरस्कार विजेता को 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही हिंदी में प्रशासनिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा विभाग की वार्षिक प्रोत्साहन नकद पुरस्कार योजना के तहत कुल दस कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए जाने का प्रावधान है जिसमें 5000/-रु. के दो प्रथम, 3000/-रु. के तीन द्वितीय तथा 2000/-रु. के पांच तृतीय पुरस्कार दिए जाते हैं।
- संस्थान के वैज्ञानिकों एवं तकनीकी वर्ग को कंप्यूटर पर हिंदी में अधिकाधिक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एक पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है जिसमें संस्थान के वैज्ञानिक एवं तकनीकी वर्ग निर्धारित विषय पर हिंदी में पावर प्वाइंट पर प्रस्तुतीकरण देते हैं। इस प्रतियोगिता में 10,000/- रु., 7000/- रु., 5000/- रु. व 3,000/- रु. के पांच नकद पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। इस पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता का पिछले चार वर्षों से लगातार आयोजन किया जा रहा है।
- संस्थान द्वारा किए गए अनुसंधान कार्यों को, लोकप्रिय लेखों के रूप में राजभाषा हिंदी के माध्यम से किसानों/जन-सामान्य तक पहुंचाने के उद्देश्य से 'पूसा सुरभि' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। उक्त पत्रिका की मांग देश के किसानों/जन समुदाय के बीच बेहद बढ़ी है इसका उदाहरण समय-समय पर किसानों से मिलने वाली प्रतिपुष्टि (फीडबैक) और उनके द्वारा पत्रिका की मांग किया जाना है। इस पूसा सुरभि पत्रिका को उत्कृष्ट कृषि पत्रिका के लिए भा.कृ.अ.प. द्वारा अनेक बार गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार मिल चुका है। साथ ही नराकास (उत्तरी दिल्ली) द्वारा भी इसको पुरस्कृत किया गया।
- संस्थान की वेबसाइट पर सभी संभागों से संबंधित तकनीकी शब्दावली उपलब्ध करा दी गई है।
- संस्थान में हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए एक समिति बनाई गई है जो हिंदी पुस्तकालय के लिए पुस्तकें खरीदने की सिफारिश करती है। पुस्तकालय में प्रत्येक वर्ष राजभाषा विभाग द्वारा

निर्धारित लक्ष्य के अनुसार पुस्तकें खरीदने का प्रयास किया जा रहा है। संस्थान के हिंदी पुस्तकालय में उपलब्ध सभी प्रकाशनों की सूची संस्थान की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई गई है।

- राजभाषा विभाग, भारत सरकार के आदेशानुसार आशुलिपिकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को क्रमश: हिंदी आशुलिपि व हिंदी टंकण का प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है। इसी क्रम में राजभाषा विभाग द्वारा चलाये जा रहे हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण में संस्थान के आशुलिपिकों को हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण के लिए नामित किया जाता है। इसी अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए संस्थान स्तर पर भी हिंदी टंकण प्रशिक्षण केंद्र स्थापित है जिसमें संस्थान में नव-नियुक्त कनिष्ठ लिपिकों, सहायकों तथा अन्य जो भी हिंदी टंकण सीखना चाहते हैं, को हिंदी टंकण का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अतिरिक्त संस्थान के प्रशिक्षण प्राप्त कर्मचारियों के लिए समय-समय पर पुनश्चर्या प्रशिक्षण कार्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है।
- संस्थान के जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में प्रवीणता प्राप्त है उन्हें निदेशक महोदय ने राजभाषा नियम 8(4) के तहत अपना शत-प्रतिशत प्रशासनिक काम हिंदी में करने के लिए व्यक्तिश: आदेश जारी किए हैं। इसके अतिरिक्त राजभाषा विभाग के लक्ष्य के अनुसार संभागों/अनुभागों को अपना शत-प्रतिशत सरकारी काम हिंदी में करने के लिए विनिर्दिष्ट किया गया है। इसके परिणामस्वरूप रिपोर्टाधीन वर्ष में संस्थान में राजभाषा के प्रयोग में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।
- संस्थान को प्राप्त होने वाले सभी हिंदी पत्रों के उत्तर अनिवार्यत: हिंदी में दिए जा रहे हैं, 'क' और 'ख' क्षेत्रों में स्थित सरकारी कार्यालयों के साथ अब लगभग 93 प्रतिशत से अधिक पत्र-व्यवहार हिंदी में किया जा रहा है। इन दोनों क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से प्राप्त अधिकांश अंग्रेजी पत्रों के उत्तर भी हिंदी में दिए जा रहे हैं। साथ ही मूल पत्राचार अधिकाधिक हिंदी में करने को बढ़ावा देने के लिए संस्थान के सभी संभागों/अनुभागों व केंद्रों के बीच हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता चलाई जा रही है जिसमें वर्षभर सबसे अधिक पत्राचार हिंदी में करने वाले संभाग/केंद्र को पुरस्कार स्वरूप शील्ड प्रदान की जाती है।
- संस्थान में फाइलों पर हिंदी में टिप्पणियां लिखने में भी बहुत प्रगति हुई है, सेवा-पुस्तिकाओं व सेवा संबंधी अन्य अभिलेखों में अब लगभग सभी प्रविष्टियां हिंदी में की जा रही हैं और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन किया जा रहा है। संस्थान में हिंदी को दैनिक प्रशासन कार्यों में बढ़ावा देने के उद्देश्य से फाइल कवर पर ही हिंदी-अंग्रेजी की प्रासंगिक टिप्पणियां प्रकाशित की गई हैं।
- संस्थान के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के हिंदी शब्द ज्ञान को बढ़ाने के उद्देश्य से निदेशक कार्यालय व एनेक्सी भवन के प्रवेश द्वारों पर डिजिटल बोर्ड स्थापित किए गए हैं। जिसमें प्रतिदिन हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ व एक सुविचार के साथ प्रदर्शित होता है। इसके अतिरिक्त संस्थान के सभी संभागों/केंद्रों/इकाइयों के प्रवेश द्वारों पर लगे सूचना पट्टों पर 'आज का शब्द' शीर्षक के अंतर्गत भी हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ के साथ लिखा जाता है, ताकि आते-जाते कर्मचारियों की नज़र इन पट्टों पर पड़े और उनके शब्द ज्ञान में वृद्धि हो सके।
- राजभाषा विभाग के आदेशानुसार संस्थान के सभी कम्प्यूटरों में हिंदी में यूनिकोड में काम करने की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।
- संस्थान के सभी संभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में राजभाषा कार्यान्वयन उप-समिति गठित है जिनकी नियमित रुप से बैठकें आयोजित की जा रही हैं।
- संस्थान, राजभाषा विभाग द्वारा गठित की गई नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) का भी सदस्य है जिसकी वर्तमान में

अध्यक्षता कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल को सौंपी गई है। उक्त समिति की बैठकों में नगर में स्थित केंद्रीय सरकार के सदस्य कार्यालयों/ उपक्रमों आदि में राजभाषा हिंदी में निष्पादित कामकाज/गतिविधियों की समीक्षा की जाती है। राजभाषा विभाग के आदेशानुसार इस समिति की बैठकों में संस्थान से निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) द्वारा सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है।

- संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में हिंदी की प्रगति को वांछित गति प्रदान करने, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णयों को क्रियान्वित करने तथा संभाग एवं हिंदी अनुभाग के बीच संपर्क-सूत्र के रूप में कार्य करने के उद्देश्य से प्रत्येक संभाग/केंद्र में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं। इसके तहत सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना भी आरंभ की गई है जिसके अंतर्गत 5000/-रु. का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है।
- उपर्युक्त सभी कार्य संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की देखरेख में किए जाते हैं जो प्रत्येक तीन माह में बैठक आयोजित करके राजभाषा कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा करती है और हिंदी के उत्तरोतर प्रगति के लिए निर्णय लेती है। इन बैठकों में प्रत्येक संभाग/ इकाई द्वारा हिंदी की प्रगति के संबंध में किए गए अभिनव प्रयोग की रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

****

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

संस्थान में राजभाषा हिंदी की गतिविधियां

राजभाषा सम्मेलन

संस्थान में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, (उत्तरी दिल्ली) के सहयोग से दिनांक 12 अप्रैल, 2017 को 'सरकारी कार्यों में राजभाषा हिंदी का प्रभावी प्रयोग' विषय पर एक पूर्ण कार्य दिवसीय राजभाषा सम्मलेन सह कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें नराकास (उत्तरी दिल्ली) के विभिन्न कार्यालयों के 225 प्रतिभागी शामिल हुए। सम्मलेन के मुख्य अतिथि के तौर पर माननीय संसद सदस्य व संसदीय राजभाषा समिति के उपाध्यक्ष, मूर्धन्य हिंदी विद्वान डॉ. सत्यनारायण जटिया थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता संस्थान के कार्यवाहक निदेशक डॉ. एस.एस. संधू द्वारा की गई। संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष व संयुक्त निदेशक अनुसंधान डॉ. के.वि. प्रभु ने स्वागत भाषण प्रस्तुत किया। सचिव, नराकास श्री पी.आर. राव उपनिदेशक (राजभाषा) द्वारा सम्मेलन की रुप रेखा प्रस्तुत की गई इस समारोह में विशिष्ट अतिथि के तौर पर राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय से संयुक्त निदेशक डॉ. बिपिन बिहारी भी उपस्थित थे। सम्मलेन में कुल चार सत्र (दो भोजनावकाश के पूर्व व दो उसके पश्चात) रखे गए थे। जिनमें अतिथि वक्ताओं ने राजभाषा हिंदी से संबंधित

दीप प्रजवलित करते मुख्य अतिथि माननीय डॉ. सत्यनाराण जटिया जी

नराकास (उ. दि.) के अध्यक्ष डॉ. गुरवचन सिंह मुख्य अतिथि का स्मृति चिन्ह भेंट करते हुए

मुख्य अतिथि डॉ. सत्यनाराण जटिया जी संबोधन करते हुए

विभिन्न विषयों पर अपने वक्तव्य दिए, जिन्हें प्रतिभागियों द्वारा सराहा गया। अंतिम सत्र के रूप में संस्थान के पी.जी. स्कूल के छात्रों द्वारा एक नाटक प्रस्तुत किया गया जिसमें राजभाषा के नीति नियमों को नाटक के माध्यम से बड़े ही रुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया जिसे सभी ने बहुत पसंद किया गया।

हिंदी चेतना मास

संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन के प्रति नवीन चेतना और जागृति उत्पन करने तथा अधिकारियों/ कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से संस्थान मुख्यालय में गतवर्ष सितंबर

मास को हिंदी चेतना मास के रूप में मनाया गया। हिंदी चेतना मास के दौरान अनेक विविधरंगी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जैसे काव्य-पाठ, श्रुतलेख, वाद-विवाद, टिप्पण व मसौदा लेखन, निबंध लेखन, अनुवाद प्रतियोगिता, आशु-भाषण, कंप्यूटर पर शब्द प्रसंस्करण, प्रश्न-मंच एवं कुशल सहायी वर्ग के लिए सामान्य-ज्ञान। इस वर्ष आयोजित की गई वाद-विवाद प्रतियोगिता का विषय था- "अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर लगाम से लोकतंत्र की भावना आहत होती है"- पक्ष-विपक्ष, श्रुतलेख प्रतियोगिता के अंतर्गत प्रतियोगियों की शुद्ध एवं मानक वर्तनी की परीक्षा ली गई वहीं एक अन्य- लोकप्रिय प्रतियोगिता प्रश्न-मंच में विविधरंगी प्रश्न पूछे गए जिनमें भारतीय संस्कृति, सामान्य ज्ञान, अद्यतन संचेतना, खेलकूद, विज्ञापन एवं मनोरंजन से संबंधित प्रश्न शामिल थे। साथ ही कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से एक सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें विविधरंगी बहु-विकल्पी प्रश्ने पूछे गए। उक्त सभी प्रतियोगिताओं में संस्थान मुख्यालय स्थित निदेशक कार्यालय एवं विभिन्न संभागों/इकाइयों के सभी वर्गो के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

संस्थान मुख्यालय के साथ-साथ संस्थान के विभिन्न संभागों तथा क्षेत्रीय केंद्रों में भी के प्रति हिंदी में जागरूकता का सृजन करने और हिंदीमय परिवेश बनाने के उद्देश्य से अपने स्तर पर अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

इसी क्रम में--

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र

केंद्र प्रभारी डॉ. जे.पी.एस. डबास, की अध्यक्षता में दिनांक 31.08.2017 को केंद्र की राजभाषा कार्यान्वयन उप समिति ने हिंदी लेखन (श्रुतलेख) प्रतियोगिता, निबंध प्रतियोगिता, वाद विवाद प्रतियोगिता जिसका विषय आरक्षण आवश्यक हैं (पक्ष-विपक्ष), सामान्य ज्ञान पर आधारित प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता एवं कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए अपना परिचय हिंदी में बोलने की प्रतियोगिता का आयोजन किया। उक्त प्रतियोगिताओं में केंद्र एवं एटिक के सभी अधिकारियों व कर्मचारियों ने पूर्ण सहयोग के साथ-साथ प्रतियोगिताओं में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। उपर्युक्त प्रतियोगिताओं में डॉ. अम्बरीष शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, आनुवंशिकी संभाग, डॉ. रेनू सिंह, प्रधान

वैज्ञानिक, सेस्करा एवं श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) हिंदी अनुभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली को निर्णायक बनाया गया। उपर्युक्त प्रतियोगिताओं के विजेता प्रतिभागियों को डॉ. जे.पी. शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार), भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के कर कमलों से पुरुस्कारों का वितरण किया गया। संयुक्त निदेशक (प्रसार) द्वारा कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र में आयोजित उक्त हिंदी प्रतियोगिताओं के सफल आयोजन पर अपनी ख़ुशी जाहिर की तथा सभी विजयी प्रतिभागियों को उनकी जीत पर हार्दिक बधाई दी।

कृषि प्रसार संभाग

संभागाध्यक्ष डॉ. प्रेमलता सिंह की अध्यक्षता में दिनांक 19 अगस्त, 2017 को राजभाषा हिंदी के उन्नयन से संबंधित जैसे - सुलेखन प्रतियोगिता, कविता बोलना/पढ़ना, ''किसानों की आय दोगुनी कैसे की जाए एवं समाधान'' विषय पर भाषण, प्रश्नोतरी प्रतियोगिता एवं अपना परिचय हिंदी में बोलना (केवल कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए) प्रतियोगिताओं का आयोजन किया

गया। उक्त प्रतियोगिताओं को सफल बनाने के लिए संभाग सभी अधिकारियों/कर्मचारियों/विद्यार्थियों/अनुसंधानकर्ताओं ने पूर्ण सहयोग के साथ बढ़-चढ़ कर भाग लिया। प्रतियोगिताओं को पारदर्शक बनाने के लिए एक निर्णायक मंडल का गठन किया गया। जिसमें डॉ. ए.के. मिश्र, प्रधान वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, अध्यक्ष, डॉ. रवीन्द्र पडारिया, प्राध्यापक, कृषि प्रसार संभाग एवं श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, सदस्य नामित किए गए।

अंत में सभी विजयी प्रतिभागियों को अपराह्न में मुख्य अतिथि डॉ. के.वि. प्रभु, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के कर कमलों से पुरस्कारों का वितरण किया गया। संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) द्वारा कृषि प्रसार संभाग में आयोजित उक्त हिंदी प्रतियोगिताओं के सफल आयोजन पर अपनी खुशी जाहिर करते हुए सभी विजयी प्रतिभागियों को उनकी जीत पर हार्दिक बधाई दी।

पादप रोग विज्ञान संभाग

संभागाध्यक्ष डॉ. रश्मि अग्रवाल की अध्यक्षता में सरकारी कार्य राजभाषा हिंदी में करने तथा हिंदी के कुशल एवं प्रभावी प्रयोग की क्षमता बढ़ाने हेतु संभागीय राजभाषा कार्यान्वयन उप समिति द्वारा दिनांक 30/10/2017 को हिंदी दिवस आयोजित किया गया जिसमें तीन प्रतियोगिताएं (अनुवाद, आशुभाषण एवं प्रश्न मंच) आयोजित की गई। जिनमें अनुवाद एवं आशुभाषण प्रतियोगिताओं में संभागीय वैज्ञानिकों, तकनीकी कर्मचारियों, अधिकारियों, प्रशासनिक कर्मचारियों, अधिकारियों एवं कुशल सहायी कर्मचारियों ने

भाग लिया तथा प्रश्न मंच प्रतियोगिता (सामान्य ज्ञान) केवल सहायी कर्मचारियों के लिए ही आयोजित की गई। कार्यक्रम के प्रारंभ में संभागाध्यक्ष द्वारा राजभाषा हिंदी की महत्वता को बताते हुए सभी का स्वागत किया इस सुअवसर पर श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) हिंदी अनुभाग, मुख्य अतिथि तथा डॉ. जसवीर सिंह, पूर्व मुख्य तकनीकी अधिकारी विशिष्ट अतिथि थे। अतिथियों द्वारा प्रतियोगिताओं में विजयी प्रतिभागियों पुरस्कार वितरित किए गए।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने संभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं प्रतिभागियों के उत्साह की प्रशंसा करते हुए, आयोजित प्रतियोगिताओं को और प्रभावशाली बनाने तथा प्रतिभागियों को उत्साहित करने के विषय में अपने विचार रखे। संभाग के राजभाषा नोडल अधिकारी श्री रामचरण मथुरिया द्वारा सभी प्रतिभागियों तथा अतिथियों प्रति धन्यवाद ज्ञापन के साथ प्रतियोगिता समारोह का समापन हुआ।

राष्ट्रीय फाइटोट्रॉन सुविधा केंद्र

राष्ट्रीय फाइटोट्रॉन सुविधा केंद्र में दिनांक 25-09-2017 को वर्ष 2017 के हिंदी चेतना मास के अंतर्गत हिंदी गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें केंद्र के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने अत्यंत उत्साह से भाग लिया। गोष्ठी का शुभारंभ केंद्र प्रभारी डॉ. अक्षय तालुकदार के स्वागत भाषण से हुआ। जिसमें उन्होंने हिंदी चेतना मास एवं राजभाषा के संबंध में अधिकारियों /कर्मचारियों को जानकारी दी। गोष्ठी में कविता पाठ, हास्य-व्यंग्य, वाद-विवाद प्रतियोगिता तथा सामयिक विषयों पर चर्चा की गए। केंद्र प्रभारी डॉ. अक्षय तालुकदार ने कविगुरु रबींद्रनाथ टैगोर की एक कविता का पाठ बड़े ही सुंदर ढंग से किया। केंद्र के वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी डॉ. अरुण कुमार ने एक हास्य-व्यंग्य संस्मरण प्रस्तुत किया।

गोष्ठी में "पर्यावरण पर स्वच्छता का प्रभाव" विषय पर विस्तार से चर्चा की गयी। जिसमें प्रत्येक सदस्य को अपने विचार व्यक्त करने के लिए तीन मिनट का समय दिया गया। सभी सदस्यों ने बड़े ही अच्छे ढंग से दिए गए विषय पर अपने विचार प्रस्तुत किए। साथ ही सभी सदस्यों ने कार्यालय के दैनिक कार्यों में राजभाषा हिंदी के अधिक से अधिक प्रयोग पर सहमति जताई तथा हिंदी में कार्य करने का निर्णय किया। गोष्ठी का समापन केंद्र के नोडल अधिकारी श्री अशोक कुमार शुक्ला के धन्यवाद प्रस्ताव के साथ हुआ।

कृषि रसायन संभाग

कृषि रसायन संभाग में संभागाध्यक्ष डॉ. अनुपमा की अध्यक्षता में दिनांक 29 सितंबर, 2017, को हिंदी दिवस का आयोजन किया गया। जिसमें हिंदी को सरकारी कामकाज की सरल भाषा कैसे बनाएं, विषय पर श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) द्वारा व्याख्यान प्रस्तुत किया गया। साथ ही इस अवसर पर प्रश्नोत्तर, अंग्रेजी टिप्पणी का हिंदी अनुवाद, श्रुतलेख तथा आशुभाषण प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया गया जिनमें संभाग के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया और कार्यक्रम को सफल बनाया। कार्यक्रम का समापन संभाग की राजभाषा नोडल अधिकारी डॉ शशिवाला द्वारा सभी प्रतिभागियों तथा अतिथियों प्रति धन्यवाद ज्ञापन के साथ हुआ।

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला

इस क्षेत्रीय केंद्र पर दिनांक 7/9/2017 से 21/9/2017 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। जिसका शुभारंभ क्षेत्रीय केंद्र के अध्यक्ष डॉ. कल्लोल कुमार प्रामाणिक द्वारा मुख्य अतिथि डॉ. एन. के. पांडे, प्रमुख, सामाजिक विज्ञान संभाग, भा.कृ.अ.प.-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान शिमला की उपस्थिति में टूटी कंडी फार्म पर दिनांक

7/9/2017 को किया गया, उन्होंने अपने संबोधन में राजभाषा के महत्व पर प्रकाश डाला। उसके बाद त्वरित टिप्पणी तथा श्रुतलेख प्रतियोगिता आयोजित की गई। इस अवसर पर इस केंद्र के डॉ. धरमपाल, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. अरुण कुमार शुक्ल, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. मधु पटियाल, वैज्ञानिक एवं श्री संतोष वाटपड़े ने अपने विचार रखे। मुख्य अतिथि ने इस कार्यक्रम को बहुत सराहा तथा अधिक से अधिक कार्य हिंदी में करने हेतु प्रेरित किया ताकि जल्द से जल्द शत-प्रतिशत कार्य हिंदी में करने के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। इस हिंदी पखवाड़े का समापन समारोह क्षेत्रीय केंद्र, शिमला के अध्यक्ष डॉ. कल्लोकल कुमार प्रमाणिक द्वारा मुख्य अतिथि डॉ. संसार अहमद, राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, निगम विहार शिमला की उपस्थिति में ढाण्डा फार्म पर दिनांक 21/09/2017 को आयोजित किया गया। इस मोके पर सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता, काव्य पाठ प्रतियोगिता एवं वाद-विवाद प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया तथा मुख्य अतिथि ने इन प्रतियोगिताओं का मूल्यांकन किया। अध्यक्ष महोदय एवं मुख्य अतिथि ने अपने-अपने संबोधन में राजभाषा के महत्व पर प्रकाश डाला एवं ज्यादा से ज्यादा हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया। उसके बाद इस पखवाड़े के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। साथ ही हिंदी में सालभर अच्छा कार्य करने वाले कर्मचारियों को भी पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर इस केंद्र के प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. अरुण कुमार शुक्ल, वैज्ञानिक, डॉ. मधु पटियाल एवं वैज्ञानिक, श्री संतोष वाटपड़े ने अपने विचार रखे। मुख्य अतिथि ने इस कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए अधिक से अधिक कार्य हिंदी में करने हेतु प्रेरित किया।

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, करनाल

क्षेत्रीय केंद्र, करनाल में दिनांक 01 सितंबर से 15 सितंबर, 2017 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। पखवाड़े के दौरान दिनांक 12 सितंबर, 2017 को हिंदी मुहावरों का प्रयोग व शब्द ज्ञान एवं सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में क्षेत्रीय केंद्र के सभी वर्गों के कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। मुहावरे एवं शब्द ज्ञान प्रतियोगिता वैज्ञानिक वर्ग, तकनीकी वर्ग व प्रशासनिक वर्ग तथा सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता कुशल सहायी एवं सहायी कर्मचारियों के लिए आयोजित की गई। सभी प्रतिभागियों को नकद पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया गया।

प्रतियोगिता में निर्णायक की भूमिका डॉ. अनुज कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान, संस्थीान, करनाल ने निभाई। कार्यक्रम के संयोजक एवं प्रभारी राजभाषा डॉ. रविन्द्र कुमार, ने सभी अतिथिगण का स्वागत किया एवं राजभाषा हिंदी का महत्व, बताते हुए राजभाषा के नियमों व अधिनियमों की जानकारी दी।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. विनोद कुमार पण्डिता, अध्यक्ष, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, करनाल ने की। उन्होंने कहा कि हिंदी के प्रति प्रेम और आदर की भावना और इस भाषा की प्रगति को बनाए रखना हम सभी का धर्म है। उन्होंने बताया कि हमारे कार्यालय में काफी काम हिंदी के माध्यम से हो रहा है और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) के अनुपालन के साथ-साथ हम मूल पत्राचार हिंदी में ही करते हैं और हिंदी में प्राप्त होने वाले सभी पत्रों के उत्तर हिंदी में दिए जाते हैं। कार्यालय में प्रयोग किये जाने वाले सभी प्रकार के प्रपत्र हिंदी या द्विभाषी रूप में उपलब्ध हैं। उन्होंने कहा कि क्षेत्रीय केंद्र के अनुसंधानों का सीधा लाभ किसानों को मिले इसके लिए तकनीकी पुस्तकें हिंदी में ही छपवाई

जाती है और किसान भाइयों के लिए केंद्र में अनेक प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त इस केंद्र के कर्मचारियों ने दूसरे संस्थानों में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में भी भाग लिया। इस सत्र का आयोजन डॉ. रविन्द्र कुमार, डॉ. अनुजा गुप्ता एवं श्रीमती सुषमा, ने केंद्र अध्यक्ष के मार्गदर्शन में किया।

भा.कृ.अ.प- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे

केंद्र में दिनांक 10 अक्टूबर, 2017 को हिंदी दिवस का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. ओमकार शुक्ल थे। इस अवसर पर कार्यालय कर्मचारियों के लिए हिंदी में निम्नलिखित प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया:

हिंदी में कविता पाठ / अन्य रचना

1. पूरे वर्ष हिंदी में किया गया कार्य
2. राजभाषा के आधार पर रंगोली सजाना

डॉ. ओमकार शुक्ल ने हिंदी में लोकप्रिय वैज्ञानिक लेखन में आने वाली समस्याओं का निराकरण नाम विषय पर व्याख्यान दिया। संस्थान के अध्यक्ष डॉ. गगन कुमार महापात्रो ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की।

हिंदी वार्षिकोत्सव एवं पुरस्कार-वितरण समारोह

संस्थान में दिनांक 21 जनवरी, 2017 को हिंदी वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें हिंदी चेतना मास के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं और वर्षभर चलने वाली विभिन्न पुरस्कार योजनाओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए गए। इस पुरस्कार वितरण समारोह के मुख्य अतिथि श्री हरिबाबू श्रीवास्तव, निदेशक, लेसटेक, डी.आर.डी.ओ. नई दिल्ली थे। समारोह की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक (अति. प्रभार) डॉ. ए.के. सिंह, ने की तथा संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) एवं अध्यक्ष राजभाषा, कार्यान्वयन समिति डॉ. के.वि. प्रभु ने सभी का स्वागत अपने भाषण से किया। संस्थाान के उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव

मुख्य अतिथि द्वारा गृह पत्रिका पूसा सुरभि का विमोचन

मुख्य अतिथि को सम्मानित करते हुए संस्थान के निदेशक (अति.प्रभार) डॉ. ए.के. सिंह

मुख्य अतिथि श्री हरिबाबू श्रीवास्तव, निदेशक, लेसटेक, डी.आर.डी.ओ. नई दिल्ली समारोह को संबोधित करते हुए

ने वर्ष 2016-17 की संस्थान की राजभाषा प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की। समारोह के अध्यक्ष डॉ. ए.के. सिंह ने मुख्य अतिथि को स्मृति चिह्न व शॉल से सम्मानित किया। उक्त समारोह में मुख्य अतिथि द्वारा संस्थान की गृह पत्रिका पूसा सुरभि के वर्ष 2016-17 के अंक का भी विमोचन किया गया। साथ ही उन्होंने हिंदी चेतना मास के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के प्रतिभागी विजेताओं को सम्मानपूर्वक पुरस्कृत किया गया। मुख्य अतिथि ने अपने वक्तव्य में संस्थान में राजभाषा हिंदी की प्रगति की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि हिंदी संघ के कामकाज की भाषा घोषित है तथा दिल्ली राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित किये गए 'क' क्षेत्र के अंतर्गत है जिसमें हिंदी भाषी क्षेत्र होने के नाते यहां हमें शत प्रतिशत हिंदी पत्राचार का लक्ष्य दिया गया है। अतः हमें लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए निरंतर इसकी प्रगति के प्रयास जारी रखना है। समारोह के अध्यक्ष डॉ. ए.के. सिंह, निदेशक (अति.प्रभार) ने राजभाषा हिंदी के दैनिक कार्यों में प्रयोग के अनेक उदाहरण देते हुए सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को अपना अधिक से अधिक कामकाज हिंदी करने हेतु आवाहन किया। संस्थान की सहायक निदेशक (राजभाषा) सुश्री सुनीता ने सफलतापूर्वक मंच संचालन किया।

भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिंदी महानदी। हिंदी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिंदी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

- रबिन्द्रनाथ टैगौर

पुरस्कार व सम्मान

संस्थान को राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति के लिए अनेक पुरस्कार व सम्मान प्रदान किए गए।

❖ **भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली** द्वारा परिषद के संस्थानों के निदेशकों की बैठक में बड़े संस्थानों के वर्ग में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की पत्रिका 'पूसा सुरभि' 2016-17 को केंद्रीय कृषि मंत्री माननीय श्री राधामोहन सिंह द्वारा उत्कृष्ट प्रकाशन हेतु **"गणेश शंकर विद्यार्थी"** का प्रथम पुरस्कार तथा संस्थान के उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन के लिए **"राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार योजना"** 2016-17 का द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

❖ **नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) द्वारा** नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में डॉ. ए.के. श्रीवास्तव अध्यक्ष, कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल एवं अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) ने संस्थान को सर्वाधिक कार्य हिंदी में करने हेतु प्रथम पुरस्कार तथा संस्थान की राजभाषा पत्रिका पूसा सुरभि को उत्कृष्ट प्रकाशन के लिए प्रोत्साहन पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

संस्थान द्वारा जारी हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज के लिए नकद पुरस्कार योजना (2016-17)

संस्थान में विगत वर्षो की भांति इस वर्ष भी यह पुरस्कार योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशों के अनुसार चलाई गई जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज करने वाले संस्थान के 04 कर्मचारियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए।

अधिकारियों द्वारा हिंदी में डिक्टेशन देने के लिए पुरस्कार योजना 2016-17

यह पुरस्कार योजना राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार लागू की गई है। जिसमें अधिकारियों द्वारा अधिक से अधिक हिंदी में डिक्टेशन देने हेतु अधिकारी द्वारा दिये गये डिक्टेशन की मात्रा व गुणवता को ध्यान में रखते हुए यह पुरस्कार दिया जाता है। गत वर्ष यह पुरस्कार डॉ. राजकुमार, अध्यक्ष क्षेत्रीय केंद्र, कटराईं को प्रदान किया गया। जिसमें उन्हें 5000/- का नकद पुरस्कार दिया गया।

अन्य पुरस्कार योजनाएं/प्रतियोगिताएं

वर्ष 2016-17 में कर्मचारियों को हिंदी में अपना अधिकाधिक सरकारी कामकाज करने के लिए प्रेरित करने हेतु विभिन्न प्रतियोगिताएं/प्रोत्साहन योजनाएं चलाई गई। रिपोर्टाधीन अवधि में निम्नलिखित प्रतियोगिताओं/ पुरस्कार योजनाओं का आयोजन किया गया।

हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता (2016-17)

यह प्रतियोगिता संभाग, अनुभाग एवं क्षेत्रीय केंद्र स्तर पर आयोजित की गई जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने वाले एक संभाग व क्षेत्रीय केंद्र को तथा एक अनुभाग/इकाई को चल-शील्ड से सम्मानित किया गया। रिपोर्टाधीन वर्ष में संभाग स्तर पर जैव रसायन संभाग व क्षेत्रीय केंद्र स्तर पर क्षेत्रीय केंद्र, इंदौर को तथा अनुभाग/इकाई स्तर पर कैटेट इकाई को चल-शील्ड प्रदान की गई।

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में कृषि विज्ञान लेखन के लिए पुरस्कार

इस पुरस्कार योजना के तहत कैलेन्डर वर्ष 2016 में प्रकाशित विभिन्न वैज्ञानिकों/तकनीकी अधिकारियों के लेखों के लिए प्रतियोगिता आयोजित की गई। जिसमें प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार के रूप में क्रमश: 10,000/- रु., 7,000/- रु. एवं 5,000/- रु. प्रदान किए गए।

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के अंतर्गत पाठ्यक्रम समन्वयक की सिफारिशों और प्रशिक्षणार्थियों की प्रतिपुष्टि (फीडबैक) के आधार पर इसको मूल्यांकित किया जाता है। इसमें पुरस्कार के रूप में 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार और एक प्रमाण-पत्र दिया जाता है।

हिंदी में पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता

संस्थान के वैज्ञानिकों के लिए सेस्करा के सभा भवन में 7 नवंबर, 2017 को "नीतिपरक कृषि अनुसंधान" विषय पर पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रतियोगिता में संस्थान के संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), डॉ. के.वि.प्रभु, ने प्रतियोगिता के निर्णायकों एवं सभी प्रतिभागियों का स्वागत किया। प्रतियोगिता का संचालन करते हुए उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव ने प्रतियोगिता के नियमों की जानकारी दी। प्रतियोगिता के सभी विजेताओं को प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुरस्कारों के रूप में क्रमश: 10,000/- रु., 7,000/- रु. एवं 5,000/- रु. तथा 3,000-3,000/- रु. के दो प्रोत्साहन पुरस्कार एवं प्रशस्ति पत्र प्रदान करने की घोषणा की गई।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

संस्थान में राजभाषा अधिनियम 1963 एवं 1976 के अनुसार राजभाषा नीति व नियमों का अनुपालन एवं कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति गठित की गई है। संस्थान के सभी संयुक्त

निदेशक, संभागाध्यक्ष, लेखा नियंत्रक इसके पदेन सदस्य है जबकि उप निदेशक (राजभाषा) सदस्य सचिव हैं। रिपोर्टाधीन अवधि में इस समिति की बैठक नियमित रुप से प्रत्येक तिमाही में आयोजित की गई और संस्थान में राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक सुझाव व निर्देश दिए गए। प्रशासन में राजभाषा कार्यान्वयन का प्रभावी अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए इसी प्रकार संयुक्त निदेशक (प्रशासन) की अध्यक्षता में तथा सभी संभागों व केंद्रों में उनके अध्यक्ष की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन उप समितियां गठित हैं जिनकी तिमाही बैठकें नियमित रूप से आयोजित की जाती हैं।

राजभाषा नोडल अधिकारी

प्रत्येक संभाग/केंद्र/इकाई एवं हिंदी अनुभाग के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से संपर्क सूत्र के रुप में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं जिससे संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन के कार्य में

अभूतपूर्व प्रगति हुई है। राजभाषा नोडल अधिकारियों की भूमिका को महत्व प्रदान करने एवं उन्हें प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उत्कृष्ट राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना प्रारंभ की गई है। वर्ष 2016-17 का सर्वश्रेष्ठ नोडल अधिकारी का पुरस्कार श्री किशन सिंह, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, कैटेट इकाई तथा डॉ. शशि बाला सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग को संयुक्त रूप से दिया गया।

राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का निरीक्षण

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की सिफारिश एवं राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए डॉ. इंद्रमणि, अध्यक्ष, कृषि अभियांत्रिकी संभाग की अध्यक्षता में गठित संस्थान राजभाषा निरीक्षण समिति द्वारा सभी संभागों, केंद्रों, इकाइयों एवं अनुभागों में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का जायजा लेने हेतु निरंतर निरीक्षण जारी है। इस नियमित निरीक्षण के साथ समिति द्वारा किसी भी संभाग/अनुभाग/इकाई का राजभाषा की प्रगति का जायजा लेने के लिए समय-समय पर औचक निरीक्षण भी किया जाता है। निरीक्षण उपरांत संबंधित संभागों/अनुभागों/इकाइयों, केंद्रों को राजभाषा कार्यान्वयन में वांछित प्रगति के लिए आवश्यक सुझाव देते हुए निरीक्षण रिपोर्ट प्रेषित की जा रही है। इसके साथ ही उक्त सभी संभागों/अनुभागों/इकाइयों का औचक निरीक्षण भी किया जा रहा है।

संगोष्ठी एवं हिंदी कार्यशालाएं (मुख्यालय)

संस्थान के विभिन्न वर्गो के अधिकारियों व कर्मचारियों को अपने कार्यो से राजभाषा हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करने के प्रति प्रेरित करने के उद्देश्य से कार्यशालाओं का आयोजन किया गया। वर्ष 2017-18 के दौरान संस्थान मुख्यालय में कार्यशालाएं आयोजित की गई।

- संस्थान में दिनांक 31 जुलाई, 2017 से 04 अगस्त 2017 (05 पूर्ण कार्य दिवसीय) टंकण प्रशिक्षण सह कार्यशाला का आयोजन संस्थान के पुस्तकालय में किया गया। इस प्रशिक्षण कार्यशाला में मंगल फोंट में यूनिकोड में टंकण का प्रशिक्षण दिया गया।
- संस्थान के सहायक प्रशासनिक अधिकारियों को अपने कार्यो में राजभाषा हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करने के प्रति प्रेरित करने के लिए दिनांक 28 दिसंबर, 2017 को संस्थान के सेस्करा सभाभवन में कार्यशाला आयोजित की गई जिसमें "राजभाषा हिंदी के नीति नियमों का व्यावहारिक प्रयोग" के बारे में जानकारी दी गई। इस कार्यशाला में संस्थान में नवनियुक्त सहायकों को व्याख्यान देने के लिए एग्रीकल्चर इंश्योरेंस इंडिया लिमिटेड से राजभाषा अधिकारी सुश्री प्रियंका सिन्हा ने अपनी पावर प्वांइट प्रस्तुतीकरण के माध्यम से राजभाषा संबंधी नीति नियमों की जानकारी दी। इस कार्यशाला में कुल 23 नवनियुक्त सहायकों ने भाग लिया।
- संस्थान के वैज्ञानिकों/तकनीकीअधिकारियों/कर्मचारियों के लिए दिनांक 24 मार्च, 2018 को संस्थान में "यूनिकोड की जानकारी" विषय पर आधे दिन की अंशकालीन हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। राजभाषा विभाग के वरिष्ठ तकनीकी निदेशक श्री केवल कृष्ण ने सभी प्रतिभागियों को अभ्यास आधारित कार्यशाला के माध्यम से हिंदी में टंकण की जानकारी प्रदान की।

वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक काम करने के लिए नकद पुरस्कार पाने वाले प्रतिभागी/चल-शील्ड प्राप्त करने वाले संभाग/अनुभाग/इकाई/क्षेत्रीय केंद्र

नकद पुरस्कार 2017-18 — **राशि**

प्रथम पुरस्कार

1. सुश्री मधुबाला, वरिष्ठ लिपिक, स्नातकोत्तर विद्यालय- 2 — रु. 5000/-

द्वितीय पुरस्कार

1. सुश्री लक्ष्मी, वरिष्ठ लिपिक, संपदा एवं नयाचार अनुभाग — रु. 3000/-

तृतीय पुरस्कार

1. सुश्री शाहनी मनोचा, सहायक, पेंशन अनुभाग — रु. 2000/-
2. सुश्री फूलवती, सहायक, आवास अनुभाग — रु. 2000/-

अधिकारियों द्वारा हिंदी में डिक्टेशन देने के लिए पुरस्कार प्रोत्साहन योजना

1. डॉ. जे.पी.एस. डबास, प्रभारी, कैटेट इकाई — रु. 5000/-

हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता (2017-18)

1. संभाग स्तर पर :	प्रथम	:	खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
	द्वितीय	:	कृषि रसायन संभाग
2. अनुभाग/इकाई स्तर पर :	प्रथम	:	कैटेट इकाई
	द्वितीय	:	फोसू इकाई
3. क्षेत्रीय केंद्र स्तर पर :	प्रथम	:	क्षेत्रीय केंद्र इंदौर
	द्वितीय	:	क्षेत्रीय केंद्र शिमला

सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार (2017-18)

संयुक्त रुप से

1. डॉ. राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग — रु. 2500/-
2. डॉ. एम.एस. राठी, मु.त.अ., सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग — रु. 2500/-

हिंदी चेतना मास, 01 सितंबर - 30 सितंबर, 2017 के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत प्रतियोगी

क्र.स.	पुरस्कृत प्रतियोगी का नाम व स्थापना	पुरस्कार	राशि (रु.)
(1)	**निबंध प्रतियोगिता**		
1	श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ. कैटेट	प्रथम	2500/-
2	डॉ.वीरेंद्र कुमार, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	द्वितीय	2000/-
3	डॉ. प्रतिभा जोशी, वैज्ञानिक कैटेट	तृतीय	1500/-
4	डॉ. अनुपमा, संभागाध्यक्ष कृषि रसायन संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(2)	**हिंदी प्रारुप एवं टिप्पण लेखन**		
1	श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ. कैटेट	प्रथम	2500/-
2	श्रीमती कृष्णा बिष्ट, सहायक भंडार अनुभाग	द्वितीय	2000/-
3	श्री नरेश चन्द्र बौडाई, सहायक पी.जी.1	तृतीय	1500/-
4	डॉ. वीरेंद्र कुमार, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
(3)	**अनुवाद प्रतियोगिता**		
1	श्री किश्वर अली, मु.त.अ. जैव रसायन विज्ञान	प्रथम	2500/-
2	सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक कार्मिक v	द्वितीय	2000/-
3	डॉ. राम चरण मथुरिया, मु.त.अ. पादप रोग विज्ञान संभाग	तृतीय	1500/-
4	श्री सुरेश चन्द्र, व.त.अ. मृदा विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(4)	**श्रुत लेख प्रतियोगिता**		
1	श्री नरेश चन्द्र बौडाई, सहायक पी.जी.1	प्रथम	2500/-
2	डॉ. करुणा दीक्षित, मु.त.अ., एटिक	द्वितीय	2000/-
3	श्री विजय भान सिंह, व.त.अ., कैटेट संभाग	तृतीय	1500/-
4	डॉ. अल्का जोशी, वैज्ञानिक खा.वि.व.फ.प्रौ. संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(5)	**वाद विवाद प्रतियोगिता**		
1	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्र. वैज्ञानिक, सेस्करा	प्रथम	2500/-

2	डॉ. अर्चना सिंह, प्र. वैज्ञानिक, जैव रसायन विज्ञान संभाग	द्वितीय	2000/-
3	श्रीमती संतोष गौतम, सहायक, पेंशन ऑडिट निदेशालय	तृतीय	1500/-
4	डॉ. जय प्रकाश, वरिष्ठ वैज्ञानिक, फल एवं औद्यानिकी संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(6)	**प्रश्न मंच प्रतियोगिता**		
1	श्री सुरेश चन्द्र, व.त.अ. मृदा विज्ञान संभाग डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्र.वैज्ञानिक, सेस्करा डॉ. कमलेश कुमार सिंह, मु.त.अ. कृषि अर्थशास्त्र संभाग श्रीमती नीलम, सहा.प्रशा.अधिकारी, खा.वि.व.फ.त. संभाग	प्रथम (2500/-)	625/- 625/- 625/- 625/-
2	श्री रणबीर सिंह, व.त.अ. जल प्रौद्योगिकी केंद्र श्री एम.के.जैन, मु.प्र.अ. निदेशालय श्री सुबोध नीरज, प्र.अ. निदेशालय श्री एम.एस.राठी, मु.त.अ. सूक्ष्मजीव विज्ञान	द्वितीय (2000/)	500/- 500/- 500/- 500/-
3	सुश्री रेनू भट्ट, सहायक बजट ऑडिट सुश्री तृप्ति, सहायक निदेशालय (सतर्कता) श्री रोहित यादव, सहायक, निदेशालय सुश्री शिवानी चौधरी,सहायक,निदेशालय (कार्मिक v)	तृतीय (1500/-)	375/- 375/- 375/- 375/-
4	श्री सुमित कुमार, सहायक सूत्रकृमि संभाग श्री राजकमल मीना, तक. सहायक कृषि भौतिकी संभाग श्री विरम सिंह, सहायक, सी.पी.सी.टी. श्री राम भरोस मीना, तक., सहायक, कृषि अर्थशास्त्र	प्रोत्साहन (600/-)	150/- 150/- 150/- 150/-
	दर्शक पुरस्कार		
1	डॉ. राजेश कुमार, मुख्य त. अधिकारी	--	300/-
2	डॉ. गीता सिंह, प्रधान वैज्ञानिक	--	300/-
3	डॉ. अतुल कुमार, प्रधान वैज्ञानिक	--	300/-
4	डॉ. राम चरण मथुरिया, मुख्य त. अधिकारी	--	300/-
5	श्री दिनेश कुमार गुप्ता, सहायक वर्ग कर्मचारी	--	300/-
(7)	**हिंदी आशु भाषण प्रतियोगिता**		
1	सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक, कार्मिक-v	प्रथम	2500/-
2	डॉ. रेनू सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक, सेस्करा	द्वितीय	2000/-

3	डॉ.राजेश कुमार, मु.त.अधिकारी, सूक्ष्मजीव वि. संभाग	तृतीय	1500/-
4	श्रीमती संतोष गौतम,सहायक, पेंशन ऑडिट निदेशा.	प्रोत्साहन	600/-
(8)	**हिंदी काव्य पाठ प्रतियोगिता**		
1	सुश्री नीलम, सहा.प्रशा.अधिकारी, खा.वि.व.फ.प्रौ. संभाग	प्रथम	2500/-
2	श्री विजय भान सिंह, व.त.अ. कैटेट संभाग	द्वितीय	2000/-
3	डॉ. रविश चौधरी, तकनीकी सहायक बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग	तृतीय	1500/-
4	डॉ. गीता सिंह, प्र.वैज्ञानिक,सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(9)	**सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता**		
1	श्री विनोद कुमार, परिवहन, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2	श्री सुभाष चंद, लेखा संकलन	द्वितीय	2000/-
3	श्री नवीन कुमार, बायोमास, इकाई सस्य विज्ञान	तृतीय	1500/-
4	श्री शत्रुघन सिंह, फार्म संचालन एवं सेवा इकाई	प्रोत्साहन	600/-
(10)	**हिंदी टंकण प्रतियोगिता**		
1	श्री चंदेश्वर कापर, सहायक, सूत्रकृमिविज्ञान	प्रथम	2500/-
2	सुश्री मधुबाला, वरिष्ठ लिपिक, पी.जी.1	द्वितीय	2000/-
3	सुश्री विनीता, सहायक, पुस्तकालय	तृतीय	1500/-
4	श्री रणबीर सिंह, व.त.अ., जल प्रौद्योगिकी केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
(11)	**हिंदी में पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता**		
1	डॉ.अतुल कुमार, प्र.वैज्ञानिक, बीजविज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग	प्रथम	10,000/-
2	डॉ. श्रुतिमित्र त्रिवेदी, मुख्य तकनीकी अधिकारी पादप कार्यिकी विज्ञान संभाग	द्वितीय	7000/
3	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्र. वैज्ञानिक, सेस्करा	तृतीय	5000/
4	डॉ.गीता सिंह, प्र. वैज्ञानिक, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	चतुर्थ	3000/
5	डॉ. शिव प्रसाद, प्र.वैज्ञानिक, सेस्करा	पंचम	3000/

कृषि विज्ञान लेख प्रतियोगिता (2017) - पुरस्कृत प्रतिभागी

कृषि विज्ञान संबंधी लेख प्रतियोगिता (2017)

पुरस्कार	लेख का शीर्षक	लेखक(कों) का नाम	पुरस्कार राशि
प्रथम (रु. 7000/-)	बदलते परिवेश का फलोत्पादन पर प्रभाव	डॉ. राम रोशन शर्मा, प्र.वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग	रु. 7000/-
द्वितीय (रु. 5000/-)	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की गौरवशाली यात्रा	डॉ. जे.पी.शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार), डॉ. रेशमा गिल्स, वैज्ञानिक डॉ. आर.एन. पडारिया, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ. आर.आर. बर्मन, प्र.वैज्ञानिक, कृषि प्रसार संभाग	रु. 1250/- रु. 1250/- रु. 1250/- रु. 1250/-
तृतीय (रु. 3000)	जल उपयोग दक्षता बढ़ाने हेतु सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली	डॉ. वीरेन्द्र कुमार, व.त.अधिकारी, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	रु. 3000/-
प्रोत्साहन (रु. 2000)	बदलते मौसम में कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए वेब पेज.....कृषि सलाह का महत्व	डॉ. अनंता वशिष्ठ, प्र.वैज्ञानिक व डॉ. पी. कृष्णन, अध्यक्ष, कृषि भौतिकी संभाग	रु. 1000/- रु. 1000/-
प्रोत्साहन (रु. 2000)	अधिक लाभ हेतु फसल प्रणाली प्रबंधन	डॉ. विनोद कुमार सिंह, अध्यक्ष, डॉ. राजीव कुमार सिंह, प्र.वैज्ञानिक, श्री प्रवीण कुमार उपाध्याय, वैज्ञानिक, डॉ. एम.एस.राठौर, प्र.वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग	रु. 500/- रु. 500/- रु. 500/- रु. 500/-
प्रोत्साहन (रु. 2000)	पादप खनिज पोषण विज्ञान: भारत में वर्तमान स्थिति व भविष्य	डॉ. रेणु पाण्डें, प्रधान वैज्ञानिक एवं श्री संदीप शर्मा, आर.ए. पादप कार्यिकी संभाग	रु. 1000/- रु. 1000/-

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार (वित्तीय वर्ष 2017-18) (रु. 10,000/-)

क्र. सं.	प्रतिभागी का नाम	पुरस्कार राशि
1.	डॉ. जे.पी. शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार)	रु. 5,000/-
2.	डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग	रु. 5,000/-

आपके उद्‌गार

आपके कार्यालय की पत्रिका 'सुरभि' का 2016-17 अंक हमें प्राप्त हुआ है। पत्रिका का आवरण अति सुंदर एवं मनमोहक है। पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनायें सुन्दर, ज्ञानवर्धक एवं पठनीय है। पत्रिका की साज सज्जा भी बहुत सुन्दर है। श्री कुमार दुर्गेश, शैलेन्द्र कु. झा, रेखा जोशी एवं अशोक कुमार सिंह (डॉ. बी.पी. पाल, भारतीय कृषि के भीष्म पितामाह), श्री अजय कुमार, श्री रणबीर सिंह एवं अनिल कुमार मिश्र (आमदनी बढ़ोतरी हेतु नई कृषि तकनीकियां एवं अवसर), बलजीत कौर, तेजपाल सिंह यादव एवं ओम प्रकाश जोशी, केंचुआ खाद (वर्मी कंपोस्ट), श्री मुरलीधर मीणा, हरनारायण मीणा, सुरेन्द्र सिंह (प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना-किसानों का रक्षा कवच), की रचनायें उल्लेखनीय एवं उत्कृष्ट हैं।

पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य तथा आगामी अंकों के लिये बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

(गीता मेहता)
हिंदी अधिकारी (रा.भा.अ.)
कार्यालय-महानिदेशक लेखा परीक्षा,
डाक व दूरसंचार, दिल्ली 110054

पूसा सुरभि का दसवां अंक जिस आकर्षक रुप-रंग के साथ प्रकाशित हुआ यह उल्लेखनीय है। विभिन्न नवीन वैज्ञानिक जानकारी के साथ-साथ राजभाषा खंड के अंतर्गत लेख 'हिंदी भाषा से राजभाषा तक का सफर' बहुत ही ज्ञान उपयोगी है राजभाषा को बढ़ावा देने के लिये जिस तरह के कार्यक्रम एवं कई तरह की योजनाओं को चलाया जा रहा है यह कार्य वास्तव में अपनी राजभाषा हिंदी के प्रति रुचि रखने वालों के लिए एक प्रशंसनीय कदम है।

(डॉ. हरिऔध तिवारी)
राजभाषा अधिकारी
के.ब.अ.सं., मखदूम

पूसा सुरभि पत्रिका किसान भाइयों के लिए ज्ञानवर्धक प्रकाशन है एवं हिंदी प्रेमियों के लिए एक प्रशंसनीय एवं महत्वपूर्ण पत्रिका है। पत्रिका में प्रकाशित सचित्र विवरण और अनेक तकनीकी लेखों से यह दसवां अंक बहुत ही आकर्षक है। इसके लिए संपादक मंडल एवं सहयोगियों से अनुरोध है इस तरह का सराहनीय प्रयास निरंतर बनाये रखें।

(डॉ. विजय कुमार)
वैज्ञानिक
के.ब.अ.सं., मखदूम

पूसा सुरभि 2016-17 के सफल प्रकाशन हेतु समस्त संपादक मंडल को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं। यह हर्ष का विषय है कि पत्रिका विज्ञान और प्रौद्योगिकियों से संबंधित विभिन्न उपलब्धियां व जानकारी को सरल एवं सहज भाषा हिंदी के माध्यम से जन-जन तक पहुंचाने के लिए अग्रसर है। आशा ही नहीं वरन पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में यह पत्रिका पाठकों के ज्ञानवर्धन में 'मील का पत्थर' साबित होगी।

(भीम सिंह)
कृषक, भरतपुर, राजस्थान

सर्वप्रथम पूसा सुरभि 2016-17 के दसवें अंक के सफल प्रकाशन हेतु समस्त संपादक मंडल को शुभकामनाएं। इस पत्रिका के अधिकतर अंक मैंने पढ़े हैं तथा मैंने यह पाया कि इस पत्रिका के प्रत्येक अंक में काफी अच्छी जानकारी दी जाती है जिससे हमारे परिवार में प्रत्येक सदस्य को काफी ज्ञान प्राप्त होता है। मेरा आपसे आग्रह है कि इस पत्रिका को अधिक से अधिक किसानों तक भेजने का कष्ट करें और इसमें और अधिक तकनीकी लेख भी सम्मिलित किए जाएं।

(सत्यवान)
कृषक, दरियापुर कलां, दिल्ली

पूसा सुरभि का दसवां अंक प्राप्ता हुआ, धन्यवाद। पत्रिका में तकनीकी खंड के अंतर्गत आमदनी बढोतरी हेतु नई कृषि तकनीकियों एवं अवसर, वर्षा जल संग्रहण की सस्ती, एवं टिकाऊ विधि इत्यादि ऐसे तकनीकी लेखों में ऐसी जानकारी दी गई है जिससे किसान भाई जल बचत के साथ कृषि क्रियाएं करके अपना उत्पादन बढ़ा सकते हैं। इस पत्रिका में जो राजभाषा खंड है वह अपने में अद्भुत है जोकि वर्तमान में चल रही राजभाषा से संबंधित गतिविधियों के बारे मे पूर्ण जानकारी प्रदान करता है।

(संतोष)
कृषक, दुबलघन, झज्जर, हरियाणा

नगर राजभाष कार्यान्वयन (उ.दि.) से उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन का पुरस्कार प्राप्त करते हुए।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
(उत्तरी दिल्ली)

प्रमाण पत्र

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान को वर्ष 2017-18 के दौरान उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन के लिए बड़े वर्ग के कार्यालयों में प्रथम पुरस्कार प्रदान किया जाता है।

दिनांक: 22 जून, 2018
स्थान: नई दिल्ली

अध्यक्ष, नराकास (उत्तरी दिल्ली)
एवं कृषि वैज्ञानिक चयन मंडल

सदस्य-सचिव
नराकास (उत्तरी दिल्ली)

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof, M S SWAMINATHAN LIBRARY